बन्नो

[समस्यात्मक सामाजिक कथा]

★

रघुवरदयाल सिंह

एम. ए. एल. एल. बी.

प्रकाशक :

शैल प्रकाशन

छोटी सेरिया,

बलिया ।

मूल्य—तीन रुपया पचास पैसा

कार्तिक पूर्णिमा सं० २०२३

मुद्रक :

अरुण प्रेस

१७/२ तिलभाण्डेश्वर,

वाराणसी—१

अपनी-बात

डाकू कोई सम्प्रदाय अथवा जाति नहीं बल्कि हमारे समाज के ही एक अंग हैं जो सरकारी नियम-कानून की अवहेलना कर एक अलग संगठन बना चोरी-डकैती जैसा अपराध करते रहते हैं। डाकुओं का कुछ गिरोह तो ऐसे लोगों का है जिनका जन्मजात व्यवसाय डकैती जैसा अपराध करते रहना है। ऐसे लोग अधिकांशत: उन जातियों के होते हैं जिन्हें जरायन पेशा की संज्ञा दी गयी है। इन जातियों के सदस्यों के पास कोई स्थायी सम्पत्ति नहीं अत: अपना जीवन-यापन करने के लिये ये विभिन्न प्रकार के अपराध करते हैं। हमारे देश का कानून इनका अवतक सुधार नहीं कर सका है। अत: ऐसी अपराध-शील जातियाँ अब भी है और रहेंगी।

दूसरे प्रकार के डकैती-जैसा अपराध करनेवाले वे लोग हैं जो किसी विशेष परिस्थिति से वाध्य होकर डाकुओं का जीवन व्यतीत करते हैं। परन्तु उनके तह में जाकर यदि पता लगाया जाय तो पता चलेगा कि वे अपने जीवन से सन्तुष्ट और सुखी नहीं है। हमारे समाज के अगुआ और सुधारक इस बात का अनुभव करते हैं और चाहते भी हैं कि ऐसे तत्वों को सुधार कर रास्ते पर लाया जाय। परन्तु अँगरेजों के समय से

जाता हमारे देश का कानून इसमें बाधक है। जब तक हमारे कानून में सुधार नहीं होगा समाज के ऐसे तत्व आगे भी बने रहेंगे और उनकी संख्या बढ़ती रहेगी।

डाकू चाहे वह किसी भी श्रेणी का हो वह डाकू है और समाज का एक ऐसा शत्रु है जिसके कारण जन-जीवन सदा त्रस्त एवं क्षुब्ध रहता है। अतएव समाज का प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि डाकू पकड़े जायें अथवा मार दिये जायें। इसी-लिए जब किसी क्षेत्र का डाकू मारा जाता है तो वहाँ के लोग उसकी मृत्यु पर प्रसन्नता प्रगट करते हैं। परन्तु यह बात भी सच है कि जितनी खुशी, जन-साधारण को उस डाकू के मारे जाने से होती है उससे कहीं अधिक खुशी उस क्षेत्र से तैनात पुलिस के हटाये जाने से। इसीलिए जन-साधारण में यह एक धारणा बन गई है कि डाकू जब एक घर को लूटता है तो उसकी रक्षा का बहाना बना अथवा अपराध का पता लगाने के बहाने पुलिस कई घरों को लूटती है। जन-साधारण की यह धारणा भारतीय जनतन्त्र के लिये कलंक है। सितम्बर १९५५ ई० मे जब चम्बल का कुख्यात डाकू कहा जानेवाला मानसिंह मारा गया तो उसकी मृत्यु पर सरकार की ओर से एक बहुत बड़ा समारोह, खुशी मनाने के लिये किया गया था। प्रसिद्ध दार्शनिक, विद्वान एव विचारक माननीय श्री सम्पूर्णानन्द जी उस समय उत्तरप्रदेश के मुख्य-मन्त्री थे। उन्होंने इस अवसर पर स्पष्ट शब्दों में कहा था—'हमें किसी के मरने पर खुश नहीं होना चाहिए।' और इसी एक वाक्य में उन्होंने सब कुछ कह दिया था। बाबू सम्पूर्णानन्द जी की बातों को शिष्टाचार के अर्थ में टालकर भले ही उसपर परदा डाल दिया गया हो। परन्तु उनकी वह उक्ति शिष्टाचार नहीं बल्कि बड़ी गहराई तक हृदय को छूनेवाली थी। और हमारे सामाजिक जीवन

को एक चुनौती थी। डाकुओं के आतंक से जन-जीवन की रक्षा हेतु पुलिस की व्यवस्था की जाती है परन्तु कभी-कभी ऐसा भी होता है कि पुलिस के आतंक से कुछ लोग डाकुओं की शरण में चले जाते हैं। इस उपन्यास के सभी पात्र एवं इसका कथानक कल्पित है जिनका किसी व्यक्ति विशेष अथवा किसी घटने से कोई सम्बन्ध नहीं। उपन्यास में कोई ऐसी नवीनता नहीं जिससे इसकी स्तुति की जाय। बल्कि जिस भावना से प्रेरित होकर इसके कथानक का सृजन हुआ है वह हमारे आपके दैनिक जीवन की एक समस्या है। यदि इसके द्वारा मैंने अपने समाज के अगुओं, विचारकों एवं विद्वानों का हृदय तनिक भी स्पर्श किया हो तो अपने परिश्रम को सफल समझूँगा।

लेखक—

बन्नो

॥ १ ॥

मृत्यु के मुँह में जाने के पूर्व मैं अपने सभी संगी-साथियों, नगर के परिचित लोगों और विशेषकर अपनी मां से मिल लेना चाहता था। अत: पुलिस अधीक्षक से एक सप्ताह की छुट्टी लेकर मैं अपने नगर आया जहाँ हमारा बपौती घर था। अपने परिचित किसी आदमी से मैंने यह बात नहीं बतलायी कि अपने विभाग द्वारा मुझे जम्पा को पकड़ने का काम सौंपा गया है। उस समय जम्पा हिमालय के तराई क्षेत्र का कुख्यात डाकू था, जिसके भय से जनता ही नही सरकारी कर्मचारी भी कांपते थे। उसको पकड़ने को कौन कहे, इस बात की कल्पना भी करने वाले का सिर धड़ से अलग होने में विलम्ब नहीं लगता था। पुलिस के कार्य में दक्ष बड़े-बड़े कर्मचारी जिन्हें सरकार द्वारा उसे पकड़ने को नियुक्त किया जाता वे भय से अपने घर अथवा थाने से बाहर भी नहीं निकलते और किसी तरह कागज का पेट भर कर अपनी जान की खैर मनाते हुए नौकरी बचाते थे।

मै उस समय बिलकुल नौजवान और कुछ ही समय से पुलिस की नौकरी कर रहा था। परन्तु मेरे कुछ साहसिक

कार्यों ने अपने विभाग में प्रतिष्ठा प्राप्त करने में मेरी बहुत सहायता किया था। न जाने क्यो ? समाज के शत्रु—चोर-डाकुओं के पकड़ने में मैं अपने जीवन की भी बाजी लगा देता था। और मुझे अपने जीवन की बाजी लगाने में आनन्द, सुख, तथा संतोष मिलता था। शायद इसकी प्रेरणा मुझे अपनी जाति और कुल के संस्कारों के कारण ही अपनी आत्मा से प्राप्त होती थी।

जवानी अंधी होती है और एक बार जिधर झुक गयी चाहे वह अच्छा मार्ग हो अथवा बुरा, मुँहजोर घोड़े की तरह रोकने से भी नही रुकती। मैं अभी तक अविवाहित था अत: किसी के प्रेम के प्रति मेरा कोई लगाव या झुकाव नहीं था और मैं इस प्रकार के सभी उत्तरदायित्व से मुक्त था। शायद प्रेम के वशीभूत भी कितने लोगों का हृदय दुर्बल हो जाया करता है और उन्हें अपने कर्तव्य से विमुख होते देर नहीं लगती।

घर में अकेली मां थी जो अपने तरह की एक निराली मां थी और बचपन में भी जब कभी मुझे गलत राह की ओर जाते देखती अथवा उसे मेरी कायरता का किंचित मात्र भी आभास मिल जाता तो मुझसे महीनो तक बोलना भी छोड़ देती। उसके हृदय में बस एक-ही इच्छा थी कि उसे किसी तरह भी एक कायर पुत्र की जननी कहलाने का अवसर न मिले।

जिस दिन मैं छुट्टी लेकर अपने नगर आया, ठीक उसके तीसरे दिन जब मैं अपने बचपन के कुछ साथियों से मिलने के लिये संध्या को निकला तो चौक में एक कपड़े की दुकान के निकट अचानक किसी आदमी ने पीछे से मेरे कंधे पर हाथ रख

दिया और थोड़ी दूर पर आगे की ओर एक पान की दुकान पर चलने का संकेत किया।

इस व्यक्ति की मुखमुद्रा देख कर मुझे ऐसा ज्ञात हुआ मानो मैंने उसे कहीं देखा है और कई बार देखा है। अपनी स्मरण शक्ति पर मुझे कुछ खीझ-सी हुयी और मस्तिष्क पर जोर देते हुए मैं उसके साथ हो लिया। पान की दुकान पर पहुँचते ही उसने पान वाले को कुछ संकेत दिया जिससे वह किसी सामान के लाने का बहाना करते हुए वहाँ से खिसक गया। उस व्यक्ति ने पुनः एक बार आने-जाने वालों की भीड की ओर देखा और जब उसे यह निश्चित हो गया कि अब कोई भय नहीं तो धीरे से बड़ी नरमी दर्शाते मुझसे पूछा—"क्या आपही का नाम उदयपाल है ?"

मैंने जब अपना सिर हिला कर 'हाँ' कर दिया तो उस व्यक्ति ने संतोष की स्वाँस ली और उसने मेरे मुख-मंडल पर अपनी पैनी दृष्टि गड़ाते हुए पूछा—"आपही को इस बार पुलिस विभाग द्वारा जम्पा को पकड़ने के लिए भेजा जा रहा है ?"

और मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही वह कहते गया—"यदि आपका उत्तर 'हाँ' है तो आप कदापि ऐसा हठ न करे और इस कार्य से 'ना' कर दें।"

उसने आगे कहा—"जम्पा को पकड़ना किसी के लिए भी सरल नहीं। आप इतनी छोटी आयु में ही जीवन से निराश क्यों है और अपना प्राण क्यों खो देना चाहते हैं।"

पुनः उसने बड़ी गंभीरता पूर्वक दृढ़ शब्दों में आगे कहा—"यदि आप चाहें तो आज-ही आपके जीवन भर का वेतन

चुकाया जा सकता है।" उसकी अंतिम बात सुन कर मेरे शरीर में आग-जैसी लग गयी। मुझे अब क्रोध के साथ-साथ उस व्यक्ति पर कुछ संदेह भी होने लगा। और मैं जोश में आकर कुछ ऐसा करने जा रहा था जिसके लिए शायद मुझे जीवन भर पश्चाताप करना पड़ता। परन्तु मैं सभल गया और यह सोच कर कि शायद हमारा विभाग अपने विशेष गुप्तचरों द्वारा कहीं मेरी परीक्षा न ले रहा हो, उसे फटकारते हुए परन्तु नरमी से कहा—"तुमसे और जप्पा से क्या संबंध ? जप्पा डाकू है और मैं पुलिस विभाग का एक कर्मचारी। यदि मैं असामाजिक तत्वों को पकड़ने से ही विमुख हो गया, तो आखिर मेरे लिए दूसरा कौन-सा कार्य शेष रह जाएगा।"

वह अजनबी व्यक्ति मेरे उत्तर का कुछ भी खयाल नही करते एक बार धीरे से मुस्करा उठा और अपनी मूँछों पर ताव देते हुए मेरी आँखों से आँख मिला कर कहा—"श्रीमान् क्रुद्ध न हो ! अभी आप बच्चे हैं और दुनियाँ को बहुत कम देखा है। मेरी आयु इस समय पैंसठ वर्षों की है और आज तक मैंने आपके विभाग के अनेक बड़े-बड़े अफसरों को देखा है, जो कुछ-ही रुपयों पर किसी समय भी खरीद लिए गए हैं। नौकरी के लिए इस युग में प्राण देना बुद्धिमानी नहीं है। आपको ज्ञात होना चाहिए कि जप्पा अकेले नही है। साथ-ही-साथ उसकी सहायता देने वाले अधिकांश पुलिस वाले ही है। अन्यथा आज तक वह फाँसी पर लटका दिया गया होता अथवा जेल के सींकचों में बंद रहता। यह तो एक साधारण बुद्धि का मनुष्य भी जान सकता है कि यदि वह अकेला होता तो उसे पुलिस विभाग के भीतरी संगठन का भी हाल कैसे

मालूम हो जाता। आप-ही बतावे कि जम्पा को आपके स्थान तथा छुट्टी के विषय में सब कुछ कैसे पता चल गया है।" उस व्यक्ति की बातें अक्षरशः सत्य थी। साथ-ही-साथ अब मुझे ऐसा संदेह होने लगा था कि शायद वही जम्पा न हो! चोरी, डकैती करने वालों में निर्भीकता की कमी नही होती। साथ-ही-साथ उनमें चरित्र बल भी होता है।

एक बार अनायास मेरे मन में आया कि उसे अपने तमंचे से वहीं ढेर कर दूँ। परन्तु मुझे जम्पा के साथ-साथ उसके पूरे दल का भी पता लगाना था। उसके मारे जाने पर भी यदि उसके साथी और सहायक बचे रह जाते तो हो सकता था कि वे उससे भी अधिक जनता को लूटते। एक साँप के मार देने से साँप का भय दूर नहीं होता जब तक उनके अंडों और बच्चों तक का सफाया नहीं कर दिया जाय। अतः उस व्यक्ति से अपना पिंड छुड़ा कर जब मैं घर जाने को उद्यत हुआ और उसको यह निश्चित हो गया कि सारे प्रयत्नों के पश्चात् भी उसे निष्फलता ही हाथ लगी, यहाँ तक की पचास हजार की थैली पर भी मेरा मन नहीं डोला तो वह क्रुद्ध सर्प की तरह फुँफकार उठा और एक बार पुनः अपनी मूँछों पर हाथ फेरते हुए बोला—"ठीक है मूर्ख छोकरे, अब मैं तुमसे तराई मे ही मिलूँगा। कम से कम तुमको पहिचान लेने में तो मैं सफल हो ही गया।

उसकी बातें अब मेरे सहन शक्ति के बाहर होते जा रही थी। मैंने झट अपना तमंचा निकाल लिया और ज्यों ही उसकी नाल उस व्यक्ति की ओर घुमायी जहाँ वह खड़ा-खड़ा अपने कटु शब्दों का बौछार छोड़ रहा था तो मैंने देखा

कि वह बिजली की तरह एक अंधेरी गली में गायब हो चुका है।

जम्पा या जम्पा के उस प्रतिनिधि की बातों से मुझे इतना तो स्पष्ट हो गया कि पुलिस दल में भी उसके दल के वहुत से आदमी भरे पड़े है और पुलिस की गतिविधि की सूचना उसे दिया करते हैं। अत: अपने विभाग के लोगों पर पूर्ण विश्वास और भरोसा रखना मृत्यु को न्योता देना था। फिर भी जम्पा जैसे डाकू को बिना बिभाग की सहायता के अकेले पकड़ना भी मेरे लिए संभव बात नहीं थी। अत: अपने गंतव्य स्थान पर पहुँचने के पूर्व बड़ी सावधानी से उनकी छँटनी किया जो मेरी सहायता के लिए मेरे साथ भेजे जा रहे थे।

तीसरे दिन पुलिस की ट्रक ने नदी, नाले, पर्वत और घने जंगलों में बने राजमार्गों द्वारा हम लोगों को जंगल के उस भाग में पहुँचा दिया जहाँ जम्पा अपने दल के साथ रहा करता था और उस समय भी उसके वहाँ रहने की सूचना मेरे गुप्तचर विभाग ने मुझे दी थी।

एक ऊँचे सुरक्षित टीलेपर हमलोगों ने शिविर थाना स्थापित किया जहाँ से पाँच सौ गज चारों ओर नीची धरती और जंगली रास्ते स्पष्ट दिखलायी देते थे। शिविर थाना को सभी प्रकार से सुरक्षित कर लिया गया। पानी पीने की व्यवस्था हाथकल द्वारा की गयी। कारण यह कि अकसर पुलिस शिविर के निकटवर्ती कुंओं के जल में डाकू विष मिला दिया करते थे।

लगभग एक सप्ताह तक मैं अपने शिविर से बाहर नहीं निकला और अपने विश्वसनीय आदमियों को वेश बदल कर जम्पा का पता लगाने के लिए भेजा और सारा दिन अपने शिविर में बैठा मैं उधर से आने-जाने वाले राहगीरों को देखा करता था जिनमें अधिकांश वन में काम करने वाले मजदूर तथा भेड़ों और गाय भैंस के चरवाहे रहते थे।

हमारे सहायकों में उस समय पुलिस शिविर में रहने वाले ऐसे कुछ-ही व्यक्ति थे जो उस क्षेत्र से पूर्ण परिचित होने के कारण हमारे साथ भेजे गए थे। उन्ही के द्वारा मैंने शिविर के लिए एक धोबी, दूध देनेवाला एक ग्वाला तथा बकरे का मांस देने वाले कसाई की व्यवस्था कराई। धोबी शिविर मे यदा-कदा आता और कपड़ा ले-देकर चला जाता। ग्वाला वहाँ नित्य दूध देने के लिए सवेरे आया करता था और कभी-कभी उसकी पत्नी भी। वह जिस दिन स्वयं आता उस दिन अवश्य ही घंटों हमारे मुन्शी सुजान सिंह से बातें करता और अंत में काफी दिन चढ़ जाने पर अपना डंडा फट-कारते जंगल की ओर चल देता था। उसका गांव हमारे कैम्प से लगभग तीन मील पर जंगलों की गोद में ही बसा था।

कसाई सप्ताह में केवल दो दिन आता था और कैम्प मे ही सिपाहियों के सामने बकरा काट कर उसका मांस तौल देता और पैसा लेकर चला जाता था। वह एक बूढ़ा, परन्तु हट्टा-कट्टा, सीधा-सादा निर्भीक व्यक्ति था। वह दिन मे पाँच बार नमाज पढ़ता तथा सिजदा करते-करते उसके माथे पर काले निशान बन गए थे। उसे अपने कसाई के पेशे से उतना ही प्रेम था जितना खुदा से। इनलोगों के अतिरिक्त भी कुछ

ऐसे लोग थे जो हमारे शिविर थाने में आते-जाते थे तथा उनके आने-जाने पर कोई रोक नही थी। ऐसे लोगों में अधिकांश गाँवों के चौकीदार तथा मुखिया होते थे जिन पर पूर्णरूप से विश्वास और भरोसा नही किया जा सकता था।

लगभग एक सप्ताह तक जब मेरे शिविर थाने के कार्यों में कोई सक्रियता नही आई तो एक दिन मुन्शी सुजान सिह ने बहुत ही गंभीर होकर कहा—"हुजूर, बैठे-बैठे तो जम्पा का पता नहीं चल सकता। निकल-पैठ कर कुछ काम होना चाहिए।"

मेरे कुछ कहने के पूर्व वह बड़े ध्यान से मेरे मुखमंडल की ओर देखता रहा। जब मैंने उसकी बातों का कोई उत्तर नही दिया और पूर्ववत मौन रहा तो वह पुनः बोल उठा— "सरकार, पहिले उन स्थानों को तो देख ले जहाँ कृपाल सिह इन्सपेक्टर के साथ-साथ पुलिस के अन्य लोग भी जम्पा द्वारा मारे गये थे।"

सुजान सिह शायद जम्पा द्वारा किए गए कठोर तथा अमानुषिक कर्मों का स्मरण दिला कर मुझे भयभीत करना चाहता था, मैंने ऐसा अनुमान किया। इस बार भी जब मैने उसकी बातों का कोई उत्तर नहीं दिया तो वह चुपचाप अपने खेमे की ओर चला गया। वह एक विश्वसनीय परन्तु कायर पुलिस कर्मचारी था। जिसने अपने जीवन में पर्याप्त अनुभव प्राप्त किए थे। परन्तु उसकी स्वाभाविक कायरता ने उसके सारे अनुभवों पर पानी फेर दिया था। दूसरे दिन बड़े तड़के मैंने सुजानसिह को बुलाया और

उससे कुछ आवश्यक कागजों की माग कर कह दिया कि हमारे खेमें पर सशस्त्र पहरा लगा दिया जाय, इसके अतिरिक्त सिपाहियों को वे आदेश दे दे कि मैं उस दिन किसी से भी नहीं मिल सकता यदि कोई मिलने आवे तो उसे वापस कर दिया जाय। सुजानसिंह के सामने ही मैंने कुछ पत्र लिखना प्रारंभ कर दिया। जब हमारे खेमें पर पहरेदार नियुक्त हो गए तो मैंने झटपट अपने कपड़े बदल दिए और एक लकड़-हारे के वेश में शिविर के पिछले द्वार से रसोईखाना होते बाहर निकला। सिपाही सावधान होकर पहरा दे रहे थे। फिर भी उन लोगों ने मुझे नहीं देखा।

जम्पा के आदमियों को धोखा देने के पूर्व मैं देख लेना चाहता था कि मेरे छद्म-वेश में मेरे ही आदमी मुझ पहचानते है कि नही। अतः जंगल की ओर से रास्ता काटते मे पुनः अपने शिविर में पहुंच गया। जब मैं सुजान सिंह के कार्यालय में पहुँचा तो देखा कि वह मसनद के सहारे लेटे-लेटे किसी चिन्ता में डूबा हुआ है। मेरे सलाम करने पर वह प्रकृ-तिस्थ हुआ और सीधे बैठते हुए एक बार मुझे बड़े ध्यान से देखा तथा डाँट कर बोला—"तुम कौन हो? और यहाँ किस-लिए आए हो।" "मैं पास-ही के एक गाँव का लकड़हारा हूं, और जंगल से लकड़ी काट कर अपना गुजर करता हूं।" जब मैन सुजानसिंह को बतलाया तो वह बहुत प्रसन्न हुआ। और मुझ बड़े प्यार से अपने निकट ही चौकी पर बैठाया तथा एक बार चारों ओर दृष्टि घुमाकर धीरे से मुझे जम्पा के विषय में कुछ बतलाने को कहा।

मेरे इस सम्बन्ध में कुछ भी बतलाने से इनकार करने तथा जम्पा को एक खूंखार और भयानक डाकू होने के संकेत मेरे द्वारा मिलने पर वह कुछ भयभीत-सा प्रतीत हुआ। अत: मैंने उसे अधिक भयभीत करने के अभिप्राय से अपनी बातों पर क्रमश: जोर देते हुए कहा—"मुन्शी जी, जम्पा एक भयानक डाकू तो है ही, परन्तु साथ-ही-साथ वह अपने शत्रु को क्षमा करना भी नहीं जानता। उसको पकड़ने का बीड़ा उठाने वाला तो आज तक शायद यहाँ से जीवित लौटकर नही गया है।" मैंने देखा सुजान सिंह के शरीर में कम्पन उत्पन्न हो गया है। अत. मुझे एकाएक हँसी आ गयी और किसी तरह मैंने अपने को संभाला। जब मैंने सूजान सिंह से प्यार भरी मुद्रा बनाकर पूछा कि—"मुन्शी जी आपको कितने बच्चे है ?" तो उसने बड़ी नरमी से उत्तर दिया कि वह अब तक पाच बच्चों का बाप हो चुका है और उन पांचों में एक तो पढ लिखकर तैयार हो गया है, परन्तु अभी तक उसे नौकरी नही मिली है। उस लड़के के विषय में उसने बड़े गर्व से कहा कि वह घोड़े पर चढ़ लेता है, कुश्ती लड़ता है और बन्दूक चलाने मे भी निपुण तथा अचूक निशानेबाज है।

सुजानसिंह पुलिस की नौकरी के अतिरिक्त अपने लड़के को किसी भी कार्य में लगाने के लिए तैयार था। पुलिस की नौकरी वह कर रहा था। इसलिए उसका तीता-मीठा स्वाद वह जानता था।

सुजान सिंह से जब मैंने उनके पत्नी के विषय में कुछ जानने का प्रयत्न किया, तो पहिले उसने कुछ भी बतलाने से

इनकार किया। शायद वह मेरे जैसे एक अजनबी आदमी से अपने पत्नी का भेद वतलाना नही चाहता था। परन्तु जब मैंने उसे पुचकारा और वड़ी नरमी से कहा—आप बड़े भाग्यवान हैं मुंशी जी? अच्छी पत्नी भाग्यशाली लोगो को ही प्राप्त होती है, तो उसने अपने हृदय में संचित प्यार के गुप्त कोष को मेरे सामने प्रगट कर दिया और अपने पत्नी की सारी राम कहानी मुझसे कह डाली। जब वह अपने तथा अपनी पत्नी के विषय की अनेक प्रेम भरी कहानियाँ सुना चुका जिसे अव तक उसने गुप्त रक्खी थी तो मैंने देखा कि वह बहुत ही प्रसन्न है। अंत मे सुजान सिंह ने वतलाया कि उसकी पत्नी उसे डाकुओं के विरूद्ध इस अभियान में कदापि आने देना नही चाहती थी परन्तु इतने दिनों तक नौकरी करने के पश्चात् आखिरी समय इसका त्याग करना उसने अच्छा नही समझा। जवानी में वह पुलिस विभाग की नौकरी से बहुत-ही प्रसन्न था। परन्तु इस समय अपने विभाग की अनेक बुराइयो और त्रुटियों से वह असंतुष्ट-सा लगता था।

अधिक देर तक सुजान सिंह से बातें करने में हमें अपनी पोल खुल जाने का भी भय था। मैं अब तक मुँह पर जोर देकर अपने स्वर को बदलने में सफल हो चुका था परन्तु अब शायद मेरा यह प्रयास सफल नहीं हो सके, अत: मैंने सुजान सिंह से पुन: मिलने का बचन दिया और एकाएक उठ कर वहाँ से चलता बना।

शिविर से वाहर निकलने पर पहरे के सिपाही ने मुझे रोका, परन्तु मुंशी सुजान सिंह जब सिपाही को जोर से

डाँट कर मुझे उससे जाने देने को कहा तो वह चुप रह गया। कुछ दूर घनघोर जंगल को पार कर जब एक खुले स्थान पर पहुँचा जहाँ छिट-फुट झाड़ियों के रहते भी मैदान की तरह खुली धरनी थी तो मैंने वहीं से एक टीले पर बरगद की घनी छाँव में चरवाहों के एक झुंड को बैठे देखा। वे आपस में किसी प्रसग को लेकर वाद-विवाद कर रहे थे। मुझे अपनी ओर आते देख कर वे एकाएक चुप हो गए। उनके अचानक मौन धारण कर लेने के कारण मुझे उन पर कुछ संदेह हुआ। जब मैं उनके पास पहुँचा और उनसे बाते करने का कोई बहाना सोचने लगा। परन्तु तत्काल मुझे कोई ऐसी बात नही सूझी। अंत में मैंने अपने कुर्ते की थैली से बीड़ी निकालते हुए उनमें से एक आदमी से दियासलाई की याँचना की। मैंने बीड़ी उन लोगों की ओर भी बढ़ाया, परन्तु उनमे से किसी ने भी उसे स्वीकार नहीं किया और एक ने मुझको सलाई निकाल कर दिया। मैंने बीड़ी को सुलगा कर सलाई वापस किया और उनसे बिना कुछ कहे-सुने एक ओर चलता बना। मेरे कार्य-कलाप से उन लोगों को मुझ पर कोई सदेह नहीं हुआ। तीर ठीक निशाने पर बैठा था। अभी मैं कुछ-ही दूर गया होगा कि उनमें से एक आदमी दौड़ता हुआ मेरे निकट आया और अपने दल के मुखिया के यहां मुझसे चलने का अनुरोध किया। बिना कुछ कहे सुने मैं संदेशवाहक के साथ लौट पड़ा और उनके दल में जाकर जब एक ओर बैठ गया, तो उनमें से एक व्यक्ति ने जो दाढ़ी रखे और अधेड़ आयु के होने पर भी हट्टा-कट्टा था मुझसे मेरे संबंध में अनेक प्रश्न पूछा। जब उसे निश्चित हो गया कि मैं एक साधारण लकड़-

हारा हूँ और अपनी जीविका की खोज में नौकरी के लिए उस जंगल के ठीकेदार जो पंजाब का रहने वाला था के पास जा रहा हूँ तो वे बहुत प्रसन्न हुए। बात की बात में उनसे मुझे नौकरी पाने का आश्वासन मिल गया। नौकरी देने के पूर्व उनलोगों ने मेरे समक्ष एक शर्त भी रखा और उसके लिए मुझको सौ रुपया अग्रिम पारितोषिक भी तुरत निकाल कर दे दिया। बदले में मैंने सरदार से वहां के पुलिस शिविर सबंधी सारे विवरण कुछ घंटों में ही देने का वादा किया। परन्तु साथ ही साथ मैंने उन लोगों को उस स्थान से कहीं अन्यत्र चले जाने की सलाह दी जिसे उन लोगों ने मान लिया। मेरे लिए तुरत एक ऐसे आदमी की व्यवस्था की गयी जो कि तत्काल मेरे पुलिस शिविर से लौटने पर मुझको उनके सरदार के यहाँ पहुँचा देता। जब सारी बातों को पूर्ण रूप से समझ कर मैं पुलिस शिविर की ओर जाने को तैयार हुआ, तो वे लोग भी यत्र-तत्र जंगल की गोद में समा गए।

पुलिस के शिविर थाने लौट कर मैं पिछली राह से परदो की ओट देता हुआ अपने निजी खेमें में घुस गया। पहरे का सिपाही उस समय दूसरी ओर देख रहा था अतः मेरे आने का उसे कुछ भी पता नहीं चला। शिविर में पहुँचते ही मैंने अपने नकली वेश को उतार दिया। इस समय सुजान सिंह शिविर के द्वार पर बैठे-बैठे मेरे सो कर उठने की प्रतीक्षा कर रहा था। उसके साथ सदर से मेरी सहायता के लिए भेजे गए एक इस्पेक्टर भी थे, जिन्हें उस क्षेत्र का पूर्ण अनुभव एवं जानकारी थी।

गहरी नींद से सो कर उठने का ढोंग करते जब मैं बाहर निकला तो उन्होंने मुझे अपना परिचय पत्र दिखलाया। उनके लिए ठहरने की सारी व्यवस्था करने का सुजान सिंह को आदेश देकर मैं उस दिन की डाक देखने लगा। डाक में कई आवश्यक पत्रों के साथ-साथ कुछ सरकारी विशेष आदेश भी थे, जिनका विषय पूर्व परिचित था। पत्रों में लिखा था कि किसी भी मूल्य पर डाकुओं का दमन होना चाहिए। यदि जग्गा किसी तरह भी जिन्दा पकड़ में नहीं आ सके, तो उसे मुर्दा पकड़ने की भी पूर्ण चेतावनी दी गयी थी। आदेश में इस कार्य पर व्यय होनेवाली धनराशि पर भी हमारा ध्यान आकर्षित कराया गया था, जो जनता के रक्त-पसीने की कमाई थी, और जिसका सदुपयोग करना प्रत्येक भारतीय का कर्तव्य था।

पत्र की अंतिम पंक्तियों को पढ़कर मुझे हंसी आ गयी। 'पर उपदेश कुशल बहुतेरे' के अनुसार यदि हम दूसरों को उपदेश न देकर अपना-अपना कर्तव्य ही पालन करने लग जायँ तो शायद सारे देश और राष्ट्र का सुधार होते विलम्ब न हो। परन्तु हम दूसरों को ही उपदेश देकर अपने कर्तव्य की इति श्रीः समझ लेते हैं। मैं सोचने लगा—"पर उपदेश तथा दूसरों की आलोचना प्रत्यालोचना की बीमारी हमारे देश को इतना तबाह कर रही है जितना हमारी कायरता और दुर्बलता भी नहीं। हमारे कर्तव्य की इति श्रीः हमारे कार्यों से नहीं बल्कि दूसरों के गुण दोष निकालने में ही हो जाती है, और हम इसी से संतुष्ट रहते हैं। ऐसा क्यों होता है?" मैं बहुत देर तक समझ नहीं सका। इस संबंध में एकाएक हालही में घटित एक

घटना का मुझे स्मरण हो आया, जिसके कारण मुझे मानसिक पीड़ा ने इतना सताया कि मैं महीनों तक अस्वस्थ बना रहा और तभी से मुझे अपने अफसरों के कोरे उपदेशों की ओर से अरुचि-सी हो गयी। बात ऐसी हुई कि एक दिन हमारे पुलिस-शिविर थाने का निरीक्षण करने सदर से हमारे छोटे साहब, (सहायक कप्तान) बड़े तड़के पहुँचे। भूल से इनके चाय का 'थर्मस' चलते समय सदर में ही छूट गया था। चाय के बहुत आदी होने के कारण वे बड़े धर्म संकट में पड़े। जिस तरह की चाय वे पीते थे उसका मिलना वहाँ असंभव था। क्योंकि उस सुदूरवर्ती जंगली क्षेत्र में छोटे-छोटे गाँवों के अतिरिक्त कोई बड़ा नगर अथवा कस्बा नहीं था जहाँ ऐसी वस्तुओं की सुविधा हो। अंत में उन्होंने अपने साथ आये दो सिपाहियों को जीप लेकर अपना 'थर्मस' लाने के लिए पुनः सदर जाने का आदेश दिया। आठ आने की चाय लाने के लिए कम से कम सदर जाने और लौटने में बीस रुपये के पेट्रोल का व्यय था जो सरकार के सिर पड़ता। मैंने उनसे व्यर्थ के उस व्यय को रोकने का अनुरोध किया और उस साधारण चाय से ही काम चला लेने की प्रार्थना की। फलस्वरूप वे बुरी तरह हम पर फट पड़े और घंटों न जाने क्या-क्या बड़बड़ाते रहे। अंत में उन्होंने उस दिन वहाँ का अपना कार्य-क्रम रद्द कर दिया और मुझसे बिना कुछ बोले सदर लौट गए, जिससे मेरा विभागीय बहुत बड़ा नुकसान हुआ। उस दिन मुझे इस बात का भी नया अनुभव हुआ कि मेरे विभाग के छोटे अफसर यदि अपने से बड़े अफसरों को कोई अच्छी सलाह भी सोच-समझ कर देते हैं तो उन्हें उसे मानने में संकोच होता है। अतः इस

विभाग में अनुशासन के नाम पर अफसर बहुत मनमानी भी करते हैं। कहीं छोटे साहब द्वारा मेरा कुछ नुकसान न हो जाय, अत: उस दिन की सारी बातें मैंने अपनी दैनन्दिनी में अंकित कर दिया। फलस्वरूप छोटे साहब को विभाग की ओर से बड़ी डाँट पड़ी, परन्तु उस दिन से वे जम्पा से भी अधिक मेरे शत्रु बन गए तथा अपने से बड़े एक अफसर के विरुद्ध शिकायत करने के अभियोग में मेरी चरितावली में एक काला दाग लगवा दिया। उसी चक्र में मुझे इसका भी अनुभव हुआ कि सच बोलने का ही परिणाम बुरा नहीं होता, बल्कि लिखने का भी। और तभी से मैं सोच-समझ कर सच बात बोलने और लिखने के लिए विवश हो गया। समय बहुत-ही कम था, अत: पहरे के सिपाही से अपनी अस्वस्थता का बहाना कर मैं शिविर के अन्दर सोने चला गया और सिपाही को आदेश दे दिया कि मुझे किसी भी अवस्था में जगाया न जाय।

लगभग डेढ़ घंटे के पश्चात् पुन: अपना वेश बदल कर मैं उस स्थान पर पहुँचा, जहाँ चरवाहे के वेश में एक आदमी मेरे लिए प्रतीक्षा कर रहा था। मेरे सकुशल लौट आने पर उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। और जब मैंने उसे अपनी सफलता का संदेश दिया, तो वह मारे प्रसन्नता के विह्वल हो गया। उसने उसी खुशी में मुझे अपना परिचय भी दे दिया। वह जम्पा के दल का एक विश्वसनीय प्रमुख सदस्य था। पुलिस शिविर के भेद-भाव ज्ञात हो जाने पर उसी रात उन पर धावा बोल देने का डाकुओं के दल ने निश्चित किया था। जम्पा उस क्षेत्र में पुलिस को जमने देना नहीं चाहता था। उसके आदमी ने

आगे वतलाया कि मैं भी यदि उनके साथ रह कर सफल हो गया, तो मुझे भी वे लोग अपने दल में सहर्ष सम्मिलित कर लेंगे और मुझे वे लोग अच्छा वेतन देने लगेंगे। और अब मैं थोड़ ही दिनों में मालामाल होकर घर वापस जा सकूंगा।

मैंने उस पर अपनी वनावटी प्रसन्नता को इस तरह व्यक्त किया मानो वड़ भाग्य से ही मैं उनके दल में सम्मिलित हो रहा हूँ।

जम्पा का पड़ाव एक ऐसे बीहड वन में था, जहाँ जाना सरल नहीं। छोटी-छोटी पहाड़ियों से घिरे घनघोर वनों को काटकर थोड़ी-सी जमीन साफ कर ली गयी थी। जिसमें डाकुओं की वीस छोटी-छोटी और कुछ वडी छोलदारियाँ लगी थी। पड़ाव के चारों ओर लगभग चार सौ गज दूर चार ऊँची-ऊँची मचानें गड़ी थी। जिनपर हथियार-बद पहरेदार नियुक्त थे जो दूर से आनेवाले किसी भी व्यक्ति को देखकर खतरे की सूचना पड़ाव पर भेजने के लिए तत्पर रहते थे तथा किसी को वहाँ पहुँचने के पूर्व गोली से उड़ा देते थे।

टेढ़े-मेढ़े, उबड़-खावड़ रास्तों से वड़ी कठिनाइयों के झेलने के पश्चात् मैं उस पड़ाव पर पहुँचा दिया गया, जहाँ जम्पा मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। उसको देखते ही मेरे होश उड गए। वह तो वही व्यक्ति था जिससे मुझे यहाँ आने के पूर्व अपने नगर में भेंट हुई थी। मैं अपने को अब कुछ-ही क्षणों का मेहमान समझने लगा। परन्तु मरता क्या न करता के अनुसार मन-ही-मन अपने हृदय को दृढ़ कर तथा साहस पूर्वक मैं आगे वढ़ा और जम्पा के निकट पहुँच कर उसे

अभिवादन किया तथा विना कुछ कहे एक ओर बैठ गया। मेरे पहुँचते ही वहाँ के सभी उपस्थित डाकू यत्र-तत्र खिसक गए और जब केवल मैं, जम्पा तथा मुझको वहाँ तक ले जाने वाला व्यक्तिमात्र वहाँ बच गए, तो एक बार जम्पा ने अपनी पैनी दृष्टि गड़ाकर मेरी ओर देखा। मैं भय से अपनी आँखे उससे मिला नहीं सका और सिर से पाँव तक एक बार सिहर उठा। परन्तु बहुत देर तक उसने मेरी ओर नहीं देखा और तत्काल ही मेरी ओर से अपनी दृष्टि फिरा ली। वह कुछ क्षण मौन रहा, और इस तरह की मुद्रा बनाए रहा मानों कोई भूली-बिसरी बात स्मरण कर रहा हो। उसके चेहरे पर की जब सारी वक्र रेखायें मिट गयीं तो मेरे दिल को कुछ ढाढ़स बंधा। शायद उसके दिल में मेरे प्रति अब कोई संदेह नहीं रहा, इसलिए वह बड़ प्रेम से परन्तु गंभीर होकर मुझसे पुलिस शिविर का हाल पूछने लगा, जिसे मैंने उससे विस्तार पूर्वक सुनाया।

जम्पा मेरी बातें सुन कर पूर्णरूप से संतुष्ट हुआ और उसे सफलता-पूर्वक धोखा दे सकने के कारण मैं भी मन-ही-मन बहुत प्रसन्न हुआ। मुझे पड़ाव से सटे ही एक ऊँची मचान के निकट छोलदारी में ठहराने का आदेश देकर जम्पा एक ओर चला गया। वहाँ सारा दिन मुझे एकान्त में ही व्यतीत करना पड़ा, परन्तु मेरे लिए खाने-पीने की समुचित व्यवस्था की गयी थी।

सुर्यास्त होते ही जिस तरह दूर-दूर से पंछी अपने बसेरे पर पहुँच जाते हैं, उसी तरह अँधेरा होते ही जम्पा के दल के सभी छापामार सदस्य चारों ओर से घोड़ों पर सवार होकर पड़ाव पर इकत्रित होने लगे। कुछ ही क्षण पूर्व जहाँ निर्जनता

का राज्य एवं मौत का सन्नाटा था वहीं अब कुछ ही क्षणो मे बड़ी चहल-पहल मच गयी। जंगल के उस एकान्त वातावरण में भी जम्पा के आदमी बड़े सजग और सचेत थे। उनके घोड़े भी इतने दक्ष थे कि दर्जनों की संख्या में साथ रहने पर भी उनके मुँह से किसी तरह की ध्वनि नहीं निकलती थी। मै दस्युराज जम्पा के उस संगठन को देखकर दंग रह गया। पुलिस शिविर थाने पर छापा मारने के आज के कार्य-क्रम मे शायद जम्पा सम्मिलित नहीं हो रहा था। आज उसके अन्य प्रमुख साथी भी वहाँ नहीं आ सके थे। मुझे ऐसा संकेत मिला कि आज वह अपने कुछ नये लोगों की परीक्षा लेने के लिए सारा कार्य-भार उन्हीं लोगों पर छोड़ देना चाहता है। जब अंधकार अत्यन्त गाढ़ा हो गया और जंगल के जीव-जन्तु अपने-अपने नीड़ों और बसेरों में नि:शब्द सो गये तो कुल बीस डाकुओं को नई-नई बन्दूकों के साथ पुलिस के शिविर थाने पर धावा बोलने के लिए रवाना कर दिया गया। मुझको जम्पा ने आदेश दिया कि मैं डाका डालने के पूर्व पुलिस के जवानों की गति-विधि को देखकर निश्चित कर लूँगा कि वे सावधान है अथवा असावधान। उसने विदा होने के पूर्व कड़कती हुई आवाज में अन्तिम बार मेरी ओर देख कर कहा, हमारे यहाँ गद्दारी का दंड प्राणदंड है इसे तुम्हें जान लेना चाहिए। और दल के प्रति वफादार रहनेवाला भाई-भाई की तरह प्रत्येक लूट के माल का साझीदार होता है इसे भी तुम्हें नही भलना चाहिए।

मैंने जम्पा की ओर देख कर अपना सिर नीचे झुका लिया मानों मैं उसके आदेश का पालन सिर देकर भी करने

के लिए तयार हूँ। जाने के पूर्व जम्पा ने एक-एक डाकू को समझाया और उन्हें आदेश दिया कि विशेष परिस्थिति में ही किसी की हत्या की जाय।

इस छापे का मूल उद्देश्य केवल पुलिस की इस नयी टुकड़ी और उनके अफसरों को डराना ही था। जिससे वे डाकू दल को पकड़ने में सक्रिय न हो सकें।

जम्पा के उस रात अपने मुख्य साथियों के साथ डाका मे शामिल नहीं होने की बात सुनकर मैं बहुत असमंजस में पड़ गया था। यदि ऐसी परिस्थिति में अपने पुलिस दल को सचेत करता तो भी मुझे कोई विशेष लाभ नहीं होता। जम्पा तथा उसके दल के प्रमुख डाकुओं के बच जाने से हमारी कठिनाइयाँ पूर्ववत बनी रहती और उनका समाधान नहीं होता। दूसरी ओर यदि जम्पा के दल का पुलिस शिविर पर धावा करना सफल हो जाता तो हममें से कोई न कोई अवश्य मारा जाता और उसकी सारी जिम्मेदारी तथा दोष मेरे ही सिर पड़ता। समय कम था, अतः मैंने सोचा कि कम से कम मुंशी सुजान सिह को सारी स्थिति समझा कर डाकू दल में लौट आऊँ।

जिस समय मैं पुलिस के शिविर थाने में पहुँचा, उस समय सुजान सिह अपने कार्यालय में एक अत्यन्त सुन्दर युवती से हँस-हँस कर बातें कर रहा था। युवती की चंचल आँखे उसके वहाँ आने का कोई विशेष उद्देश्य स्पष्ट प्रकट कर रहीं थी। परन्तु अपने कटाक्षों द्वारा वह इस बात को प्रकट होने देना नहीं चाहती थी। सुजान सिह एक टक उसके सुन्दर मुख पर दृष्टि गड़ाये उसके रूप-माधुर्य का पान कर रहा था। कभी-कभी उसकी आँखें चोरी-चोरी युवती के अस्त-व्यस्त आँचल

की ओट से लाज सीमा तोड़कर उभड़ते हुए दोनों उरोजों को भी देखने की चेष्टा करता। युवती इसे जान कर भी अनजान बनी हुई थी। शिविर के द्वार पर ही मैंने अपनी नकली मूंछ दाढ़ी को हटा लिया था और चुपचाप खड़ा-खड़ा उनके कार्य कलापों को देख रहा था। जब सुजानसिंह की दृष्टि अचानक मुझ पर पड़ गयी, तो वह घबड़ा गया और झट-पट उठ कर मुझे 'सैलूट' किया। युवती भी सचेत हो गयी और अपने सारे शरीर को समेटकर छुई मुई एक ओर सिर झुकाकर खड़ी हो गयी। कुछ क्षणों तक मैं भी उसके रूप-सौंदर्य को देखने का लोभ संवरण नहीं कर सका और सभ्यता से दूर उस जंगली क्षेत्र में अपनी कल्पना से परे युवती के सरल सहज सौंदर्य को देखकर मुग्ध हो गया। सृष्टिकर्ता ने अपनी सारी कला को उसके सृजन में लगा दिया था। अभी न जाने कब तक मैं उस युवती को देखते रहता, परन्तु एकाएक मेरा ध्यान अपने कर्तव्य की ओर आकर्षित हो गया। समय बहुत कम था और डाकू हमारे लौटने की प्रतीक्षा बड़ी व्यग्रता से कर रहे थे। साथ-ही-साथ उस सुन्दर युवती की और उसके अछूते सौन्दर्य पर अपने मन को झुकते देख, मेरी अन्तरात्मा ने मुझको सचेत किया—"सावधान, जिसे किसी ने परास्त नहीं किया है उसे सौन्दर्य ने बड़ी सरलता से कर दिखाया है। जानते हो जब महाबली राक्षसों पर देवताओं का कोई अस्त्र-शस्त्र सफल नहीं हुआ तो विष्णु ने मोहिनी का रूप धारण कर उन्हें पराजित किया। हो सकता है यह सुन्दरी भी कहीं जम्पा के दल की मोहिनी हो जो पुलिस को पराजित करने के लिए भेजी गयी हो।"

मैं सचेत हो गया और हृदय को कड़ा कर सुजान सिंह को डाँटते हुए पूछा—"यह लड़की कौन है ? तथा इतनी रात गये पुलिस शिविर में कैसे आई है।" उसे तुरत हिरासत में ले लेने की आज्ञा भी मैंने सुजान सिंह मुंशी को दिया। कुछ क्षणों तक सुजान सिंह मेरे भय से शान्त बना रहा, परन्तु तत्काल ही वह सभलकर बोला—"श्रीमान्, यह लड़की यहाँ से छः मील उत्तर-पूर्व स्थित बन्नी गाँव की रहन वाली है। यह जात की ठाकुर है और इसके पिता सेना में नौकरी करते हैं। घर पर अकेले इसकी माँ है। आज से दो वर्ष पहिले डाकू इसके भाई को घर से उठा ले गये थे और जब उसको छुड़ाने के लिए पाँच हजार की थैली उन्हें नहीं भेजी गयी, तो उसे गोली मार दिया। आज भी डाकू इसके परिवार से संतुष्ट नहीं है और इसके यहाँ डाका डालने के लिए पत्र भेजा है। दिन में तो इसका घर से निकलना अत्यन्त कठिन है, अतः रात में छिपती-छिपाती यह किसी तरह आप से मिलने थाने तक आ सकी है। बेचारी आफत की मारी है, परन्तु है बड़े जीवट की लड़की। मैंने जब इससे कहा कि श्रीमान् अभी-अभी सदर से आकर आज की डाक देख रहे है अतः इस समय किसी से भी मुलाकात नहीं होगी, तो यह रोने लगी। यह आपसे मिलने के लिए बहुत व्याकुल थी, अच्छा हुआ सरकार स्वयम् आ गये हैं।"

मैं सुजान सिंह की प्रत्येक बातों का बड़े ध्यान से अध्ययन कर रहा था। वह उस युवती के सौन्दर्य से इतना प्रभावित हो चुका था और उस समय मेरा वहाँ आना उसको इतना खला था कि यदि उसका वश चलता तो मुझको वह कोई बडा दण्ड देने से नहीं चूकता।

जब वह चुप हो गया अथवा यों कहिए कि उसके पास मुझसे कहने को कोई शब्द नहीं रह गया तो वह दफ्तर के कागजों को इधर-उधर उलटने-पलटने लगा। बीच-बीच में वह कभी मेरी तरफ तो कभी उस युवती की तरफ भी देख लेता था।

समय बहुत कम था और इस समय मैं खड़ा-खड़ा सोच रहा था कि यह भी डाकुओं की कोई चाल तो नहीं। अन्नो-गत्वा मैंने युवती को दूसरे दिन आने को सलाह दिया तथा अपनी छोटी-सी डायरी निकाल कर उसका नाम पूछा। उस युवती का नाम वाणी था जिसे गाँव के लोग बानी कहते और माँ-बाप दुलार से बन्नो। इस समय वह बन्नो के नाम से ही प्रसिद्ध थी। उसके गाँव और उसके नाम में एक अजीब साम्य सुन कर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैंने अविलम्ब अपनी डायरी मे उसका नाम लिख लिया और उसे अपने गाँव चले जाने का आदेश दिया। उस समय तक छ घड़ी रात जा चुकी थी और जगल का रास्ता बीहड़ तथा हिंसक जन्तुओं से भरा था। अत. उसने उस समय अकेले अपने गाँव जाने में असमर्थता प्रकट की और भय से इस तरह की मुद्रा बना ली कि मुझे भी उसपर दया आ गयी। सुजान सिंह इस समय उसकी प्रत्येक बातों का समर्थन कर रहा था।

एकाएक जब मेरे मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि यदि शीघ्र ही इस लड़की को किसी सुरक्षित स्थान पर नहीं पहुँचा सका तो कुछ ही क्षणों में यह डाकुओं के हाथ पड़ सकती है। एकबार डाकुओं द्वारा एक निरपराध सुन्दर युवती के अपहरण तथा दुर्दशा का चित्र मेरी आँखों में खिंच आया। अतः उसे

मैंने शिविर के बाहर जाकर कुछ क्षण रुकने का आदेश दिया। बन्नो ने तत्काल मेरी आज्ञा का पालन किया। उस युवती के बाहर निकलते ही मैंने सुजान सिंह के कानों के पास अपना मुँह ले जाकर धीरे से कहा—"शीघ्र अपने आदमियों के साथ तैयार हो जाओ, अभी इसी समय डाकू हम पर आक्रमण करने वाले हैं।" मेरे मुँह से अन्तिम शब्द के निकलते ही सुजान सिंह को मानों जड़ैया आ गया और वह माघ की भीगी गाय की तरह थर-थर काँपने लगा। उसकी कायरता पर मैंने उसे बड़े जोर से डाँटा और अपने सिपाहियों को उसे तयार करने का आदेश देकर फुर्ती से बाहर निकल गया। बन्नो इस समय तक शिविर थाने के द्वार पर खड़ी-खड़ी हमारी बातों को सुनने का असफल प्रयत्न कर रही थी। मुझे देखते ही वह सीधी खड़ी हो गयी।

मैंने बिना कुछ कहे उसके हाथों को पकड़ लिया और उसे बलात घसीटते हुए शिविर से कुछ ही दूर पत्तियों से भरे एक गढ़ में छिपा दिया। जब मै बन्नो को सुरक्षित कर शिविर थाने के द्वार पर पहुँचा तो देखा कि जम्पा के आदमी वहाँ से थोड़ी ही दूर पर तैयार खड़े हैं। मैंने तत्काल अपना नकली वेश बना लिया और डाकुओं के सांकेतिक शब्दों में उन्हें धावा बोल देने की सूचना दे दी। बिजली की तरह चारों ओर से डाकुओं का दल पुलिस शिविर पर टूट पड़ा। मैंने साश्चर्य देखा कि हमारे शिविर पर धावा बोलने वालों में उस समय सबसे आगे जम्पा ही है। मुझको एक नया आदमी जानकर उसने स्वयम् डाका में सम्मिलित होने का भेद छिपा लिया था—इस डाके में पुलिस के तीन सिपाही और डाकुओं के आठ आदमी मारे गये।

जम्पा और उसके साथियों को मेरे उनके हाथ से निकल जाने का बड़ा पश्चाताप हुआ। वे मुझे जीवित पकड़ कर सरकार से एक गहरी रकम वसूल करना चाहते थे और साथ-ही-साथ पुलिस दल पर आतंक जमाना भी। मुझको मात देकर उसने अपने को अजेय घोषित करने की कल्पना किया था। परन्तु उसका मनोवांछित कामना पूरी नहीं हो सकी।

जब हमलोग डाकुओं के पड़ाव पर पहुँचे तो रात बहुत जा चुकी थी परन्तु जंगल में चारों ओर चाँदनी छिटकी हुई थी। चन्द्रमा ऊँची पहाड़ियों की चोटी और बड़े-बड़े पेड़ों से सावधानी पूर्वक बचता पूरब से पच्छिम अपना मार्ग तय करता आकाश में अपना मार्ग तय कर रहा था। उसके पीले मुख को देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो कोई लुटेरा उसका भी पीछा कर रहा हो। सुदूर जंगल में वनकेशरी का गर्जन सुनकर एक काकड़ अपनी विचित्र बोली द्वारा जंगल के असावधान पशुओं को सावधान कर रहा था। वह बड़ी तेजी से पड़ाव की ओर बढ़ा आ रहा था अतएव उसका शब्द क्रमशः स्पष्ट होते जा रहा था। मधुर-कटु, हर्ष और भय उत्पन्न करनेवाले दोनो ही प्रकार के उस वातावरण का कुछ भी प्रभाव मैंने डाकुओं के मुख पर नहीं देखा।

जब सभी डाकू अपन-अपने हथियारों को खोल कर एक स्थान पर इकत्रित हुए और कई मशालो की रोशनी से वह स्थान जगमगा उठा तो मैंने देखा कि बन्नो जम्पा के पास बैठी उससे बातें कर रही है। मुझे उसको वहाँ देखकर कोई आश्चर्य नहीं हुआ। पुलिस शिविर में उतनी रात गये उसको अकेले देखकर ही मुझे सदेह हो गया था कि वह डाकुओं की जासूस भी हो

सकता है। अब यह बात स्पष्ट हो गयी कि डाकू केवल मेरी जासूसी पर ही निर्भर नहीं है। उस समय वहाँ उपस्थित लोगों मे केवल मैं ही एक ऐसा था जो उस सुन्दरी से परिचित नहीं था। अत: जम्पा ने वहीं उससे मेरा परिचय कराया। उस रात के अभियान की सफलता का सारा श्रेय मुझको ही दिया गया। और इसके उपलक्ष में मुझे दो हजार की थैली भेंट कर, दो सप्ताह की छुट्टी भी मिल गयी। परन्तु एक निश्चित दिन को घर से अवश्य लौट आने का आदेश भी मुझको साथ-ही-साथ दिया गया। मैंने सिर झुका कर उस रुपये तथा आदेश दोनों को स्वीकार कर लिया। दिन में थके होने के कारण मुझे अब नींद आने लगी थी अत: जब मैं सोने का उपक्रम करने लगा तो जम्पा ने मुझे फिर बुलाया और उसी समय मेरे सिर पर एक ऐसा कार्य भार सौंप दिया जिसके लिये उस दल के कई डाकू सहर्ष तैयार थे। उसने मुझसे बन्नो को रातों-रात उसके गाँव छोड़ आने का आदेश दिया। यदि मुझको कोई असुविधा न हो तो मैं बन्नो के गाँव से ही अपने गाँव जा सकता था।

मैंने मन-ही-मन सोचा शायद जम्पा आज-ही मेरे चरित्र की भी परीक्षा ले लेना चाहता है, अत: मैंने सहर्ष उसकी आज्ञा को स्वीकार कर लिया। हमारे पड़ाव छोड़ने के पूर्व ही मारे गये उन आठ डाकुओं के घर पर्याप्त सहायता भेजने का प्रबन्ध कर तथा पुलिस शिविर के लूटे जाने का संदेश नगर में भेज जम्पा अपने कुछ विश्वसनीय साथियों के साथ घोड़े पर सवार होकर रात की निस्तब्धता में गायब हो गया। जाते समय उसने अपने मुख्य साथियों को बतलाया कि इस

वार वह एक माह के लिये दूर के किसी मेले में अच्छे घोड़ों की खरीद के लिये जा रहा है।

जब सभी डाकू एक-एक कर विश्राम करने चले गये और सारे पड़ाव पर सन्नाटा छा गया तो बन्नो से मैंने भी चलने का प्रस्ताव किया। उस समय रात के दो बज रहे थे। और पुलिस शिविर की ओर से लगातार बन्दूकों के दगने का स्वर सुनाई दे रहा था। मैंने अनुमान किया कि शायद डाकुओं द्वारा मुझको अपहरण कर लिये जाने का विश्वास कर पुलिस का दल मुझे ढूंढ़ने के लिये वन में प्रवेश कर रहा है। बन्नो इस समय किसी के ध्यान में अथवा यों कहिये कि किसी गहरे सोच मे डूबी हुयी थी। मैंने दूसरी बार जब उससे चलने को कहा और साथ-ही-साथ पुलिस दल के जङ्गल में आ जाने का उसे भय दिखलाया। तो भी उसका ध्यान भंग नहीं हुआ, अंत में जब मैंने उससे कहा कि अपने अफसर के मारे जाने का बदला चुकाने के लिये पुलिस दल रात में भी यहाँ धावा बोल सकता है, तो वह एकाएक चीख पड़ी और मेरे हाथ को कसकर पकड़ते हुये कहा—तो क्या तुमको यह निश्चित विश्वास है कि वह पुलिस अफसर मारा गया है। दो क्षण मौन रहकर उसने पुन. एक गहरी स्वांस खींचते हुये कहा—"यदि वह सचमुच मारा गया है तो यह बहुत ही बुरा हुआ।" "क्यों? उसके मारे जाने में तुम्हें सदेह है क्या? हमलोगों ने पुलिस शिविर पर जब धावा मारा था उस समय वह अपने शिविर में ही तो था।" मैंने बन्नो के मुख पर आये भावों को अध्ययन करते हुए कहा।

मेरी बातों का सही अर्थ लगाकर बन्नो सिर थाम कर बैठ गयी। और चन्द्रमा के तीव्र प्रकाश में मैंने देखा कि उसका रक्तवर्ण मुख आकाश से ढलते हुए चन्द्रमा की तरह पीला पड गया है। इस समय उसकी स्वांस बडी तीव्र गति से चल रही थी। मेरे पुनः कुछ कहने के पूर्व ही वह चलने के लिए उठ खडी हुई और जैसे कोई अपने आत्मीय से अपने ही मन के दुख को हलका करने के लिए गोपनीय से गोपनीय बातें बतलाने में भी संकोच नही करता, मुझसे कहने लगी—"आज पहली बार ही मैंने उसे देखा था। जहाँ तक अपने कर्तव्य पालन का प्रश्न था वह कठोरता से उसका पालन करता था, परन्तु उसका हृदय मोम से भी मुलायम था। तभी तो उसने मुझे गाँव की एक साधारण लड़की समझ कर डाकुओं से बचाने के लिये गढ़े में छिपा दिया था।" पुनः उस लड़की ने एक गहरी उस्वास खीचा और राह चलते-चलते एकाएक रुक गयी तथा धीरे से बोली—"ओह उसके हाथों का स्पर्श कितना मधुर और मादक था। यदि वह जीवित होता तो एक बार फिर मैं उससे अवश्य मिलती। विचारा धोखे से मारा गया।"

उस लड़की को सबसे अधिक इस बात का दुख था कि जब मेरे मौत का सदेशा मेरी पत्नी को मिलेगा तो वह कैसे जीवित रहेगी।

मैंने उस समय चांदनी के धूमिल प्रकाश में भी स्पष्ट देखा कि उसके हृदय की नारीसजग और सजीव हो उठी है। और उसके दुख को तब हलका करने के लिये मैंने उसका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करते हुए कहा—"सुना है, वह

अभी तक अविवाहित ही था। जब मैं उसके शिविर में पुलिस वालों का भेद लेने गया था तो उसके मुंशी से यह बात मालुम हुयी थी।" मेरा अनुमान सही निकला। वह मेरे बातों को सुनते ही एकबार पुनः बड़े जोरों से चीख उठी तथा मुझको झकझोरते हुए कहा—"ओह मेरा यह अनुमान भी सही निकला। मेरा दिल बार-बार कह रहा था कि वह अविवाहित है। डाकुओं ने उसे मार कर बहुत ही बुरा किया है। उसे मार डालने में कोई तुक नहीं था। यदि वह जीवित हमारी हिरासत में रहता तो इससे भी हमारा बहुत काम बन सकता था।

इसबार मैंने बच्चों की बातों का कोई उत्तर नहीं दिया। और सोचने लगा कि आखिर मेरे किस कार्य अथवा गुण ने उस सुन्दरी को इतना आकर्षित कर लिया है कि वह मेरे प्रति इतना आसक्त हो गयी है।

रात धीरे-धीरे बीतती जा रही थी। सबेरा होने में अब अधिक विलम्ब नहीं था। बीहड़ वन के अनजाने बीहड़ मार्ग पर चलने में मुझे बड़ी कठिनाई हो रही थी परन्तु वह लड़की निर्भीक होकर आगे बढ़ी जा रही थी। ऐसा प्रतीत होता था मानो वह किसी साफ-सुथरे राजमार्ग पर चल रही हो। मार्ग मे कुछ दूर जाने पर अचानक मैंने एक काकड़ का स्वर सुना अतः उससे कुछ देर वहीं रुक जाने का अनुरोध किया परन्तु उसने मेरी सारी बातों को अनसुनी कर दिया और निरंतर आगे बढ़ती गयी। इस समय उसे किसी भी हिंसक तथा अहिंसक जन्तु की चिन्ता नहीं थी। मैंने पहिले से ही डाकुओ से मिली राइफल को चार्ज कर लिया था। अभी हमलोग

कुछ ही दूर आगे बढ़े होंगे कि अचानक हमें पास की एक झाड़ी से किसी तेन्दुए की गुर्राहट सुनायी पड़ी। तेन्दुआ शायद अपने किये गये शिकार एक सूअर के शव को खा रहा था। उसने अभी कुछ ही देर पहिले उसे मारा था। वह एकाएक रुक गयी और मेरे कुछ कहने के पूर्व ही ताली बजाकर तेन्दुए को वहाँ से भगा दिया।

जिस समय हमलोग उस लड़की के गाँव पहुँचे उसके पूर्व ही उषा ने सुर्योदय का संकेत हमें दे दिया था। लडकी ने हमें उस दिन हमको अपने गाँव में ही ठहर जाने की सलाह दिया जिसे मैं इनकार नही कर सका।

वसी गाँव में मैं दूसरे दिन भी रहा परन्तु उस लड़की को मैंने सारे दिन उदास ही देखा जिससे उसकी बूढ़ी मां भी चिन्तित थी। सदा चंचल रहनेवाली उस हंसमुख लड़की के एकाएक उदास हो जाने के कारण उसकी मां ने शायद डाकुओं द्वारा किया गया उसके प्रति कोई दुर्व्यव्यहार समझा था और मुझसे वह बार-बार इस वात को जानने का प्रयत्न कर रही थी। परन्तु मुझे एक अजनवी आदमी समझकर स्पष्ट रूप से कुछ भी पूछने में वह संकोच कर रही थी।

तीसरे दिन जब मैं अपने पुलिस शिविर में पहुँचा तो उस समय दो घड़ी रात बीत चुकी थी। मैंने देखा कि उस समय वहाँ पुलिस अधीक्षक के साथ पुलिस की एक विशेष सहायक टुकड़ी भी आ गयी है जिसमें लगभग दो सौ जवान होंगे। शिविर में काफी चहल-पहल थी और उसी समय रात ही मे जम्पा के सभी पड़ाव एवं अड्डों पर धावा वोलने का कार्य-क्रम बनाया जा रहा था। मेरे डाकुओं द्वारा मारे जाने का संदेश
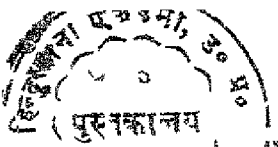
[illegible]ल-सिंह द्वारा सदर में भेज दिया गया था और स्थानीय समाचारपत्रों के मुख्य पृष्ठों पर अनेक प्रकार के मनगढ़न्त सनसनीदार समाचार भी प्रकाशित किये गये थे।

ठीक उसी समय नगर में जम्पा के नाम से भी एक पर्चा छपवाकर बंटवाया गया था जिसमें पुलिस को एक गंभीर चुनौती दी गयी थी। किसी पुलिस अफसर का डाकुओं द्वारा मारा जाना कोई साधारण घटना नहीं थी, अतः दो-तीन दिन में ही चारों ओर इसका प्रचार हो गया था और आम जनता काफी भयभीत भी हो चुकी थी।

मेरे डाकुओं के हाथ से जीवित बच कर लौट आने की घटना से सारे शिविर में एक आनन्द की लहर दौड़ गयी। परन्तु हमारे बड़े साहब ने मेरी कायरता पर मुझे बहुत फटकारा और डाकुओं के पंजे से मेरे जीवित लौट आने का एकमात्र कारण उन्होंने मेरा शिविर छोड़ कर भाग जाना ही ठहराया। मेरे लाख सफाई देने पर भी उनकी अपनी धारणा नहीं बदली। उन्होंने अन्त में मुझसे कहा कि—यदि तुम जम्पा को एक माह में नहीं पकड़ लेते तो पुलिस विभाग से अलग कर दिये जाओगे और सदर चले गये।

वे नागरिकों के समक्ष सफाई देने के लिये मुझको भी सदर ले जाना चाहते थे परन्तु मैंने कुछ आवश्यक कार्य बता कर उनके साथ-साथ सदर जाने से इन्कार कर दिया।

बड़े साहब के चले जाने के बाद मैंने एक-एक सिपाहियों से, जो शिविर पर डाका पड़ते समय वहाँ वर्तमान थे बातें किया। सभी लोगों के मुखमण्डल पर भय के चिन्ह थे और भविष्य के लिए अपने प्राणों का मोह भी। उनमें सुजान सिंह

ही एक ऐसा व्यक्ति था जिसके मुखमण्डल पर कोई हर्ष विषाद के चिन्ह नहीं थे। वह बन्नो के हाथ से निकल जाने पर बार-बार पश्चाताप कर रहा था। उसकी मुखमुद्रा से ऐसा ज्ञात हो रहा था—मानों उसकी अपनी बेटी का ही डाकुओं द्वारा अपहरण हुआ हो।

सबलोगों को अपने कर्तव्य से सचेत कर मैं अपने खेमें में लौटा और सारे घटने को विवरण सहित अपनी दैनन्दिनी में अंकित किया और उसकी एक प्रति मैंने बड़े साहब को भी भेज दी।

अपने निश्चित कार्य-क्रम के अनुसार मुझे दूसरे दिन बन्नी गाँव जाकर उस लड़की के अपहरण की घटना सम्बन्धी जाँच-पड़ताल करनी थी जिसे मेरे मुंशी ने अपने कार्यवायी पुस्तिका में दर्ज कर लिया था। अतः सुर्योदय के पूर्व ही मैंने तीन रास्तों से पुलिस की तीन टुकड़ियों को रवाना कर स्वयम् घोड़े से एक सिपाही के साथ बीच के रास्ते से प्रस्थान किया। थाने का सारा भार उस दिन मैंने सुजानसिंह पर छोड़ दिया। वह बार-बार मेरे चलने के पूर्व मुझसे बन्नी गाँव तक जाने का अनुरोध कर रहा था परन्तु उसे मैंने डाँट फटकार कर रोक दिया।

बन्नी गाँव में मेरे पहुँचने के पूर्व ही पुलिस के जवान पहुँच चुके थे। परन्तु गाँव एकदम खाली था और एक आदमी का भी वहाँ पता नहीं था जिससे कुछ पूछताछ किया जाता। गाँव वालों को भय था कि पुलिस वाले अपने अफसर के मारे जाने का बदला उनसे चुकाने के लिए अवश्य आवेंगे। अतः उनके

लिए गाँव छोड़ कर जंगलों में छिप जाना स्वाभाविक था। गॉव में जो उस समय इक्के-दुक्के आदमी मौजूद थे उनमें कम छोटे बच्चे और जर्जर बूढ़े व्यक्ति थे जो अपने तथा पड़ोसियों के घरों की देखभाल ही करने योग्य थे।

मेरी समझ से गाँव वालों की धारणा सही भी थी। हमारी नियुक्ति के पूर्व उस क्षेत्र में भेजे गये कुछ अफसरों ने वहाँ के लोगों को बहुत सताया था। और उनका आतंक उस क्षेत्र मे डाकुओं के आतंक से कही बढ़कर था। यही कारण था कि वहाँ के लोगों की सहानुभूति डाकुओं से अधिक होने जा रही थी और पुलिस से घृणा। शायद पुलिस के डाकू के विरूद्ध अभियान में वहाँ असफल होने का यही प्रधान कारण था। मैंने अपने जवानों को पूर्णरूप से समझा दिया था कि वे ग्रामीणों की सहानुभति प्राप्त करने की चेष्टा करें और उनके साथ सदा नरमी का व्योहार करें। किसी विशेष परिस्थिति मे ही उनसे किसी प्रकार का सख्ती करने का मैंने सबको आदेश दिया। और इस प्रकार मैंने देखा कि कुछ ही दिनों मे हमारी नीति का सब लोगों ने स्वागत किया है। और साथ-ही-साथ उनपर इसका व्यापक प्रभाव पड़ने लगा है। फिर भी वहाँ के लोगों में एकाएक पुलिस के प्रति विश्वास उत्पन्न कराना सरल कार्य नहीं था। वन्नी गाँव और उस लड़की का घर मैं पहिले ही से देख चुका था अतः मार्ग में मुझे जाने तथा वहाँ तक पहुँचने में कोई कठिनाई नहीं हुई। जिस समय मै उसके सदर दरवाजे पर पहुँचा तो देखा कि उसकी माँ घर के अन्दर से झाँक रही है। मैं तत्काल घोड़े से नीचे उतर पडा और एक टूटी खाटपर जो वही पड़ी थी बैठ गया तथा संकेत से उसे बाहर बुलाया। बुढ़िया से जब मैंने एक रात पूर्व की घटित

घटनाओं को सुनाया और उस लड़की को डाकुओं द्वारा उठा ले जाने की बातें पूछी तो वह कुछ चकित तथा विस्मित हुई। इस संबंध में उसने मुझसे कुछ भी बतलाने से इनकार कर दिया। जब मैंने उसे सच्ची बात जानकर सहायता देने का वचन दिया तो वह प्रसन्न हो उठी और उसने लड़की के पुलिस शिविर जाने तथा वहाँ से रातो-रात डाकुओं से बचकर निकल जाने की मनगढ़न्त कथा मुझसे कह सुनाया। मैं मन-ही-मन उस बुढ़िया की चतुरायी की सराहना करते जब उससे लड़की को बुलाने के लिए कहा तो वह इसपर तैयार नहीं हुई। जवान बेटी को पुलिस अफसर तथा डाकू दोनों ही के सामने प्रस्तुत करना उसकी दृष्टि में एक समान था। मुझे बुढ़िया की बातो पर एकाएक हँसी आ गयी, फिर भी मैंने लड़की का बयान लेना अपने लिए आवश्यक बतलाया और उससे हाथ जोड कहा कि यदि मैं आपकी लड़की का बयान नहीं ले सका तो मेरी नौकरी चली जायेगी और मेरे माँ-बाप जो बृद्ध हो चुके है, भूखों मर जायेंगे। मैंने बुढ़िया के सामने इस तरह की सूरत बना ली कि जिससे उसका हृदय पसीज उठा और मेरी बातो पर उसको विश्वास उत्पन्न हो गया। उसने मुझे थोड़ी देर तक ठहरने को कहा और एक छोटे लड़के को संकेत से बुलाकर उसके कानों में कुछ कहा।

जिस समय वह लड़की जंगल की ओर से अपने दरवाजे पर पहुँची और मुझे वहाँ बैठे देखा, तो उसने तुरत मुझे पहिचान लिया। मैंने देखा कि उसका अबतक मुझाया मुखकमल एकाएक खिल उठा है। वह द्वार पर एक क्षण के लिए भी नहीं रुकी और दौड़कर घर के अन्दर घुस गयी। परन्तु कुछ ही क्षणों में वह अपने पुराने गन्दे कपडों को बदल तथा हाथ

मुँह धोकर बड़ी विनम्रता पूर्वक हमारे सामने आकर खड़ी हो गयी। उसने सर्वप्रथम आते ही मुझे हाथ जोड़कर नमस्कार किया, फिर मुझसे अनुमति लेकर पुनः घर के अन्दर तत्काल चली गयी।

लगभग पन्द्रह मिनट के पश्चात् जब वह चाय के साथ जलपान लेकर लौटी, तबतक मैं उसकी माँ से बातें करता रहा। मैंने देखा कि क्षण प्रति क्षण उस लड़की के सौन्दर्य में वृद्धि होते जा रही है। और मेरा अनुमान था कि शायद इसका मूल कारण मेरे जीवित अवस्था में उसके समक्ष पुनः उपस्थित होना ही होगा। अपने प्रति इस तरह का अनुराग एक अजनबी तथा अद्वितीय सुन्दर लड़की में पाकर मैं मन-ही-मन निहाल हो गया, परन्तु अपनी भावभंगियों द्वारा मैंने इस बात को किसी पर भी प्रकट नहीं होने दिया। बन्नो के बार-बार अनुरोध करने पर जब मैं जलपान करने तथा चाय पीने को तत्पर हुआ तो मेरे सिपाहियों ने मुझे ऐसा करने से मना किया। अनजान जगह में एक अनजान लड़की के हाथ की कोई वस्तु खाना तथा पीना हमारे विभागीय नियम के विरुद्ध था। परन्तु एक पुलिस अफसर होने के अतिरिक्त मैं मनुष्य भी था और ऐसी अवस्था में किसी के हाथ का विष भी पी लेने मे मुझे कोई संकोच नहीं था।

चाय पी लेने के पश्चात मैंने अपने सिपाहियों को डाकुओ की टोह लेने तथा विभिन्न गाँवों में उनके ठहरने के स्थानो का पता लगाने का आदेश देकर स्वयम् बन्नो का बयान लिखने लगा।

पुलिस शिविर में जिस लड़की को मैंने निःसंकोच झूठ बोलते देखा था, वही आज मेरे समक्ष झूठ बोलनेसे हिचक

रही थी। फिर भी उसने अपने माँ द्वारा कही गयी बातों को ही दुहराया। मैंने ऐसा अनुभव किया कि यदि एकान्त में मैं बन्नो से सच्ची बात कहने का अनुरोध करता तो वह मुझसे किसी बात को भी नहीं छिपाती। परन्तु मैं चुपचाप एक अनजान व्यक्ति की तरह उसकी सारी बातों को अपनी दैनन्दिनी में लिखता रहा।

जब बन्नो की बातें समाप्त हो गयी और उसके सौंदर्य का नशा मेरे मन और हृदय पर धीरे-धीरे छाने लगा तो मै वहाँ से चलने को उद्यत् हुआ। और उससे अपने योग्य कोई भी सेवा हो तो निःसंकोच कहने का आश्वासन दे घोड़े पर सवार हो गया।

संध्या होने में अब बहुत विलम्ब नहीं था। मेरा घोड़ा मेरे संकेत पर पुलिस शिविर की ओर बड़ी तेजी से सरपट भाग चला और कुछ ही देर में घने जंगलों की छाया में विलीन हो गया। घोड़े की पीठ पर बैठे-बैठे मैं बन्नी गाँव की ओर बीच-बीच में देख लेता था। बन्नो अपने घर के द्वार से मेरी ओर तबतक देखती रही जब तक मेरे घोड़े की टापों से निकलते टप-टप की ध्वनि उसे सुनायी देते रहे।

पुलिस शिविर में लौट कर मैं अपने खेमें के अन्दर चला गया। भोजन कर लेने के पश्चात लाख प्रयत्न करने पर भी मुझे उस रात नींद नहीं आयी। ऐसा ज्ञात हो रहा था कि इस समय मेरी आँखों पर निद्रा का स्थान बन्नो ने ले लिया है।

दूसरे दिन भी मैंने अपने आदमियों को जहाँ-तहाँ लगाकर स्वयम् बिस्तर पर चुपचाप पड़ा-पड़ा बन्नो के विषय में सोचता रहा। इस समय तक मैं इस बात को ही नहीं समझ सका था कि

न जाने उसने मुझमें कौन-सी बात को पा लिया है जिससे मेरी ओर इतना आकर्षित हो गयी है। परन्तु अब मैं दूसरी बात भी नहीं समझ रहा था कि आखिर मेरा झुकाव क्यों उसकी ओर इतना होते जा रहा है। इस समय उसने मेरे मन को इस तरह बाँध लिया था कि जिस कार्य के लिए मैं वहाँ गया था उसे कुछ समय के लिए मैं एकदम भूल-सा गया। कुछ काल के लिए मुझे जिस बात ने बहुत बेचैन किया वह बन्नो की मनःस्थिति थी, जो मेरे उसके गाँव से लौट जाने के पश्चात् हुई होगी। बन्नो और मेरे प्रेम का सारा राज इसी मे छिपा होगा ऐसा समझ कर मैं उसे जानने के लिए व्यग्र हो उठा। एक बार तो मेरे मन में आया कि तत्काल कोई बहाना बनाकर उसके गाँव तक पहुँच जाऊँ। परन्तु मेरे जासूसों ने उसी दिन बतलाया था कि पुलिस की गस्त के कारण डाकू भी बहुत क्षुब्ध हो उठे है और शीघ्र ही उनसे कहीं न कहीं मुठभेड हो जाने की संभावना थी। अतः मेरा कहीं भी अकेले जाना खतरे से खाली नहीं था। फिर भी मै सोच रहा था कि किसी-न-किसी बहाने बन्नो से एकबार अवश्य मिलना चाहिए। तीसरे दिन अचानक मेरी बुलाहट सदर में हुई। मारे गये आठ डाकुओं की शव परीक्षा हो चुकी थी और उनके शव का चित्र भी उतार कर रख लिया गया था। शव के पहिचान की पूर्ण जिम्मेदारी भी एकमात्र मुझपर ही सौंपी गयी थी। अतः मैने तत्काल ही पुलिस शिविर का सारा भार अपने सहायक पर छोड़ सदर के लिए प्रस्थान किया। मेरे दो दिन अपने अफसरों से विचार-विमर्श करने में लग गये। डाकुओं की शव परीक्षा में पाँच के शरीर से हमारे विभागीय एक विशेष प्रकार के तमंचे की गोलियाँ निकली थीं तथा तीन के शरीर से पुलिस

के राइफलों की। हमारे पुलिस शिविर में उस समय वैसा तमंचा केवल मेरे ही पास था। अतः हमारे बड़े साहब को आश्चर्य था कि इस प्रकार के तमंचे की गोलियाँ डाकुओं के शरीर मे कैसे पायी गयीं। मैंने कुछ विशेप कारणवश उनसे स्थिति को स्पज्ट नही किया। परन्तु एक अनुभवी पुलिस अफसर से ऐसी कोई भी बात छिपी नहीं रह सकती थी। और अपने अनुभव से उन्होंने सच्चाई को जान लिया। अन्त मे उन्होंने बड़े प्यार से मेरी पीठ ठोकी और मेरे कार्यों की सराहना वहुत देर तक करते रहे। उन्हें अब यह विश्वास हो गया था कि मुझे जो कार्य सरकार द्वारा सौंपा गया है उसमें मै अवश्य सफलता पाऊँगा। तीसरे दिन कार्यालय से अपने निवास स्थान पर जाते समय उन्होने मुझे चाय पर बुलाया। परन्तु एक आवश्यक कार्य के कारण मैं उनके यहाँ नहीं जा सका।

पुलिस शिविर के डाकुओं द्वारा मारे गये तीन सिपाहियो की विधवा और बच्चों को अभी तक कोई विभागीय सहायता नहीं मिली थी अतः मुझे इसी कार्य में दिन भर लग गये और मैं बड़े साहब से नहीं मिल सका। मैंने अपने विभागीय कर्मचारियों से इस कार्य के लिए बहुत आरजू-मिन्नत की परन्तु नियमानुसार यह कार्य तत्काल संभव नहीं था अतः मुझे बडी निराशा हुई। मैंने देखा था कि जम्पा डाकू होकर भी अपने मृतक साथियों के परिवार के लिए तत्काल सहायता भेजने की व्यवस्था किया था और शायद इसी कार्य के लिए वह घोड़ा खरीदने के बहाने उनके घर तक गया था। परन्तु हमारे मारे गये सिपाहियों की कोई खोज-खबर लेने वाला नहीं था। शायद इसीलिए अपने कर्तव्य पालन में डाकू जितना उत्साह दिखलाते थे उतना मेरे सिपाही नही। अन्त में मैं अपने छ

महीने के बाकी वेतन से उन सिपाहियों के घर थोड़ी बहुत सहायता भेजकर जब स्थिर हुआ तो बड़े साहब से मिला। साहब को जब यह बात ज्ञात हुई तो वे मुझसे प्रसन्न नहीं हुए और मेरे इस कार्य को नियम विरुद्ध बतलाया। उनकी दृष्टि में मनुष्य से अधिक महत्व नियम और कानून का ही था।

पाँचवें दिन दोपहर को जब मैं अपने शिविर में पहुँचा तो पता चला कि हमारी अनुपस्थिति में बन्नो वहाँ दो बार आकर लौट गयी थी। उसने सुजानसिंह से कोई बात भी नहीं की। उसका वहाँ जाने का एकमात्र उद्देश्य केवल मुझसे मिलना ही था। सुजानसिंह की बातों से मुझे ऐसा आभास मिला कि इस समय वह बन्नो से प्रसन्न नहीं है। वह बन्नो को डाकुओं का जासूस करार देकर मुझसे बार-बार उसे गिरफ्तार करने की सलाह दे रहा था। मैंने उस लड़की के सम्बन्ध में पूर्णरूप से जाँच करके ही सुजानसिंह को उसके विरुद्ध कोई भी कदम उठाने का आदेश दिया। अतः वह निराश होकर अपने कार्यालय मे चला गया।

जम्पा से मिलने के लिए नियत समय मे अभी चार दिन बाकी थे और इतने ही दिनों में मुझे बहुत से कार्य करने थे। अतः तुरत मैंने उसकी गतिविधि का पता लगाने के लिए अपने गुप्तचरों को लगा दिया। दूसरे दिन बड़े सबेरे मुझे पता चला कि वहाँ से सोलह मील की दूरी पर जम्पा ने एक दूसरे गाँव को लूट लिया है। लूटे गये व्यक्तियों में विशेष रूप से एक पजाबी ठीकेदार था जो अपने कुछ आदमियों के साथ-साथ गोली से उड़ा दिया गया था। खबर मिलते ही जब मैं संध्या समय उस गाँव मे पहुँचा तो देखा कि सारे गाँव में

आतंक और भय छाया हुआ है। मुझे पता चला कि डाका रुपये पैसे के लिए नहीं, बल्कि ठीकेदार के आदमियों द्वारा एक ब्राह्मण की लड़की के अपहरण कर लेने के कारण ही डाला गया था। जम्पा ने दो दिन पूर्व ही ठीकेदार के यहाँ उस लडकी को छोड़ देने का सन्देश भेजा था। परन्तु पंजाबी ठीकेदार अपनी जिद् पर अड़ा रह गया।

गाँव मे सशस्त्र पुलिस द्वारा पहरे की व्यवस्था कर मैं रातों-रात शिविर थाने लौट आया और दूसरे दिन कुछ संदिग्ध व्यक्तियों को गिरफ्तार कर सदर भेज 'दिया, जहाँ पुलिस की हवालात से ही सभी भाग निकले तो नगर में इस घटने से बहुत बड़ा आतंक फैला।

जिस दिन जम्पा से मुझे एक निश्चित स्थान पर मिलना था, उसके छः घण्टे पूर्व मैं अपने आदमियों को सचेत कर सोने का बहाना बना अपने खेमें से बाहर निकला और संध्या होने के कुछ पूर्व ही बन्नी गाँव में पहुँच गया। बन्नो उस समय घर पर नहीं थी। उसकी माँ ने बतलाया कि वह दो दिनो से अपने मामा के यहाँ गयी है। और वहाँ से वह कब लौटेगी कोई ठीक नहीं। मैं निराश होकर पुनः जंगल की ओर चल दिया। जब मैं डाकुओं के पड़ाव पर पहुँचा, तो देखा कि जम्पा अपने सभी साथियों के साथ कोई विचार-विमर्श कर रहा है। बन्नो भी वहाँ उपस्थित थी। मैंने देखा कि बन्नो उस दिन प्रसन्न नहीं है। मुझे देखकर जम्पा बहुत प्रसन्न हुआ और मुझे अपने दल के प्रमुख सरदारों में सामिल कर लेने की घोषणा की। साथ ही साथ दूसरे दिन ही पुलिस शिविर पर पुनः धावा बोलने के अभियान में मुझको अपने दल का मुखिया चुना।

इसके अतिरिक्त यदि मैं किसी तरह पुलिस इंस्पेक्टर को जीवित अथवा मृत वहाँ लाने में सफल हो गया तो मुझे डाकू दल के उप-मुखिया पद पर आसीन करने का आश्वासन मिला। मैने वहाँ इकत्रित सभी डाकुओं के समक्ष प्रतिज्ञा किया कि मैं उदयपाल का सिर लाकर अवश्य अपने सरदार के चरणों में अर्पित करूँगा, अन्यथा डाकू दल में पुनः अपना मुँह नहीं दिखलाऊँगा। हमारी प्रतिज्ञा सुनकर डाकू दल में प्रसन्नता की लहर छा गयी। परन्तु जब मैंने बन्नो की ओर देखा तो वह पूर्ववत् सिर झुकाये उदास एवं चिन्तित होकर बैठी थी। जब सभी डाकू अपने-अपने खेमें में आराम करने चले गये और जम्पा भी कुछ चुने हुए अपने साथियों को लेकर कहीं दूर अपने गुप्त विश्राम स्थल की ओर चल पड़ा, तो बन्नो चुपके से हमारे खेमें में आयी और बिना किसी झिझक के हमारे पास बैठ गयी उसने संकेत द्वारा मुझे धीरे-धीरे बोलने का आग्रह किया। कुछ क्षण मौन रह कर उसने बड़े दीन नेत्रों से मेरी ओर देखा और भर्राये हुए स्वर में मुझसे पूछा—"तुमको उस इंस्पेक्टर के बध करने से क्या मिलेगा, बता सकते हो ?"

"अपने सरदार का विश्वास और अपने दल में प्रतिष्ठा"—मैने निःसंकोच होकर उत्तर दिया।

बन्नो मेरे उत्तर को सुनकर कुछ झिझक उठी और मैने बड़े ध्यान से देखा कि उसके मुँह पर मेरे प्रति घृणा के भाव उतर आये हैं। परन्तु कुछ ही क्षणों में वह सँभल गयी और पुन बड़ी नरमी से मुझसे दूसरा प्रश्न किया—"आखिर किसी का प्राण लेकर विश्वास और प्रतिष्ठा प्राप्त करने से क्या लाभ होगा ? आखिर उस इंस्पेक्टर ने तो तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ा

है। साथ ही साथ वह तो यहाँ लोगों की रक्षा चोर-डाकुओं से करने मात्र के लिए आया है। इसमें उसका कोई निजी स्वार्थ नहीं।"

बन्नो की बातें सुनकर मैं कुछ क्षण मौन रह गया और अन्त में मैंने उसकी बातों का बड़े तर्क के साथ उत्तर दिया और उससे व्यंगात्मक स्वर में कहा—"यदि तुम्हें किसी के प्राणों का मोह है तो तुम इस दल में क्यों सम्मिलित हुई हो ? तुम्हें भी तो डाकुओं का साथ छोड़ कर अपने घर में रहना चाहिए। इसके अतिरिक्त यह जानते हुए कि जम्पा ने आज तक न जाने कितनी मानव हत्यायें की होंगी, तो क्या तुमने उससे भी कभी ऐसा कार्य नहीं करने के लिए कहा है? यदि नहीं तो तुम्हें मुझसे ऐसी आशा करने का क्या अधिकार है !"

जम्पा का नाम सुनते ही बन्नो कुपित नागिन की तरह फुंकार कर उठी। वह सब कुछ सहन कर सकती थी परन्तु जम्पा के विरुद्ध उसे एक शब्द भी सुनना पसन्द नहीं था। बन्नो को वह अपनी बेटी की तरह मानता था और उसको उसने पुलिस के चंगुल से एकबार बचा कर यहाँ लाया था। शायद यही कारण था कि बन्नो डाकुओं के कार्यों में खुलकर सहायता करती थी। यद्यपि डाकू उसपर किसी भी कार्य के करने अथवा नहीं करने का दबाव कभी भी नहीं डालते थे। बन्नो ने आगे बतलाया कि जम्पा अकारण किसी की भी हत्या अथवा लूटने के पक्ष में नहीं था। वह बन्नो की दृष्टि में मनुष्य नहीं एक देवता था।

पुलिस के अत्याचार से बन्नो के उद्धार करने की कथा सुनने की अपनी उत्सुकता को जब मैं नहीं रोक सका तो उसने

एकबार उठकर खेमें के बाहर देखा। उसे शंका हो गयी थी कि कोई उससे हमारी वार्ता छिपकर सुन रहा है। परन्तु उस समय पड़ाव में चारों ओर सन्नाटा छाये हुए था। तथा उस घनघोर जंगल में कभी-कभी जंगली पशु-पक्षियों की बोली के अतिरिक्त कुछ भी नहीं सुनाई दे रहा था। जब बन्नो को पूर्ण निश्चित हो गया कि डाकू सो गये है और उस समय किसी के जगने का भय नही तो उसने अपनी कथा प्रारंभ की—"एकवार पुलिस इंस्पेक्टर कृपालसिंह जो इस क्षेत्र में डाकुओं के दमन के लिए भेजा गया था, हमारे गाँव के एक व्यक्ति पर उसके डाकुओं के आदमी होने के सन्देह में उसकी तलाशी लेने के लिए आया। गाँव की अन्य लड़कियों के साथ मैं भी पुलिस दल का कार्यकलाप दूर ही से देख रही थी। अचानक कृपाल सिंह की दृष्टि मुझ पर पड़ गयी और वह मुझपर आसक्त हो गया। तीन दिन लगातार वह मेरे घर पर भी आया। और चौथे दिन हमारे भाई को पकड़ कर अपने साथ ले गया। जब मेरे भाई को छुड़ाने के लिए हमारे गाँव के कुछ लोग शिविर थाने गये तो कृपालसिंह नें मेरी माँ के साथ मुझे भी थाने पर बुलवाया। मेरी माँ किसी भी तरह मुझको वहाँ ले जाने के लिए तैयार नहीं थी। परन्तु भाई की ममता ने मुझे वहाँ जाने के लिए विवश कर दिया। जब मै अपनी माँ के साथ पुलिस हवालात में भाई से मिली तो उसकी दशा देखकर मुझे रूलायी आ गयी। किसी-किसी तरह मैने अपने को सँभाला ओर कृपालसिंह से उसे छोड़ दने की प्रार्थना किया। कृपाल सिह ने मेरे भाई को छोड़ तो दिया, परन्तु उसने मुझसे एक रात के लिए वहीं रुक जाने को कहा और मेरे भाई को अपनी माँ के साथ उसे घर छोड़ आने के वहाने वहाँ से हटा दिया।

उस समय तक हमें ज्ञात नहीं था कि कृपालसिंह की तरह एक जिम्मेदार पुलिस अफसर भी इतना नीच हो सकता है। त' मैंने निर्भीक होकर वहीं भोजन किया और एक खाली पड़े खेमें में जाकर सो गयी। शायद वह खेमा मेरे लिए ही पहिले से खाली कराकर .रखा गया था। रात की निस्तब्धता में एकाएक जब मेरी नींद खुली तो मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि कोई जन्तु अथवा मनुष्य मेरी ओर धीरे-धीरे बढ़ा आ. रहा है। मैं भय के कारण एकाएक चिल्ला उठी। परन्तु इतने ही में किसी ने मेरे मुँह पर अपना हाथ रख कर मेरा बोलना बन्द कर दिया।

रात के सघन अंधकार में भी मैं तत्काल समझ गयी कि वह कृपालसिंह इंस्पेक्टर है। और मेरे साथ अभद्र व्योहार करने की नियत से ही वह वहाँ उस समय आया है। उसने मुझे वश में कर लेने की हजार चेष्टायें की, परन्तु मैंने उसके प्रयास को सफल होने नहीं दिया और अपनी दाँतों की सहायता से उसके शरीर को कई जगह क्षत-विक्षत कर दिया। अन्त मे पुलिस शिविर में बहुत शोर हो जाने के कारण वह खेमें के बाहर निकल गया और उसी समय मुझे हवालात में बन्द कर देने का आदेश दिया। तीन दिन तथा तीन रात मैं हवालात में बिना अन्न जल के बन्द रही। उस समय कृपालसिंह पुलिस शिविर में नहीं था। वह किसी सरकारी काम से सदर गया था। जब चौथे दिन फिर वह सदर थाने पर लौटा तो उसने हवालात से निकाल कर मुझे अपने निकट बुलाया और संकेत द्वारा मुझे बैठ जाने को कहा। उसने मुझे घन्टों सम-झाने-मनाने का प्रयत्न किया और बड़ी दीनतापूर्वक मुझसे क्षमा माँगता रहा। परन्तु मुझे उससे इतनी घृणा हो चुकी थी

कि मैं उसकी ओर देखना भी नहीं चाहती थी। भूख और प्यास तथा तीन दिनों तक चिन्ता और भय में पड़े रहने के कारण मैं बहुत दुबली हो गयी थी। और अब मुझे अपने प्राणो का कोई मोह भी नहीं रह गया था। अतः उपयुक्त अवसर सोच कर मैं भूखी बाघिन की तरह कृपालसिंह पर टूट पड़ी। खाली हाथ में कुछ कर नहीं सकती थी अतएव थोड़े ही दूर पर रखे किसी चौकीदार के गड़ासे को जब लेने के लिये मैं दौडी तो कृपालसिंह वहाँ से उठ कर भाग चला। अन्त में दो तीन सिपाहियों ने मुझे पकड़कर बन्द कर दिया। कृपालसिंह के क्रोध की सीमा नहीं रही। उसने सिपाहियों द्वारा उसी रात को मेरे साथ अशोभनीय व्योहार कराने का निश्चय किया। मैं हवालात में पड़ी-पड़ी उसकी सारी योजनायें सुनती रही। उस समय मेरे पास कोई ऐसा साधन नहीं था जिससे मैं आत्महत्या भी करती। अब मुझे अपने जीवन से बिलकुल घृणा हो चुकी थी और साथ-साथ पुलिस एवं मानव मात्र से भी। अपने प्रतिष्ठा एवं लज्जा बचाने के लिये अब मेरे पास केवल भगवान का ही भरोसा था। यदि वही किसी प्रकार मेरी रक्षा करता तो मैं बच सकती थी। अन्त में भगवान ने मुझे सहायता भेजी और सध्या होते-होते मेरा भाई दो आदमियों के साथ पुलिस-शिविर थाने पर मेरी जमानत लेने के लिये आ पहुँचा। परन्तु मुझे छोड़ने के बदले कृपालसिंह ने उसको बुरी तरह पीटा और तुरन्त वहां से भाग जाने को कहा। मेरे भाई के वहाँ उस दिन आ जाने के कारण मेरे साथ अभद्र व्योहार नहीं हुआ बल्कि एक बूढ़े मुन्शी ने कृपालसिंह से छिपाकर मुझे कुछ खाने के लिए भेजा। रुचि नहीं होने पर भी मैं उस बूढ़े की बात को नहीं टाल सकी। मुंशी की बातों से मुझे पता चला कि

उस समय तक हमें ज्ञात नही था कि कृपालसिंह की तरह एक जिम्मेदार पुलिस अफसर भी इतना नीच हो सकता है। त· मैंने निर्भीक होकर वहीं भोजन किया और एक खाली पडे खेमें में जाकर सो गयी। शायद वह खेमा मेरे लिए ही पहिले से खाली कराकर रखा गया था। रात की निस्तब्धता मे एकाएक जब मेरी नीद खुली तो मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि कोई जन्तु अथवा मनुष्य मेरी ओर धीरे-धीरे बढ़ा आ रहा है। मैं भय के कारण एकाएक चिल्ला उठी। परन्तु इतने ही मे किसी ने मेरे मुँह पर अपना हाथ रख कर मेरा बोलना बन्द कर दिया।

रात के सघन अधकार में भी मैं तत्काल समझ गयी कि वह कृपालसिंह इंस्पेक्टर है। और मेरे साथ अभद्र व्योहार करने की नियत से ही वह वहाँ उस समय आया है। उसने मुझे वश में कर लेने की हजार चेष्टाये की, परन्तु मैंने उसके प्रयास को सफल होने नहीं दिया और अपनी दाँतों की सहायता से उसके शरीर को कई जगह क्षत-विक्षत कर दिया। अन्त मे पुलिस शिविर में बहुत शोर हो जाने के कारण वह खेमें के बाहर निकल गया और उसी समय मुझे हवालात में बन्द कर देने का आदेश दिया। तीन दिन तथा तीन रात मैं हवालात मे बिना अन्न जल के बन्द रही। उस समय कृपालसिह पुलिस शिविर में नहीं था। वह किसी सरकारी काम से सदर गया था। जब चौथे दिन फिर वह सदर थाने पर लौटा तो उसने हवालात से निकाल कर मुझे अपने निकट बुलाया और संकेत द्वारा मुझे बैठ जाने को कहा। उसने मुझे घन्टों समझाने-मनाने का प्रयत्न किया और बड़ी दीनतापूर्वक मुझसे क्षमा माँगता रहा। परन्तु मुझे उससे इतनी घृणा हो चुकी थी

कि मैं उसकी ओर देखना भी नहीं चाहती थी। भूख और प्यास तथा तीन दिनों तक चिन्ता और भय में पड़े रहने के कारण मैं बहुत दुबली हो गयी थी। और अब मुझे अपने प्राणो का कोई मोह भी नहीं रह गया था। अतः उपयुक्त अवसर सोच कर मैं भूखी बाघिन की तरह कृपालसिंह पर टूट पड़ी। खाली हाथ में कुछ कर नहीं सकती थी अतएव थोड़े ही दूर पर रखे किसी चौकीदार के गड़ासे को जब लेने के लिये मैं दौडी तो कृपालसिंह वहाँ से उठ कर भाग चला। अन्त में दो तीन सिपाहियों ने मुझे पकड़कर बन्द कर दिया। कृपालसिंह के क्रोध की सीमा नहीं रही। उसने सिपाहियों द्वारा उसी रात को मेरे साथ अशोभनीय व्योहार कराने का निश्चय किया। मैं हवालात में पड़ी-पड़ी उसकी सारी योजनायें सुनती रही। उस समय मेरे पास कोई ऐसा साधन नहीं था. जिससे मैं आतमहत्या भी करती। अब मुझे अपने जीवन से बिलकुल घृणा हो चकी थी और साथ-साथ पुलिस एव मानव मात्र से भी। अपने प्रतिष्ठा एवं लज्जा बचाने के लिये अब मेरे पास केवल भगवान का ही भरोसा था। यदि वही किसी प्रकार मेरी रक्षा करता तो मै बच सकती थी। अन्त में भगवान ने मुझे सहायता भेजी और सन्ध्या होते-होते मेरा भाई दो आदमियों के साथ पुलिस-शिविर थाने पर मेरी जमानत लेने के लिये आ पहुँचा। परन्तु मुझे छोड़ने के बदले कृपालसिह ने उसको बुरी तरह पीटा और तुरन्त वहां से भाग जाने को कहा। मेरे भाई के वहाँ उस दिन आ जाने के कारण मेरे साथ अभद्र व्योहार नहीं हुआ बल्कि एक बूढ़े मुन्शी ने कृपालसिंह से छिपाकर मुझे कुछ खाने के लिए भेजा। रुचि नहीं होने पर भी मैं उस बूढ़े की बात को नहीं टाल सकी। मुंशी की बातों से मुझे पता चला कि

वह भी कृपालसिंह के इस आचरण से दुखी है। उसने मुझसे स्पष्ट बतलाया कि कृपालसिंह बड़ा ही लम्पट और बदमाश है, वह किसी की भी बहू बेटी की प्रतिष्ठा भंग करने में डाकुओ का भी कान काटता है। मुंशी ने तो मुझे यहाँ तक बतलाया कि उसके ऐसे कार्यों में सदर के बड़े-बड़े अफसर भी सहयोग करते हैं। और छुट्टी के दिन जब वे लोग यहाँ आते हैं तो देहातों से उनके लिए सुन्दर लड़कियाँ पकड़ कर मंगायी जाती हैं।

दूसरे दिन रविवार था, जब मैं सोकर उठी तो बड़े तडके एक सिपाही ने हवालात खोलकर मुझे बाहर निकाला और मुझको कुछ नये कपड़े भी दिये। उसने मुझसे कहा कि—"सदर से आज बड़े साहब यहाँ आने वाले हैं। हवालातियों को वे सदा साफ-सुथरा देखना पसंद करते हैं। अतः मुझे भी नहा-धोकर उन कपड़ों को पहन लेना चाहिये।" मैंने कपड़े के बंडल को सिपाही के मुँह पर दे मारा, परन्तु उसे वह लगा नही और बड़ी फुर्ती से एक ओर हटकर उसने अपने को बचा लिया। कपड़े की गठरी बहुत दूर जाकर गिर पड़ी। परन्तु मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि हमारे इस व्योहार से वह सिपाही मुझसे रंज नहीं हुआ, बल्कि वह मुझे समझाने का चेष्टा करता हुआ बोला—"छोकरी हठ क्यों करती हो, अच्छे और साफ-सुथरे कपड़ों में यदि बड़े साहब तुम्हें देख लेंगे तथा यह समझ लेंगे कि तुम किसी प्रतिष्ठित परिवार का बहू-बेटी हो, तो तुम्हें वे तत्काल छोड़ देंगे। मैंने कई लड़कियो को उनके द्वारा इसी प्रकार मुक्त होते देखा है।"

सिपाही की बातों पर मुझे विश्वास हो गया, अतः मैंने कपड़े की गठरी उठा ली और अपनी ना-समझी के लिये उससे क्षमा

माँगी। जब मैं पास के झरने से दो सिपाहियों के साथ उनकी देख-रेख में स्नान कर लौटी तो मुझे एक खाली खेमें में ले जाया गया, जहाँ मेरे भोजन का सामग्री पहिले से ही रखी हुयी थी। मैंने थोडा-बहुत भोजन किया और जब हवालात की ओर चलने को उद्यत हुयी, तो मुझे एक सिपाही ने बतलाया कि—आज मुझे यहीं रहना है। सिपाही के चले जाने के पश्चात् मैं एक खाट पर लेट गयी। वह दिन बड़े आराम से बीता और मुझे कुछ-कुछ नींद भी आयी। फिर भी मैं भय के मारे गहरी नींद नहीं सो सकी। जब संध्या समय चारों ओर अंधेरा छा गया और जंगली उल्लू मारे प्रसन्नता के चीख-चीख कर दूसरे जंतुओं को चिढ़ाने लगे, तो मैं चारपायी से उठकर बैठ गयी। इस समय तक दूर-दूर के जंगलों से अपन घर की ओर लौटते गाय-बैलों के गले की घंटियों से निकला रव प्रायः समाप्त हो चुका था। रात के उस सन्नाटे मे मैंने देखा कि दूर सड़क पर कुछ जीप गाड़ियाँ पुलिस-शिविर की ओर चली आ रही हैं। गाड़ियों के आ जाने पर पता चला कि उनमें पुलिस के कुछ बड़े-बड़े अफसर सदर से शिविर थाने का निरीक्षण करने आये हैं। अफसरों के आने का सवाद सुनकर मेरे मन में कुछ ढाँढ़स बँधा। मैंने मन-ही-मन निश्चय किया कि अफसर लोग जब मुझसे कुछ पूछेंगे तो मैं कृपालसिंह द्वारा अपने प्रति किये गये अत्याचारों की कहानी उनसे अवश्य सुनाऊँगी। ऐसा मुझे अब तक विश्वास भी था कि पुलिस विभाग के बड़े अफसर न्याय करते हैं। परन्तु बाद मे मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि इस विभाग के सभी छोटे-बडे कर्मचारी अपने पदों के अनुरूप ही कम और अधिक अत्याचार तथा जुल्म करते हैं।

मैं बड़ी उत्सुकता पूर्वक उन अफसरों के अपने खेमें की ओर आने की प्रतीक्षा करने लगी। अभी मुझे थोड़ी देर ही प्रतीक्षा करनी पड़ी होगी कि अचानक वही सिपाही, जो मुझे कपड़े देने आया था, इसबार कुछ भोजन की सामग्री लेकर मेरे पास पहुँचा। उसने बतलाया कि भोजन के पश्चात् हाकिम लोगों के यहाँ मेरी पेशी होगी। सिपाही की बातें सुनकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई और झटपट मैंने उसके हाथों से थाल लेकर कुछ खाया और जी भर कर जल भी पी लिया। जल बहुत ही शीतल था और उसमें एक प्रकार का कोई सुगन्धित द्रव्य भी मिला हुआ था। मैंने सोचा—"शायद, यह साहब लोगों की खातिरदारी के लिए विशेष रूप से तैयार किया जल है, जिसमे से मुझे भी थोड़ा दे दिया गया है। जिससे मैं अपने खाने-पीने के विषय में उनसे कोई शिकायत न करूँ।"

सिपाही के चले जाने के पश्चात् मैंने अपने शरीर में पर्याप्त स्फूर्ति का अनुभव किया और इच्छा हुई कि जोर-जोर से मैं कोई गीत गुनगुनाऊँ। परन्तु जब मैं ऐसा सोच ही रही थी कि वही सिपाही मुझे बुलाने के लिए पुनः मेरी ओर आते दिखलायी दिया। मैं बहुत प्रसन्न होकर साहब लोगों के समक्ष प्रस्तुत हुई। वहाँ एक बड़े खेमें में भोजन करने के टेबुल, पर तीन आदमी बैठे हुए थे। चौथा जो उनसे कुछ दूर अलग एक कुर्सी लेकर बैठा था, वह कृपालसिंह था। मैंने घृणापूर्वक उसकी ओर से अपनी दृष्टि फिरा ली। कृपालसिंह के अतिरिक्त अन्य लोगों को देखने से ऐसा प्रतीत हो रहा था कि वे कोई पुलिस विभाग के बड़े अफसर होंगे। वे देखने मे भद्र लगते थे उनमें से एक ने मुझे तुरत एक खाली

कुर्सी पर बैठने का संकेत किया और मैं बिना किसी संकोच के उस कुर्सी पर बैठ गयी। इस समय वे तीनों आदमी बडी उत्सुकता पूर्वक बारी-बारी से मेरी ओर देख रहे थे। उनकी दृष्टि में एक प्रकार का भूख और पिपासा थी जो प्रायः हिंसक पशुओं में ही पायी जाती है। उनकी भाव-भंगियों से मैं एकाएक भयभीत हो उठी तथा उस बूढ़े मुंशी की बातें जिसे हवालात में उसने मुझको बतलायी थी, स्मरण हो आया। किसी अज्ञात आशंका ने मेरे शरीर के सारे बल और स्फुर्ति को न जाने कहाँ विलीन कर दिया। इस समय रात के आठ बज रहे थे और जंगल में चारों ओर सन्नाटा छाये था। मैंने झाँक कर खेमें के द्वार की ओर एकबार देखा। वहाँ पहरे का कोई भी सिपाही उपस्थित नहीं था। मेरे मन में एकाएक आया कि यहाँ से उठ कर जंगल की ओर भाग चलूँ। परन्तु जब मैंने अपने पाँवों को तौल कर देखा तो उनमें कम्पन उत्पन्न हो रहा था। मुझे अचानक बार-बार जम्हाई आने लगी और ऐसा प्रतीत होने लगा मानों मेरी पलकों पर सौ-सौ मन के पत्थर रख दिये गये हों। चेतना की अंतिम लौ में मुझे एकाएक स्मरण हो आया कि पुलिसवालों ने मुझे छल से कोई ऐसी दवा पिला दी है, जो मुझे संज्ञाहीन करते जा रही है। अब मुझे विश्वास हो गया था कि मैं भेड़िये की माँद से निकल कर अब कई भेड़ियों के झुंड मे फँस गयी हूँ जहाँ से बच निकलना मेरे लिये असंभव है। मुझे स्मरण है कि जब मैं कुर्सी पर से एक ओर लुढ़क पड़ी, तो किसी ने मुझे अपनी गोद में उठाकर चारपाई पर लिटा दिया था और उनमें से कोई कह रहा था—"कृपालसिंह, तुम्हारा आज का शिकार बड़ा ही लाजवाब है। इसके लिये

मैं तुम्हें शीघ्र ही एक 'स्टार' और दिलाने की चेष्टा करूँगा।

मैं बड़े ध्यानपूर्वक बन्नो की बातें सुन रहा था और अपने विभाग में भरे उन चोर-डाकुओं से भी बढ़कर जघन्य अपराध करने वाले जिम्मेदार अफसरों के विषय में सोच रहा था, जो दिन दहाड़े आम लोगों की इज्जत-मर्य्यादा लूट कर संतुष्ट होते है। ऐसे लोग सरकार से वेतन भी पाते हैं और संभ्रात व्यक्तियों के सम्पर्क में रहते हुए भी अपने जघन्य पाप कर्मों द्वारा मानवता के दामन में दाग लगाने से बाज नहीं आते।

एकाएक मेरे मुँह से जब निकल पड़ा—"तब तो चोर, डाकू और पुलिस में कोई अन्तर नहीं बन्नो।" तो वह चिल्ला पड़ी—"क्यों नही ! दोनों में धरती-आकाश का अन्तर है। डाकू, पुलिस से हजार बार अच्छे हैं। वे किसी बेबस और बेकस पर तो अत्याचार नहीं करते, किसी की बहू-बेटी पर आँख नही उठाते और अपने कर्तव्य के प्रति विश्वासघात भी करना नहीं जानते। ठीक इसके विपरीत, पुलिस के आदमी सरकार से वेतन लेकर भी रिश्वत लेते है। इनके द्वारा किये गये अत्याचार और जुल्म को कौन नहीं जानता ! फिर भी कानून की ढाल, इनकी सदैव रक्षा करते रहती है। यदि डाकू नहीं होते तो इस समय तुमसे बातें करने को मैं जीवित नही होती।"

बन्नो से उसकी राम कहानी सुनने का शायद पुनः कभी अवसर नहीं मिले, ऐसा सोचकर मैंने उससे आगे की घटनायें सुनाने का अनुरोध किया। अतः उसने शेष कथा पुनः प्रारम्भ करने के पूर्व खेमें के बाहर निकल कर चारों ओर देखा, शायद

कोई जग तो नहीं रहा है। रात का अन्धकार क्रमशः गाढ़ा होते-जा रहा था और जंगल का सन्नाटा पूर्ववत् कायम था।

उसने आगे बतलाया—"दूसरे दिन जब मेरी नींद खुली और मैं उठकर बैठ गयी तो देखा कि वह पुलिस का शिविर थाना नहीं, बल्कि डाकुओं का पड़ाव है। एकबार मैं फिर भयभीत हो उठी। न जाने मेरे भाग्य में कैसे-कैसे कष्ट झेलना बदा था। तभी तो मैं कुएँ से निकल कर एक गहरे तालाब के कीचड़ में आ फँसी थी।" परन्तु तत्काल ही मुझे जगा हुआ देखकर जम्पा मेरे पास आया और रात की सारी घटनाओं को आद्योपांत मुझसे कह सुनाया। मैं अवाक होकर बहुत देर तक जम्पा का मुँह एकटक देखती रही। पुलिस-शिविर थाने से लौटते समय मेरे भाई की भेंट रास्ते में ही जम्पा से हो गयी थी और भाई ने अपनी सारी करुण कहानी दस्युराज से कह सुनायी थी। जम्पा ने तुरत मुझे बचाने का आश्वासन मेरे भाई को दिया और पुलिस शिविर थाने पर धावा मारने की योजना बात-की-बात में बना ली गयी। रात्रि में जिस समय हमारे संज्ञाहीन शरीर को पुलिस के वे कुत्ते अपवित्र करना चाहते थे, ठीक उसी समय डाकुओं का उनपर छापा पड़ गया। पुलिस का वह सिपाही जो उस समय पहरे पर था तुरत मार डाला गया। अन्य उसी समय अपनी जान बचाने के लिए जंगल में भाग निकले। सदर से उस दिन आये वे तीनों अफसर भी किसी तरह जम्पा की आँखें बचाकर वहाँ से खिसक गये थे और किसी तरह अपनी प्राण रक्षा करने मे सफल हुए। डाकुओं द्वारा उनकी बहुत खोज की गयी, परन्तु रात्रि के सघन अन्धकार ने उन्हें अन्त तक सहायता

दी। बाद में डाकुओं को पता चला कि उनके चले जाने के पश्चात् ही वे अपनी जीप लेकर सदर भाग गये। शीघ्रता में डाकू उनकी जीपों को जलाना भूल गये थे।

कृपालसिंह मेरी चारपायी के नीचे ही छिपा हुआ था और मेरा भाई उसे इधर-उधर ढूँढ़ रहा था। अन्त में निराश होकर जब वह मुझे उठा ले जाने के लिए मेरे निकट आया तो कृपालसिंह ने ऐसा समझ कर कि डाकुओं न उसे देख लिया है, चारपायी के नीचे से बाहर निकल आया और हाथ जोड़कर क्षमा यांचना करने लगा। मेरी बेबसी और दुर्दशा देखकर मेरे भाई की आँखों में खून उतर आया था। उसे मालूम था कि मेरी सारी दुर्दशा और विपत्तियों का एकमात्र कारण कृपालसिंह ही है। अतः मेरे भाई ने कृपालसिंह की पिस्तौल से ही उसकी हत्या कर दी।

दूसरे दिन जब घटने का सारा विवरण झूठा तथा बढ़ा-चढ़ा कर नगर से निकलने वाले समाचार पत्रों में निकला और कई दिनों के पश्चात् जब हमलोगों ने उसे पढ़ा तो मारे हँसी के सब लोग लोट-पोट हो गये।"

हमारे पूछने पर कि समाचार पत्रों में प्रकाशित संवाद क्या था! बन्नो ने हँसते हुए बतलाया—"कृपालसिंह की मौत का कारण जंगल में स्थित एक गाँव में डाका पड़ना और वहीं कृपालसिंह से डाकुओं का संघर्ष होना छपा था। समाचार में आगे बतलाया गया था कि पुलिस अफसरों के वहाँ पहुँचते ही डाकू बचकर भाग निकले। मीलों तक जंगल में उनका पीछा किया गया परन्तु वे हाथ नहीं लगे। पुलिस की गोली से कई

डाकुओं के घायल होने का भी अनुमान लगाया गया था।" बन्नो ने आगे बतलाया कि—"कृपालसिंह की बहादुरी की कहानी राजधानी तक गूँज उठी थी और कुछ ही दिनों के पश्चात् सुना गया कि उसे 'पुलिस मेडल' देने का भी निश्चय किया गया है।" 'पुलिस मेडल' की बात कहते-कहते बन्नो बड़े जोर से हँस पड़ी, जिसमें मैंने भी उसका साथ दिया।

जब उसकी हँसी रुकी तो उसने गंभीर मुद्रा में कहा—"मैं और मेरा भाई उसी दिन से डाकू दल में सम्मिलित हो गये। हमलोगों ने डाकुओं के साथ रह कर बड़ी प्रसन्नता का अनुभव भी किया।" बन्नो ने स्वीकार किया कि जिस दिन डाकुओं की गोली से कोई भी पुलिस का कर्मचारी मारा जाता उस दिन वह अपने भाई तथा जम्पा के हाथों को पूजती थी। डाकुओं के अन्य कार्यों से उसे कोई भी दिलचस्पी नहीं थी।

बन्नो के दिल को टटोलने के लिए जब मैंने उससे पूछा कि—"पुलिस में सभी लोग तो एक ही तरह के नहीं होते।" तो वह मेरी बातों को सुनकर मौन हो गयी और बड़ी गंभीरता पूर्वक कहने लगी—"पहिले तो मुझे इस बात पर एकदम विश्वास नहीं था, परन्तु मेरे साथ हाल ही में एक ऐसी घटना घटित हुई है, जिससे मेरी पुरानी धारणा कुछ-कुछ बदल गयी है। अब मैं मानने लगी हूँ कि पुलिस में भी कुछ भले, अच्छे लोग हैं।"

बन्नो के साथ घटित होनेवाली घटना के विषय में मैंने उससे कई तरह घुमा-फिरा कर पूछा, परन्तु उसने मेरे हठ करते रहने पर भी कुछ नहीं बतलाया।

जब रात बहुत बीत गयी तो बन्नो अपने खेमें में सोने चली गयी। उसके चले जाने के पश्चात् मुझे बहुत देर तक नींद नही आयी। मै सोचते रहा कि—"डाकू भी आदमी हैं, और नगर में रहनेवाले व्यक्तियो से कहीं अधिक दया एव निष्ठा का स्रोत उनके हृदय में छिपा रहता है। यदि उनके दमन के बदले, उन्हें सही मार्ग पर लाने का प्रयत्न किया जाय तो उन्हें एक कर्तव्यशील नागरिक बनाया जा सकता है। परन्तु अपने विभाग के आचरण में सुधार का मेरे मस्तिष्क मे कोई उपाय नहीं समा रहा था, जिसके कारण अनेक लोग डाकू बनने के लिये विवश किये जाते हैं।"

बन्नो जब तक मेरे निकट बैठ कर बातें करते रही, मैं बडे ध्यान से उसकी बातें सुनता रहा और उसका मनन भी करता रहा। परन्तु बन्नो के चले जाने के पश्चात् न जाने क्यों मुझे उसकी अनुपस्थिति खलने लगी। कई बार मेरे मन ने आगे पीछे सोचा तथा मेरे कर्तव्य ने मुझे ललकारा भी। फिर भी न जाने क्यों किसी अलक्ष्य शक्ति द्वारा मैं उसकी ओर खींचते गया। मुझको इस समय तक यह निश्चित हो चुका था कि बन्नो मुझ पर पूर्णरूप से अनुरक्त हो चुकी है, अतः मुझको उसकी ओर से कोई भय तथा आशंका नहीं थी। फिर भी उस छद्मवेश में मेरे उसके यहाँ जाने से कोई लाभ नहीं होता, अतः मैंने किसी-किसी तरह वह रात काटी।

दूसरे दिन ही डाकुओं द्वारा पुलिस-शिविर थाने पर धावा बोल देने का कार्यक्रम बना था। अतः जम्पा ने पुलिस की गतिविधि जानने के लिये बन्नो को ही भेजने का अपना

विचार प्रगट किया, जिसे उसने बड़ी प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार भी कर लिया और तत्काल ही वहाँ के लिये चल पड़ी। उसकी मुखमुद्रा तथा उत्सुकता को देखकर मैंने तुरत जान लिया कि उसका हृदय मुझसे मिलने को आकुल है और वह शीघ्र ही डाकुओं द्वारा की गयी मेरा सिर काटने की प्रतिज्ञा से मुझको अवगत करा देना चाहती है। मेरी अनुपस्थिति में पुलिसवाले उससे कोई दुर्व्यवहार न कर बैठें, ऐसा सोच कर मैंने निश्चित किया कि जम्पा से आज्ञा लेकर मुझे भी शीघ्र ही वहाँ पहुँचना चाहिये। अतः मैंने दस्युराज से इस आधार पर स्वयम् पुलिस-शिविर-थाने को एकबार अपनी आँखों से देखने की आज्ञा माँगी, कि वस्रो शायद उदयपाल के निवास स्थान को न जान सके और उसका आज ही रात सिर काट लाने की मेरी प्रतिज्ञा विफल हो जाय। जम्पा ने बिना किसी हीला-हवाली के हमारी बातों को मान लिया। उसने सबसे तेज दौड़नेवाला अपना घोड़ा भी इस कार्य के लिए मुझे देकर विदा किया।

पुलिस-शिविर-थाने के निकट पहुँच मैंने एक स्थान पर घोड़े को छिपाकर बाँध दिया और अपने निश्चित मार्ग से शिविर के भीतर प्रवेश कर गया। अपने खेमें में जाकर मैंने नकली वेश को उतार दिया और पहरे के सिपाही को बुला-कर उसे आदेश दिया कि यदि कोई स्त्री अथवा पुरुष मुझसे मिलने के लिए आवे, तो उसे सीधे हमारे पास लाया जाय। लगभग एक घंटे के पश्चात् पहरे के सिपाही ने मुझे बत-लाया कि गाँव की वही लड़की मुझसे मिलने के लिए आयी है जिसके घर मैं एकबार जाँच-पड़ताल के लिए गया था।

मैने वन्नो को तत्काल अपने पास बुला लिया। वन्नो जब मेरे समक्ष उपस्थित हुयी, तो उसने बड़ी ही नम्रता पूर्वक मुझको नमस्कार किया और कुछ क्षण मेरी ओर टकटकी लगाये देखती रही। उस समय उसको देख कर ऐसा प्रतीत हो रहा था, मानों वह किसी सम्मोहन मंत्र के वशीभूत हो गयी हो। परन्तु थोड़ी देर में ही वह सचेत भी हो गयी। मैंने उसे निःसंकोच कई बार या ऐसा कहिये कि बार-बार देखा। उसके अरुण कपोल इस समय कुछ अनुराग अथवा नारी-सहज लज्जा से और अधिक लाल हो गये थे। वह शीघ्रता में मुझसे कोई बात कह देना चाहती थी। परन्तु उसका मन शायद उसे रोक रहा था। उस समय बन्नो के अपूर्व सुन्दर एवं सम्मोहक रूप को देखकर मै भी अपने को प्रतिक्षण भूलता जा रहा था। मुझ कुछ ही क्षणों में ऐसा अनुभव होने लगा कि अब कुछ ही देर में मै उसके सौन्दर्य सागर में खो जाऊंगा। कई बार तो मेरे मन में आया कि दौड़कर मैं बन्नो को अपने गले लगा लूँ और उससे स्पष्ट बतला दूँ कि मैं अब तेरा हो चुका हूँ। उस समय यदि वह कह देती तो मैं अपना हृदय चीर कर उसे दिखला देता और कहता कि देख लो, "इस अल्प समय मे ही मेरे हृदय में तुम्हारे लिये कितना स्थान हो गया है।"

परन्तु पुलिस-शिविर थाने के कपड़ों की दीवारों को कान ही नहीं पंख भी होते हैं। अतः मैंने किसी तरह से अपने को संभाला। बन्नो से मेरे मन के भाव छिपे नही रहे। वह बड़े ध्यान से मेरे मुँह पर आये भावचिन्हों का अध्ययन कर रही थी। एक बार जब मैंने मर्मभरी दृष्टि से उसकी ओर देखा तो वह अधिक देर तक अपने को संभाल नहीं सकी और दौड़ कर मेरी गोद में चू पड़ी।

लगभग पन्द्रह मिनटों तक हम दोनों एक दूसरे के अङ्क में लिपटे रहे और निरंतर के चुम्बनों द्वारा जब मैंने अपने प्यार के सारे मृदुरस होंठो के माध्यम से उसके हृदय मे उतार दिया, तो उसे कुछ चेतना हुयी। फिर भी उसने अपनी भुजाओं के बंधन को शिथिल करने का कोई भी उपक्रम नही किया और भयभीत मृगी की तरह बहुत धीरे से बोली—"शायद, हमारा-तुम्हारा यह अंतिम मिलन हो।"

मैंने चौंक कर उससे पूछा—"क्यों! क्या, डाकुओं के भय से तुम्हारा गाँव छोड़ कहीं दूर जाने का ईरादा तो नहीं है!"

"नहीं" उसने संभाल कर कहा और कहती गयी—"मैं कहना तो नहीं चाहती थी, परन्तु अब मैं तुम्हारे लिये सब कुछ कर सकती हूँ। यदि इसके लिये मुझे लांछन, तिरस्कार और यहाँ तक कि अपने शीशका बलिदान भी देना पड़े तो भी मैं पीछे नहीं हटूँगी। और हाँ, इसलिये मैं भागती-दौड़ती आज यहाँ तक आयी भी हूँ, केवल तुम्हें सावधान करने।"

मैं सारी बातें जानता था। फिर भी बन्नो को दिखाने के लिए मैंने एकाएक आश्चर्यित होने की मुद्रा बनायी और उससे पूछा—"बात क्या है, कुछ स्पष्ट बताओ भी।"

और तब वह कहने लगी—"आज की रात डाकू तुम्हारे शिविर पर आक्रमण करनेवाले हैं और मुझे भी उनके साथ रहना है। यदि तुम्हें कहीं कुछ हो गया, तो भगवान जानता है, मैं अपने आपको गोली मार कर मर जाऊँगी। इसीलिये मैंने कहा भी है कि—"आज ही का रात शायद हमारे अंतिम मिलन की रात हो।"

अब बन्नों ने अपने को पूर्णरूप से मेरे बाहुपाश से मुक्त कर लिया था। वह चारपायी से उठकर खड़ी हो गयी थी। मैंने पुनः आश्चर्य का मुद्रा बनाकर उसकी ओर मर्मभरी दृष्टि से देखते हुए पूछा—"तो क्या तुम भी डाकुओं के दल मे सम्मिलित हो बन्नो! यदि हाँ, तब तो तुम बड़ी भयानक युवती हो।"

बन्नो मेरे प्रश्न से तनिक भी विचलित नहीं हुयी और मेरी बातों का बड़े नरमी से उत्तर दिया—"हाँ, मैं भी डाकू दल की हूँ।"

उसके स्वर क्रमशः तेज होते गये और वह कहते गयी—"यदि तुम्हारी इच्छा हो तो मुझे गिरफ्तार कर सकते हो। परन्तु तुम्हें विश्वास करना पड़ेगा कि मैं पुनः लौटकर डाकू दल मे नही जाऊँगी। मैंने उनसे विश्वासघात किया है, उन्हें धोखा दिया है। हाँ, यदि तुम मुझे गिरफ्तार कर लोगे तो शायद उनके धावा का आज का कार्यक्रम रद्द हो जाय।" वह आगे की बात अपने मन से प्रगट करना नहीं चाहती थी, फिर भी वह अपने को रोक नही सकी और कहती गयी—"तुम्हारे द्वारा मेरे गिरफ्तार हो जाने से कम से कम मुझे इतना संतोष तो अवश्य होगा कि मैंने अपने को मिटाकर भी अपने प्रेम को कलुषित नहीं होने दिया है। और साथ ही साथ मुझे कर्तव्यच्युत होने का दण्ड भी मिल जायगा।" बन्नो द्वारा व्यक्त उसके ऊँचे विचारों ने मुझ पर जादू का कार्य किया। मैं उसके स्वच्छ, पवित्र एवं निश्चल प्रेम से इतना प्रभावित हो चुका था कि दौड़कर उसे एकबार पुनः अपने हृदय से लगा लिया।

अन्त में मैंने बन्नो को आश्वासन दिया और उसे भयरहित करने के लिए वतला दिया कि—"मैं डाकुओं के धावा बोलने के इरादे से अवगत हूँ और इसकी सूचना मुझे बहुत पूर्व ही मिल चुका है, तथा मैं उनसे निपटने की सारी तैयारी भी कर चुका हूँ।" जाते समय मैंने बन्नो को डाकुओं के पड़ाव पर जाने के बदले अपने घर लौट जाने की सलाह दी, जिसे उसने अस्वीकार कर दिया। मेरी हजार चेष्टा करने पर भी वह कुछ क्षणो के लिए भी वहाँ नहीं रुकी और एकाएक मेरे खमें से निकल कर बाहर घने अन्धकार में डब गयी। बन्नो के मुख की ओर मैंने जाते समय जब ध्यान से देखा, तो मुझे ऐसा ज्ञात हुआ कि वह बहुत ही प्रसन्न है।

समय बहुत कम था, अतः उसके चले जाने के पश्चात् मैंने शीघ्र अपने सहायक इंस्पेक्टर को बुलाया और उनसे सारी स्थिति समझा दी। मैंने उनको यह भी बतला दिया कि डाकुओं के दल में मैं भी सम्मिलित रहूँगा।

सब कुछ ठीक कर लेने के पशचात् मैं पुनः अपन छद्मवेश मे डाकुओं के पड़ाव पर चला गया और देखा कि बन्नो मुझसे पहिले ही वहाँ पहुँच चुकी है।

पुलिस-शिविर-थाने पर डाकुओं के धावा करने का सवाद पुलिस को किसने दिया, इस समय जम्पा अपने साथियो से इसी पर विचार-विमर्श कर रहा था। बन्नो को सन्देह था कि मेर अतिरिक्त ऐसा कार्य दूसरा कोई भी नहीं कर सकता। उसने जम्पा से अपने मनका सन्देह बतला दिया। बात भी स्पष्ट थी। जिस कार्य के लिए वह स्वयम् पुलिस-शिविर-

थाने में गयी थी, ठीक उतने ही कार्य के लिए वहाँ मेरे जाने की क्या आवश्यकता थी।

मैंने सोचा—"शायद मैंने उसके प्रेमी को मारकर उसका सिर ले आने की प्रतिज्ञा की है, इसलिए बन्नो किसी प्रकार भी मेरे इस कार्य में रुकावट डालना चाहती है। इसके अतिरिक्त वह उसी बहाने पुलिस शिविर थाने पर धावा बोलने का कार्यक्रम स्थगित भी करा देना चाहती थी। डाकू और उसके प्रेमी दोनों को खतरे से बचाया जा सकता था। परन्तु जम्पा अपने कार्यक्रम को स्थगित करने के पक्ष में नहीं था। उसने मुझे बन्दी बना लेने की आज्ञा दी और बन्नो के भाई की देख-रेख में पुलिस-शिविर थाने पर धावा बोलने के लिये सभी डाकू चल पड़े। डाकुओं ने प्रस्थान करने के पूर्व ही मेरे हाथ पाँव बाँध कर मुझे एक अँधेरी गुफा में डाल दिया। इस अभियान मे भाग लेने से जम्पा उस दिन रोक दिया गया था।

डाकू तथा पुलिस के जवानों में लगभग एक घण्टा गोली चली, जिसमें बन्नो का भाई और एक अन्य डाकू मारे गये। पुलिस पहिले से सावधान थी, अतः उनका कोई भी आदमी नहीं मरा। मेरे वहाँ उपस्थित नहीं रहने के कारण पुलिस को डाकुओं के गिरफ्तार करने के प्रयास में त्रुटि रह गयी, अतः उन्हें कोई सफलता नहीं मिली।

बन्नो के भाई की मृत्यु पर जम्पा घंटों रोते रहा। थोड़े समय में ही उसने सारे डाकू दल तथा जम्पा के हृदय में अपना स्थान बना लिया था। अपने डाकू जीवन से अवकाश प्राप्त कर लेने के पश्चात् जम्पा ने उसी को अपना उत्तराधिकारी बनाने का निश्चय किया था।

भाई के शोक में बन्नो रोते-रोते कई बार संज्ञाहीन भी हो चुकी थी परन्तु जम्पा के समझाने-बुझाने तथा ढाँढ़स दिलाने से उसका शोक कुछ हलका हुआ। अंत में तय हुआ कि इस मृत्यु की सूचना बन्नो की माँ को न दी जाय। वह अत्यंत वृद्धा हो चुकी थी अतः संभव था कि पुत्र शोक में अपना प्राण दे देती।

मैं अपनी उस अंधेरी गुफा में पड़ा-पड़ा डाकुओं की सारी बातें सुन रहा था। बन्नो के भाई की मृत्यु का मुझे भी बहुत दुख हुआ और उसके रोने का स्वर सुनकर मैं बहुत देर तक चिन्ता में पड़ा रहा। उस समय केवल मुझे इसी बात से संतोष था कि पुलिस का डाकुओं द्वारा कोई नुकसान नहीं हुआ है।

दूसरे दिन बन्नो को संतुष्ट करने के लिये मुझे गुफा से निकाल कर डाकू-दल के सामने लाया गया। जम्पा ने आज्ञा दी कि तत्काल ही मुझे गोली मार दी जाय और मेरे शवको पुलिस के शिविर-स्थाने में भेज दिया जाय। जिससे वे अपने जासूस की दशा तो देख लें। परन्तु उसी क्षण जम्पा को उसके एक जासूस ने आकर बतलाया कि बन्नो के भाई का शव डाक्टरी परीक्षा के लिए पुलिसवाले सदर भेज रहे हैं। लग-भग पन्द्रह मिनटों में ही सारा-का-सारा डाकू दल तैयार हो गया और पुलिस वालों से शव छीन लेने के लिए वे उसी समय चल पड़े। जम्पा ने इस कार्य के लिए दल का नेतृत्व स्वयम् अपने ही हाथ लिया था। बन्नो उस समय भाई के मृत्यु से दुखी थी अतः उसे वहीं छोड़ दिया गया। वहाँ से चलने के पूर्व डाकुओं ने पुनः मेरे हाथ-पाँव रस्सियों से जकड़ दिये और एक छोटी-सी छोलदारी में मुझको खूँटे से बाँध कर

सुला दिया गया। हाथ-पाँव के जकड़ दिये जाने से मुझे उस समय बड़ी पीड़ा हो रही थी और भूख-प्यास से मेरा पेट, पीठ में सट गया था। फिर भी मैं यह जानकर कुछ प्रसन्न हुआ कि उस समय पडाव पर मैं और बन्नो दो ही आदमी हैं। हो सकता था कि मेरी दशा को देखकर उसे दया आ जाये और मेरा बंधन कुछ ढीला कर दिया जाय। परन्तु तुरत ही मुझे यह खयाल आया कि बन्नो ही तो मेरे मार दुखों का, अज्ञानतावश कारण बन गयी है। हो सकता है, इस समय वह भी अपने भाई के मृत्यु का बदला मुझसे लेना चाहती हो।

एकाएक यह सोचकर फिर डाकू लौटते ही मुझे गोली मार देंगे और बन्नो को मेरा असली भेद भी ज्ञात नहीं होगा, मैं बड़े संकट और सोच में पड़ गया। यदि बन्नो से मैं अपना भेद प्रकट कर देता तो यह निश्चित था कि वह मुझे मुक्त कर देती। परन्तु साथ-ही-साथ वह मुझे कायर और डरपोंक समझ कर मुझसे बाद में घृणा भी कर सकती थी। प्राण बचाने के लिए मैं अपने प्रेम की हत्या किसी तरह भी नही करा सकता था। अतः मौन हो गया।

संध्या समय जब डाकुओं का एक संदेश बाहक पड़ाव पर लौटा और बन्नो को बतलाया कि उसका दल वहाँ तब तक नहीं लौटेगा जब तक उसके भाई का शव पुलिस से छीन नही लिया जायेगा। उसने यह भी बतलाया कि जिस दिन शव को सदर भेजा जानेवाला था उस दिन न जाने क्यों पुलिस वालों ने अपना कार्यक्रम टाल दिया था। संदेशवाहक ने पुलिस द्वारा इस कार्य के स्थगन का कारण, इंस्पेक्टर उदयपाल का पुलिस शिविर से गुम हो जाना बतलाया।

उनका अनुमान था कि डाकुओं ने ही उनके अफसर का अपहरण किया है।

बन्नो ने जब यह संवाद सुना तो वह एकाएक चिन्तित तथा व्याकुल हो उठी। उसके अपनी कुशलता का संदेश देकर संदेश-वाहक को पुन: जम्पा के यहाँ वापस भेज दिया।

जब पड़ाव पर पूर्ण निस्तब्धता छा गयी और एकबार फिर बन्नो तथा मेरे अतिरिक्त वहाँ अन्य कोई नहीं रहा तो बन्नो दौड़कर मेरे निकट पहुँची और परदे को हटा कर मशाल के तीव्र प्रकाश में मेरे मुँह की ओर बड़े ध्यान से देखने लगी। जब उसकी शंकाओं का पुष्टि हो गयी तो उसने मेरे बंधनो को खोलकर मुझे मुक्त कर दिया और डाकुओं के पहुँचने के पूर्व ही वहाँ से मुझसे भाग जाने का अनुरोध किया।

बंधनमुक्त होते ही मैंने अपना नकली मूँछ-दाढ़ी को हटा दिया और बन्नो के निकट जाकर जब खड़ा हुआ तो वह अपने को संभाल नहीं सका और मेरे वक्षस्थल पर अपना सिर रख दिया तथा सिसक-सिसक कर रोने लगी। छल द्वारा उसके हृदय का सारी बातें मैंने जान ली थी, इसका उसे बड़ा ही दुख था। जब उसने मुझको अपना सर्वस्व समर्पित कर दिया था तो अब तक उससे अपने को छिपा कर रखना उसकी दृष्टि में मेरे लिये उचित नहीं था। सब कुछ होने पर बन्नो को इस बात की बड़ी प्रसन्नता थी कि उसके भाई ने मर कर भी अपने बहन की सबसे प्रिय वस्तु की रक्षा कर ली थी। यदि वह मारा नहीं जाता और डाकू उसके शव के लिये शीघ्रता में चले गये नहीं होते तो अब तक मुझ निश्चित ही गोली मार दी गयी होती।

बन्नो मेरी जासूसी की कायल हो चुकी थी, और मेरे अद्‌भुत साहस के लिए उसके बार-बार मेरी सराहना की। उसे इस बात का सतोष एवं गर्व था कि उसने एक निर्भीक एव साहसी व्यक्ति से अनजाने में भी प्रेम किया है। इसे वह अपने उपर ईश्वर का कृपा और पिता के पुण्य का प्रताप बतलाया।

अंत मे बन्नो के हठ करने पर रात के सघन अंधकार मे, मैं डाकुओं के पड़ाव से पुलिस के शिविर थाने को ओर चल पड़ा। परन्तु अभी मैं आधी राह भी नहीं गया होगा कि जम्पा के साथ पड़ाव पर लौटते हुए डाकुओं द्वारा अचानक मैं पुनः पकड़ लिया गया। जम्पा मुझे बंदी बना कर बहुत ही प्रसन्न हुआ और अपने पड़ाव पर लाकर मुझको नजरबद कर लिया। बन्नो के भाई का शव प्राप्त कर सकने मे जम्पा के सारे प्रयत्न निष्फल हो चुके थे और पुलिस ने कब और कैसे उसे सदर भेज दिया, किसी को पता नही चला। अतः जम्पा मुझसे बहुत ही अप्रसन्न था।

दूसरे दिन बड़े सबेरे जम्पा ने उस बंदी को लाने के लिए एक डाकू को भेजा जिसे अब भी वह खेमें में बाँधकर रखा गया, समझ रहा था, तथा जिसके वेष में मैं स्वयम् आज तक डाकुओं को धोखा दे रहा था। जब उसका खेमा सूना मिला तो जम्पा बड़ा चिन्तित हुआ। बन्नो इस घटना पर एकदम मौन थी। डाकुओं को बन्नो पर संदेह नहीं हो सका और उन लोगों ने समझ लिया कि शायद मैंने ही अपने जासूस को छुड़ाकर भगा दिया है। मेरे राह में पकड़ लिये जाने के कारण उनके संदेह की पुष्टि भी हो चुकी थी।

डाकुओं को इस समय इस बात का पूर्ण अंदेशा हो गया कि पुलिस का जासूस अब तक शिविर थाने में पहुँच गया होगा। साथ-ही-साथ वह अपने इंस्पेक्टर के बंदी होने की सूचना भी दे दिया होगा। अतः मेरी मुक्ति के लिए पुलिसदल डाकुओं के पड़ाव पर किसी क्षण भी धावा बोल सकता था। डाकुओं ने निश्चित किया कि मेरे बंदी बना लिये जाने की सूचना वे भी पुलिस के यहाँ भेज दें जिससे पुलिस भी जान ले कि जम्पा ने अपने आदमियों के मारे जाने का बदला चुका लिया है। उन लोगों ने शीघ्र ही अपना पड़ाव छोड़ देने का भी निश्चय किया।

रातों-रात ही डाकू एक ऐसे भयानक स्थान पर पहुँच गये जहाँ सूर्य की किरणें भी प्रत्यक्षरूप में नहीं पहुँच पाती थी। भाई के शोक को कम करने के लिये मुझे बन्नो के हवाले कर दिया गया जिससे वह मेरे दुख तथा बंधन को देख कर कुछ भी संतोष करे। परन्तु बन्नो इससे कितना संतुष्ट थी मैं और बन्नो का हृदय ही इसे जानता था।

डाकू लगभग एक सप्ताह तक नये पड़ाव पर विश्राम के लिए रुके रहे और नजाने कौन-कौन सी गुप्त योजनायें बनाते रहे।

इस अवधि में जब डाकुओं द्वारा मेरे गिरफ्तार हो जाने की सूचना सदर में मिली, तो वहाँ से एक विशेष पुलिस-वाहिनी कुछ सुयोग्य अफसरों की देख-रेख में यहाँ भेजी गयी। पुलिस ने डाकुओं के बदले गरीब और निरीह व्यक्तियों का दमन करना प्रारंभ कर दिया। उनके इन कार्य का अर्थ और कुछ नहीं, बल्कि साधारण लोगों में पुलिस का

आतंक फैलाना था। राह चलते लोगों की गिरफ्तारियां हुयीं और निरपराधियों के शरीर पर कोड़े लगा कर पुलिस अफसरों ने वाहवाही लूटी। जम्पा के किसी गाँव में रहने के झूठे संदेह में भी वह गाँव पुलिस द्वारा जला दिया जाता था। फलस्वरूप उस क्षेत्र के गाँवों के निवासी यत्र-तत्र भाग गये, जैसे किसी संक्रामक रोग के प्रकोप अथवा मानव-भक्षी शेर या तेन्दुए के भय से लोग अपना घर छोड़ कर अन्यत्र भाग जाते हैं। चारों ओर पुलिस का आतंक व्याप्त हो गया और साधारण लोग डाकुओं से अधिक पुलिस से डर गये।

जम्पा को जब यह संवाद मिला तो वह क्रोध से आग-बबूला हो गया और अपने आदमियों को सताये गये लोगों की सहायता के लिए शीघ्र रवाना कर दिया। उसने डाकुओं को यह भी आदेश दे दिया कि कहीं भी पुलिस के आदमी यदि मिलें तो उन्हें बिना कुछ सोचे समझे गोली मार दिया जाय।

लगभग दो सप्ताह में ही डाकुओं का तो एक भी आदमी नहीं मरा परन्तु पुलिस के कितने ही आदमी मार दिये गये और हजारों निरीह व्यक्ति गृह-विहीन हो गये। जम्पा हमसे घृणा करता था अतः मैं एकबार भी नजरबन्दी की अवधि में उसके समक्ष पेश नही किया गया। परन्तु डाकुओ द्वारा आपस में की गयी सारी बात मुझे किसी-न-किसी तरह ज्ञात हो जाती थी।

एक रात लगभग बारह बजे के पश्चात् जब डाकुओं के पडाव पर सन्नाटा था, और केवल कुछ पहरे पर नियुक्त डाकू ही अभी तक जग रहे थे। मैं लाख प्रयत्न कर हार गया फिर भी मुझे नींद नहीं आयी अतः आंखे बंद किये मैं सो जाने की

चेष्टा कर रहा था। एकाएक मुझे ऐसा ज्ञात हुआ कि मेरे खेमें मे पिछले परदे की ओर से कोई भीतर सरकते आ रहा है। मैं एकाएक यह सोचकर भयभीत हो उठा कि शायद डकुओ ने चुपचाप किसी को मेरी हत्या के लिये भेजा है। सावधान होकर मैं उठकर बैठ गया। परन्तु जब मैंने देखा कि आने वाला और कोई नहीं बन्नो है, तो मेरा भय दूर हो गया और मैं बहुत ही प्रसन्न हुआ। मेरे कुछ कहने के पूर्व ही बन्नोने मेरे मुँह पर अपना हाथ रखकर मुझे चुप रहने का संकेत दिया और खेमें के बाहर निकल चलने को कहा। इस समय तक उसने मेरे सारे बंधनो को खोल दिया था। जब वह खेमें के पिछले रास्ते से पुन: बाहर हुयी तो मैंने भी उसका अनुसरण किया। लगभग पंद्रह मिनट तक हम लोग बड़ी सावधानी से एक ओर चलते गये और अंत में एक ऐसे स्थान पर पहुँच गये जहाँ किसी के आने का भय नहीं था। वह चुपचाप मेरे निकट बैठ गयी। और मुझे कुछ और निकट आ जाने को कहा। बन्नो आज बहुत ही गंभीर थी। उसने डाकुओं द्वारा मेरे प्रति किये गये निचश्य को डरते-डरते बतलाया। उन लोगों ने तय किया था कि पुलिस के बड़े साहब से एक सप्ताह के अदर उस क्षेत्र से थाना हटा लेने की वे माँग करें। यदि ऐसा नहीं हुआ तो आठवें दिन वे हमारा सिर काट कर उनके पास भेज देगे। इसके बाद जितने भी इंस्पेक्टर मेरे स्थान पर वहाँ भेजे जायेंगे डाकू उनके साथ भी वही वर्ताव करेंगे। बन्नो की हार्दिक इच्छा थी कि वह मुझसे और जम्पा से बातचीत करा कर इस समस्या का कोई हल निकाले। उसने जम्पा से यह भी कहा था, कि पुलिस विभाग में मेरे जसे बहुत ही कम अफसर हैं जो जनता के साथ अच्छा व्योहार करते हैं।

अतः ऐसे लोगों की हत्या करना ठीक नहीं। परन्तु जम्पा किसी तरह भी मुझको छोड़ने के लिए तैयार नहीं था। वह जानता था कि पुलिस के अत्याचार करने के कारण ही उसे जनता का समर्थन मिल रहा है। यदि पुलिस जनता के साथ सद्व्योहार करने लगे तो डाकुओं का वहाँ रहना भी कठिन हो जायेगा।

जब मैंने बन्नो से जम्पा के विचारों के प्रति उसकी सम्मति जानने की इच्छा व्यक्त की, तो उसने भी जम्पा के विचारों का अंशतः समर्थन ही किया। बन्नो के विचारो से सरकार और डाकू में कोई विशेष अंतर नहीं था। एक अपन बल द्वारा अपने विचारों का समर्थन आम लोगो से प्राप्त करा लेता है, तो दूसरा ऐसा नहीं कर सकने की क्षमता रखने के कारण अपने सीमित बल द्वारा कुछ लोगों को लूटता-पाटता है। सरकार जहाँ धनी-गरीब सबको लूटती है, वहाँ डाकू केवल धनवानों को ही लूटते हैं। मैंने बड़े आश्चर्य पूर्वक अनुभव किया कि बन्नो राजनैतिक बातों से भी अवगत है और उस पर अच्छी तरह वाद-विवाद भी कर सकती है। उसने व्यंगपूर्वक जब मुझसे कहा कि—"सच पूछिये तो एक प्रकार से डाकू ही असली अर्थ में समाजवाद के प्रवर्तक है और उन्हीं के भय से लोग अपने पास अधिक धन नहीं रखते।" तो बन्नो के समाजवाद का समर्थन करने और उसकी परिभाषा पर मुझे बड़े जोरों का हँसी आ गयी। 'ठीक भी है, मैंने मन-ही-मन सोचा। "जब सभी लोग समाज-वाद की ओट में अपने-अपने स्वार्थ साधन में लगे हैं, तो डाकू भी क्यों न अपने को समाजवादी मान लें।" कुछ देर मौन रह कर अंत में जब मैंने डाकुओं के चरित्र बल के संबंध

मे बन्नो से कुछ जानकारी करना चाहा तो वह एकाएक कुछ झुँझला-सी उठी और विनोदपूर्वक मेरे सरल बुद्धि एवं विचारों पर तरस खाते रही। उसने इस बात पर जोर देकर कहा कि—"समाज में रहकर अपने को जिम्मेदार कहनेवाले व्यक्ति जिसमें बड़े-बड़े नेता और सरकारी कर्मचारी भी है, जब वे कानून की ढाल की ओट में दुराचार और अत्याचार करते हैं और समाज उन्हें मान तथा प्रतिष्ठा देता है तो वैसी जमात जो किसी नियम और कानून को नहीं मानता, यदि कोई भूल भी करे तो क्या वह क्षमा के योग्य नहीं!" उसने अपनी बातों पर जोर देते हुए कहा—"कि डाकुओं के दमन करने के लिए क्या पुलिस द्वारा वही अस्त्र-शस्त्र काम मे नहीं लाया जाता, जिसे डाकू बड़े लोग के लूटने मे लाते हैं!"

मैं मौन होकर बन्नो की तर्क संगत बातें सुनते जा रहा था। और वह मंच पर खड़े एक नेता की तरह निर्भीकता पूर्वक अपनी बाते कहती जा रही थी। उसको विश्वास नही था कि जम्पा के पत्र का पुलिस पर कोई भी प्रभाव पड़ेगा। उसके विचारों से पुलिस ऐसा चाहती थी कि डाकू बने रहे, जिससे उनका भी महत्व कायम रहे। एक अथवा दो या दर्जनों अफसरों के मारे जाने के कारण सरकार अपनी नीति नहीं बदल सकती थी। उसे इस बात का भय था कि एक बार भी ऐसा किया गया तो बहुतेरे लोग डाकुओं का दल बना कर लूट-पाट मचाना प्रारंभ कर देंगे और अंत में चाहेंगे कि सरकार उनसे समझौता कर ले। कानून भी इस मार्ग मे बाधक था।

बन्नो की बातों ने मुझे पूर्णरूप से प्रभावित किया और मेरी इच्छा हुयी कि मै भी अपने बड़े साहब को एक पत्र लिखकर सरकार और जम्पा में समझौता कराने का प्रयत्न करूँ। यद्यपि बन्नो की तरह मुझे भी विश्वास नही था कि हमारी बातों पर सरकार तथा मेरे विभाग के उच्चाधिकारी कुछ ध्यान देंगे। शायद मेरी बातों का उलटा भी अर्थ लगाया जा सकता था। और हमारे अफसर ऐसा भी सोच सकते थे कि मैंने अपने प्राणों की रक्षा के लिये ही भयभीत होकर ऐसा लिखा है।

जब रात कुछ ही घड़ी शेष रह गयी और जंगली मुर्गे अपने स्थान से कुड़बुड़ाने लगे तो बन्नो और मैं पुन• पड़ाव की ओर लौटने को तैयार हो गये। बन्नो उस समय आगे-आगे चल रही थी और मैं उसका अनुसरण कर रहा था। इस समय हम लोग डाकूओं के पड़ाव से दूर थे जहाँ से मैं बड़ी सरलता से भाग जाता। परन्तु मेरा हृदय और प्राण दोनों ही बन्नो से इस तरह बँध गये थे, कि मै स्वप्न मे भी ऐसा सोच नहीं सकता था। जम्पा आजकल पुलिस की सरगर्मी बढ़ जाने से बहुत ही क्षुब्ध था। अतः इस समय वह भी बड़ा ही क्रूर हो गया था। इस समय उसके दल में पुलिस द्वारा सताये और पीड़ित अनेक नये सदस्य प्रतिदिन सम्मिलित होते जा रहे थे। जम्पा ने अपने दल को कई भागों में विभाजित कर उसे विभिन्न क्षेत्रों में डाका डालने के लिए तैयार कर लिया था। अब वह पुलिस में भेजे गये अपने पत्र के उत्तर की प्रतीक्षा में था। इस अवधि में बन्नो मुझसे कई बार मिली थी। परन्तु उसके मुखमंडल पर इन

दिनों कठोरता के चिन्ह उभरते से दृष्टिगत होने लगे थे। फिर भी जहाँ तक उससे मेरा संबंध था, उसमें किंचित मात्र भी परिवर्तन नहीं हुआ था। बल्कि उसके प्रेम में आजकल नित्य प्रति कुछ-न-कुछ बढ़ोत्तरी ही होती जा रही थी। उसने दो तीन-बार मुझको डाकुओं के नजरबंदी से भाग जाने का भी अवसर दिया। परन्तु मैं ऐसा नहीं कर सका। अपने प्राण बचाने के लोभ में उसो जैसी निश्छल हृदय की एक युवती के प्यार तथा विश्वास की मैं हत्या नहीं कर सकता था। यह मेरे जीवन का पहला प्यार था जिसमें मुझे किसी तरह का धोखा नहीं हुआ था।

अंत में वह दिन भी आया जिस दिन पुलिस विभाग का एक गुप्तचर जम्पा के यहाँ सरकार की एक चिट्ठी दे गया। वह सरकारी पत्र जिस समय डाकुओं के समक्ष पढ़कर सुनाया गया। उनके दल में एक बौखलाहट उत्पन्न हो गयी और वे भूखे भेड़ियों की तरह आपस मे ही लड़ने तथा कट मरने के लिये तैयार हो गये। सरकार उनसे बिना किसी शर्त के आत्मसमर्पण कराना चाहती थी। अपने किये गये समाज-विरोधी कार्यों की सजा उन्हें किसी तरह भी भोगनी थीं और सरकार इस विषय में उनसे कोई रियायत नहीं करना चाहती थी। पत्र के अंत में लिखा था कि सरकार उनकी सजा में कुछ रियायत कर सकती है,। पूर्ण चिट्ठी सुन लेने के पश्चात् प्रत्येक डाकू की इच्छा थी कि मेरा सिर धड़ से अलग कर दिया जाय और यह कार्य उनके द्वारा ही सम्पन्न हो। सभी उस समय जम्पा की ओर ही टकटकी लगाये देख रहे थे। कुछ डाकुओं की यह भी राय थी कि उस दिन मेरा

सिर काट कर शिविर थाने में भेज दिया जाय। परन्तु न जाने किस कारण से उस दिन मेरी हत्या का कार्यक्रम स्थगित कर दिया गया। दूसरे दिन मैं बड़े सबेरे ही दो डाकुओं द्वारा हाथ-बांधे जम्पा के समक्ष उपस्थित किया गया। मैंने देखा कि दस्युराज की आँखो से उस समय चिनगारियाँ निकल रही है। उसने बड़े ध्यान से एक बार मेरी ओर देखा और दूसरे ही क्षण घृणा से दूसरी ओर अपना मुँह फिरा लिया। उसके संकेत पर तत्काल ही मेरी आँखो पर पट्टी बाँध दी गयी और जम्पा ने गरज कर आदेश दिया कि—मुझे पहाड़ की चोटी पर ले जाकर गोली से उड़ा दिया जाय। उसने मेरे सिर को ले जाकर शिविर थाने में फेंक आने का कार्य भार बन्नो को दिया।

भय के मारे मेरे प्राण सूख गये। आँखो पर पट्टी बाँधे जाने के पूर्व मैंने एक बार बड़ी आशा से चारों ओर देखा। परन्तु बन्नो उस समय वहाँ उपस्थित नहीं थी। अब मुझे यह निश्चित-सा हो गया कि आज का दिन ही मेरे जीवन का अंतिम दिन है।

डाकुओं ने जब मुझे बध-स्थल पर ले जाकर खड़ा किया और मुझे बुरी-बुरी गालियाँ देते हुए अपनी राईफलों का मेरे सिर पर निशाना लगाया तो उस समय न जाने किधर से बन्नो वहाँ आ पहुँची और डाकुओं को अपनी राईफलें नीचे कर लेने का आदेश दिया। उसने तुरन्त मेरी आँखों की पट्टियाँ खोल कर फेंक दी और ज्योंही उस चट्टान से नीचे समतल भूमि पर पहुँची कि डाकूओं के पड़ाव की ओर एकएक बड़े जोरों से गोलियों की गड़गड़ाहट प्रारंभ हो गयी। लगभग आधे घंटे

पुलिस और डाकूओं में संघर्ष हुआ और गोलियाँ चलती रहीं। जंगल के शान्त वातावरण में एक विचित्र कोलाहल उत्पन्न हो जाने के कारण कितने पशु-पंछी मारे डर के इधर-उधर भाग चले और मैं भी मारे भय के काँप उठा। धीरे-धीरे जब चारों ओर शान्ति स्थापित हो गयी तो मेरा भय कुछ कम हुआ। मैं इस समय भी पूर्ववत् धरती पर लेटा हुआ था। परन्तु थोड़ी ही देर के पश्चात् जब मेरी दृष्टि सामने की ओर गयी तो मैंने देखा कि सशस्त्र पुलिस के जवानों की एक टुकड़ी मेरी ओर बड़ी तेजी से बढ़ी चली आ रही है। मैं तत्काल उठकर खड़ा हो गया। पुलिस दल के उस टुकड़ी का नेतृत्व मेरे बड़े और छोटे साहब दोनों ही कर रहे थे। उनके साथ-साथ मेरा शिविर-सहायक भी था। बड़े साहब मुझे जीवित पाकर बहुत ही प्रसन्न हुए। उन्होंने मुझसे बतलाया कि किसी अज्ञात व्यक्ति ने मेरे वहाँ होने की सूचना उनको दी थी, जिसके आधार पर वे वहाँ आकर डाकुओं को बंदी करने तथा मुझे बचा लेने में सफल हुए थे। लगभग दो दर्जन अपने अन्य साथियों के साथ जम्पा भी इस समय पुलिस की हिरासत मे था। बड़े साहब से सारी बातें कर लेने के पश्चात् जब मैंने पीछे की ओर मुड़कर देखा, तो बन्नो वहाँ नहीं थी। शायद वह बहुत पहिले ही हमारी आँखें बचाकर वहाँ से गायब हो गयी थी। बन्नो की कुशलता पर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। इतने लोगों की आँखो में धूल झोंक कर उसके वहाँ से गायब हो जाने की कला सराहनीय थी।

बड़े साहब के पूछने पर मैंने डाकुओं के पड़ाव का सारा हाल तथा उनके द्वारा अपने प्रति किये गये बर्ताव का संक्षिप्त

विवरण उनको बतला दिया। मैंने बन्नो नाम की उस लड़की के विषय में भी उनसे सारी बातें बतलायीं। परन्तु अपने प्रति उसके झुकाव का भेद मैंने नहीं खोला। मैं इस समय तक पूर्ण रूप से जान गया था कि—'बन्नो ने ही पुलिस-शिविर-थाने में संदेश भेजकर मेरी प्राण रक्षा की है। उसके वहाँ से गायब हो जाने के कारण, मेरे मन में तत्काल यह शका उत्पन्न हुयी कि वन्नो अपने द्वारा किये गये डाकू-विरोधी कार्यों का शीघ्र ही कोई प्रायश्चित करना चाहेगी। इस प्रयास में वह अपने प्राणों की भी बाजी लगा सकती थी। और अंत में उसने ऐसा किया भी।

मै बड़े साहब के साथ जिस समय पकड़ें गये डाकुओं तथा जम्पा को लेकर शिविर में पहुँचा, उस समय अंधेरा हो चुका था। कई दिनों के डाकू-विरोधी अभियान में हमारे सिपाही थक कर चूर हो गये थे। अतः कैदियों की पूर्ण व्यवस्था कर उनकी देख-भाल के लिये शिविर के उन सिपाहियों को नियुक्त कर दिया गया, जो थाने के पहरे पर ही छोड़ दिये गये थे। सदर में कैदियों के लिये गाड़ी भेजने की खबर भेज दी गयी थी। परन्तु आठ घंटे के पूर्व उसके आने की कोई संभावना नहीं थी। अंत में शेष सिपाहियों को जो थके-माँदे थे विश्राम करने की छुट्टी दे दी गयी। बड़े-छोटे साहब भी थके होने के कारण तत्काल ही भोजन कर सो गये। मेरे आ जाने से वे भी अब निश्चित थे। कई दिनों तक डाकुओं के यहाँ कैद रहने तथा अनेक प्रकार के कष्ट उठाने के कारण मेरे अंग-प्रत्यग में पीड़ा हो रही थी। बन्नो के भाग जाने तथा उसके द्वारा कोई षड़यंत्र रचे जाने की संभावनाओं के कारण मेरे

हृदय में अनेक शंकाओं ने घर कर लिया था। अत: मुझे बहुत देर तक नींद नहीं आयी। फिर भी मैं सो जाने के प्रयास में लगा था। लगभग एक बजे रात में जब मैं गहरी नींद का आनंद ले रहा था, किसी के मादक-मधुर स्वाँसों की सुगंध पाकर मेरी आँखें एकाएक खुल गयीं। और मैंने चौंक कर ज्योंही ऊपर सिर उठाया, कि किसी के दो कोमल रस से भीगे होंठ मेरे होंठों से लग गये। रात के उस सघन अंधकार में भी मैं जान गया कि वह बन्नो है। मैंने बिना किसी संकोच और झिझक के पूर्ववत् अपना सिर नीचे कर लिया और बन्नो को खींचकर अपनी छाती से लगा लिया। बन्नो ने किसी प्रकार की भी आपत्ति नहीं की। कुछ क्षणों के पश्चात् जब मैंने अपने हाथ में बँधी घड़ी की ओर देखा, जिसका 'डायल' उस अंधकार में भी चमक रहा था, तो उस समय रात के तीन बजनेवाले थे। मैंने धीरे से बन्नो के कानों में, जो उस समय स्वर्गीय आनंद की प्रणय-गंगा में डुबकी लगाये थी, कहा—"तुम भी बंदी होने के लिए यहाँ आ गयी हो, बन्नो! तुम्हें मेरी सौगंध है, सवेरा होने के पूर्व ही यहाँ से चली जाओ। मैं बचन देता हूँ कि तुम यदि बची रही, तो हमारे प्रयत्नों से कानून तुम्हारा कुछ भी बिगाड़ नहीं सकेगा। और शीघ्र ही हम दोनों एक दूसरे के साथ पति और पत्नी की तरह रहने लगेंगे।"

बन्नो मेरी बातों को सुनते ही मुझसे और अधिक लिपट गयी तथा अपने कठोर उरोजों से मेरे वक्षस्थल में एक बार बड़े जोरों से गुदगुदी उत्पन्न कर के बोली—"सचमुच, तुम अपने पत्नी के रूप में मुझे स्वीकार कर लोगे!"

"हाँ, मैंने तुम्हें बहुत पहिले ही अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार कर लिया है। इसमें अब तुम्हें तनिक भी संदेह नहीं होना चाहिये। हमारा तुम्हारा यह पवित्र संबंध अब कोई भी शक्ति भंग नहीं कर सकती। अब तो मैं ऐसा अनुभव करने लगा हूँ, कि प्रकृति ने हम दोनों को एक दूसरे के लिये ही उत्पन्न किया है। अन्यथा अनायास हमलोगों को एक दूसरे के प्रति इस तरह का सच्चा अनुराग क्यों होता। आश्चर्य तो यह है, कि हम दोनों ही एक दूसरे के विरोधी दो दलों के सदस्य हैं, जिसको एक दूसरे से मिलने की 'दो ध्रुवों की तरह' कोई कल्पना भी नहीं कर सकता।" मैंने एक स्वांस में ही बन्नो से सब बातें कह गया।

बन्नो मेरी बातों को सुनकर निहाल हो गयी और उसने एक बार अपनी सारी शक्ति लगाकर मेरे हृदय में समा जाने की चेष्टा की। मैंने भी ऐसा अनुभव किया कि हम दोनो उस समय एकाकार हो गये हैं।

परन्तु तत्काल ही बन्नो का बंधन ढीला पड़ने लगा। और एकाएक वह उठ कर बैठ गयी। उसने एकबार बड़े जोरों से एक लम्बी स्वांस खींचा और मुझे झकझोर कर कहा—"निर्मोही, तुमने इस बात को मुझसे पहिले क्यो नहीं बतला दिया मैंने इसके लिये तुम्हें कई बार संकेत और अवसर भी दिये, फिर भी तुम चुप्पी साधे रहे। इतना तो मैं अवश्य समझ रही थी कि मेरा बन्दी होने के कारण लज्जा-वश तुम अपने हृदय की कोई बात मुझसे छिपा रहे हो। परन्तु इसे तुम संकेतों द्वारा भी तो मुझे समझा सकते थे। अब तो

बहुत विलम्ब हो चुका है।" उसने पुनः एक दीर्घ निःश्वास लिया।

बन्नो की रहस्यमयी भाषा और उसके हृदय की छिपी बातों को समझने की चेष्टा करके भी मैं उस समय नहीं समझ पाया। फिर भी मैंने उसके द्वारा कही गयी बातों का समर्थन किया और स्वीकार किया कि—"मैं अपना हृदय बन्नो को उसी दिन दे चुका था, जिस दिन सर्वप्रथम उससे मेरी भेंट हुयी थी। मुझे इस बात को प्रकट करने का पूर्ण अवसर नहीं मिला, अतः मैं मौन था। बन्नो के सम्पर्क में जब मैं आया, उस समय मैं उसका बंदी था और कोई भी स्वाभिमानी पुरुष किसी स्त्री के कैद में पड़ कर यदि कोई बात स्वीकार करता है तो उसका पुरुषत्व कलंकित होता है और भविष्य में एक दूसरे के प्रति प्रेम स्थायी नहीं हो पाता। यह बात दूसरी है कि जब एक बार स्त्री-पुरुष में प्रेम हो जाता है और दोनों एक दूसरे को आत्म समर्पण कर देते हैं तो जीवन भर दोनों को एक दूसरे का बंदी बने रहने में ही आनंद का अनुभव होता है।"

बन्नो अब अपने को रोक नहीं सकी और उसने बड़े जोर से हँसते हुए कहा—"इस समय भी तो तुम मेरे बंदी हो। फिर तुमने अपने मन के भेदों को मुझसे क्यों प्रकट किया? खैर, आज की रात हमारे जीवन की सबसे मधुर रात है, क्योंकि तुमने आज मुझे खुलकर स्वीकार किया है और मेरे संदेहों का अंत कर दिया है। आज सचमुच तुम सही अर्थ में मेरे बंदी हो। अब मैं तुम्हें जीवन पर्यंत अपने कारागार में बंद रखूँगी।"

बन्नो की रहस्यमयी बातें जब पूर्णरूप से मेरे मस्तिष्क में नहीं समा सकी, तो मैंने उससे सारी बातें स्पष्टरूप से प्रकट करने का अनुरोध किया और बदले में जम्पा को छोड़ देने का भी उससे बचन दिया।

बन्नो, अबकी बार ठहाका मार कर हँसी और मैंने तत्काल उसके मुख पर हाथ रख कर उसे धीरे-धीरे बोलने को कहा। परन्तु उसने अपने मुँह पर से मेरे हाथों को हटा कर और भी जोर से बोलते हुए कहा—"चिन्ता मत करो, इस समय मेरी हँसी को सुनने वाला तुम्हारे शिविर थाना में कोई भी नहीं है। जम्पा भी अब अपने दल के साथ पड़ाव पर पहुँच गया होगा। तुम्हारे सभी सिपाही डाकुओं की जगह हवालात मे हाथ-पाँव बाँधकर डाल दिये गये हैं। जम्पा की तो इच्छा थी कि सभी को गोलियों से उड़ा दिया जाय, परन्तु मैंने उसको अनुनय-विनय कर के किसी तरह मनाया और किसी तरह की खून-खराबी किये बिना ही मेरी योजना सफल हो गयी है।"

बन्नो की बातें सुनकर मेरा हृदय एकाएक धड़कने लगा और चुपचाप मैं उसकी बातें सुनता रहा। वह कहते जा रही थी—"यदि इसी तरह पुलिस भी अपना डाकू-विरोधी अभियान बिना खून-खराबी के, अपने कौशल से सफल बनाने की चेष्टा करे तो कितनी अच्छी बात हो।" बन्नो की सारी बातें सुनकर मुझे ऐसा ज्ञात होने लगा, मानो मैं कोई स्वप्न देख रहा हूँ। पुलिस के इतने सशस्त्र जवानों के बीच से जम्पा का निकल जाना कठिन ही नहीं, सर्वथा असंभव

था। अतः जब मुझे बन्नो की बातों पर विश्वास नहीं हुआ तो एकबार पुनः मैंने उससे धीरे से पूछा—"क्या ये सारी बातें सच है बन्नो!" बन्नो ने पुनः बड़ी निर्भिकता से उत्तर दिया—"मैंने पहिले ही कह दिया है कि धीरे-धीरे बोलने की कोई आवश्यकता नहीं। इस समय तुम्हारे पुलिस शिविर थाने में केवल वही दोनों अफसर मुक्त हैं। परन्तु वे भी नशे में इतने चूर हैं कि उनके कल आठ बजे दिन के पूर्व होश में आने की कोई आशा नहीं। जिस समय मैं तुम्हारे पास आयी, उसके पूर्व ही मैंने उन लोगों को भी टटोल कर देख लिया था।" बन्नो की बातें सुनकर मेरे शरीर में कम्पन उत्पन्न हो गया। उस समय कोई यदि मेरे किसी भी अंगको काट देता तो उससे एक बूँद भी लहू नहीं गिरता। मैं कुछ समय तक हक्का-बक्का सा बना उसी अवस्था में बैठा रहा, परन्तु तत्काल ही मैंने सँभल जाने की चेष्टा की और सोचने लगा—"आखिर बन्नो कोई मानवी है अथवा देवी, जो असंभव को भी संभव कर देती है। इसे कोई दैवी बल अवश्य प्राप्त होगा अन्यथा मेरे इतने सशस्त्र सिपाहियों को इस तरह निष्क्रिय बना, डाकुओं को छुड़ा लेने में यह कभी-भी सफल नहीं होती।"

अंत में बन्नो की बातों पर जब मुझे पूर्णरूप से विश्वास नहीं हुआ, तो हाथ में टार्च लेकर मैं बाहर निकला। शिविर थाने के बाहर चारों ओर अब भी गैस बत्तियों का प्रकाश फैल रहा था। परन्तु कहीं कोई पहरे का सिपाही वहाँ मौजूद नहीं था। जब मैं हवालात की ओर गया और उसे देखा तो पता चला कि सचमुच उसका फाटक टूटा पड़ा है।

डाकुओं का वहाँ चिन्ह तक शेष नहीं था। अब मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि बन्नो ने हमसे सारी बात सच-सच बतलायी है अत: मैं पुन: अपने खेमें में लौट आया और अपनी चारपायी पर बैठ गया। इस समय तक बन्नो ने मेरे खेमे के अंदर प्रकाश कर दिया था। अब रात के चार बज रहे थे और शीघ्र ही प्रभात होनेवाला था। धीरे-धीरे जब मेरा ध्यान उस घटने के कठिनायी की ओर गया और जब मैंने उसे अपने विभागीय दृष्टिकोण से सोचा तो यहाँ भी मुझे बन्नो के बुद्धि की सराहना करनी पड़ी। यदि डाकू हमारे अतिरिक्त सभी को बाँध कर ले गये होते तो मेरे जेल जाने में कोई संदेह नहीं रहता। और मुझपर डाकुओं से मिले रहने का आरोप अवश्य ही थोप दिया जाता। इस अवधि में मुंशी सुजानसिंह ने मेरे तथा बन्नो के प्रेम की अनेक मनगढ़ंत बातें अफ़सरों के कानों तक पहुँचा भी दिया था। यदि सुजानसिंह की चली होती और मैं अपनी दैनन्दिनी भरने से चूक जाता तो वह मुझे डाकुओं का जासूस भी सिद्ध कर देता। मैंने मन-ही-मन सोचा कि बन्नो ने शायद यही सोचकर मेरे अफसरो को गिरफ्तार नहीं किया है। मेरे पूछने पर उसने इस बात को स्वीकार भी कर लिया। बन्नो को प्रभात होने के पूर्व ही डाकुओं के पड़ाव पर पहुँच जाना था। उसके कुछ साथी पुलिस शिविर थाने के निकट ही जंगल से उसे बार-बार सांकेतिक शब्दों द्वारा सावधान भी कर रहे थे। परन्तु मैंने बन्नो को रोका और अपनी सारी शंकाओं को समाधान करने का उससे अनुरोध किया। पहिले तो वह डाकुओं के छुड़ाने का भेद बतलाने से कुछ हिचकिचायी, परन्तु मैंने ऐसा अनुभव किया कि वह अब मेरी किसी बात को भी टालना

नहीं चाहती है। अतः उसने उस रात में घटित सारी घट-नाओं को आद्योपांत कहना प्रारंभ किया—"डाकुओं के पडाव पर घेरा डालने के लिए प्रस्थान करने के बाद पुलिस-शिविर में केवल दस सशस्त्र सिपाही बचे गये थे। इतने सिपाही उस समय पुलिस-शिविर की रक्षा के लिए पर्य्याप्त भी थे। जब उन्हें डाकुओं के सारे गिरोह के पकड़े जाने की खबर मिली तो वे वहुत ही प्रसन्न हुए। अब उन्हें उस क्षेत्र में किसी प्रकार का भय नहीं था। अतः मनोरंजन का वहाँ किसी प्रकार का अन्य साधन नहीं रहने के कारण उनलोगों ने अपने साथियों में से दो को पहरे पर नियुक्त कर दिया था और शेष आठ, बैठ कर ताश खेल रहे थे। अभी पकड़ गये डाकुओं को शिविर थाने तक आने में विलम्ब था अतः वे पूर्णतया निश्चिंत थे। इतने ही में उनके यहाँ पुलिस के बड़े साहब का संदेश लेकर एक सिपाही पहुँचा। उसने गिरफ्तार डाकुओं की संख्या अधिक और उन्हें यहाँ तक ले आनेवाले पुलिस के जवानों की संख्या कम बतलाकर, उनको भी अपने साथ चलने के आदेश से अवगत कराया। उस समय की कठि-नायी को दूर करने के लिये पहरे पर खड़े दो सिपाहियो के अतिरिक्त बाकी आठ सिपाहियों को उसने तत्काल अपने साथ चलने को कहा। बात भी अविश्वास करने योग्य नही थी। अतः मुंशी ने ताश खेलते हुए आठों सिपाहियों को संदेशवाहक के साथ चल देने की आज्ञा दे दी। उस समय मुंशी सुजानसिह ही वहाँ का सबसे बड़ा अफसर था। संदेश ले जाने वाला पुलिस का सिपाही नहीं, बल्कि पुलिस की वर्दी में, वह मेरा जासूस था, जो कुछ दिन पूर्व पुलिसविभाग में कार्य कर चुका था। उस समय पुलिस शिविर थानों के सिपाही बरा-

वर बदलते रहते थे, अतः हाल में आये लोग आपस में एक-दूसरे को पहिचान नहीं पाते थे। यही कारण था कि हमारे जासूस को भी कोई पहिचान नही सका। और उसने अपना कार्य सम्पादन बड़ी सरलता से कर लिया।''

अब प्रभात होने में कुछ भी विलम्ब नहीं था, अतः बन्नो, बाकी घटने को शीघ्रही मुझे सुना देना चाहती थी। शायद इसी लिये उसने कोई दूसरा प्रसंग नहीं छेड़ा।

उसने आगे बतलाया कि—''पुलिस के वे आठों सिपाही जिस समय एक गलत रास्ते से हमारे आदमी के पीछे-पीछे एक घनघोर जंगल में पहुँच गये, जहाँ कुछ चुने हुए डाकू पहिले से ही एक निर्दिष्ट स्थान पर छिपे थे, तो उनपर एका-एक घेरा डालकर उन्हें बंदी बना लिया गया। उनकी वर्दी के साथ-साथ उनके सारे हथियार भी डाकुओं ने अपने कब्जे में कर लिया। बाद में पुलिस के सिपाहियों को पेड़ों में बाँध कर उनपर पहरे की पूर्ण व्यवस्था कर दी गयी। अंत में अपने आदमियों को पुलिस की वर्दी में उनसे छीनी गयी राईफलों के साथ में मैं उस मार्ग की ओर चल पड़ी जिधर से गिरफ्तार डाकूओं के साथ जम्पा को पुलिसवाले ला रहे थे। परन्तु जब मुझे पता चला कि पुलिस दल ने अपने संभावित मार्ग को बदल दिया है तो मैंने अपने आदमियों को शिविर थाने की ओर भेज दिया। मैं स्वयम् कुछ ऐसे छापामार डाकूओं के साथ पीछे रह गयी जिन्हें जंगली क्षेत्रों में युद्ध करने की पूर्ण शिक्षा दी गयी थी और जो इस कला में अच्छी तरह पटु हो चुके थे।

जम्पा को पुलिस के चंगुल से मुक्त करने की पूरी व्यवस्था कर मैंने संतोष की स्वांस ली और पुलिस शिविर थाने के निकट ही पेड़ों की ओट में छिप गयी।

संध्या होते-होते जब पुलिस के जवान और अफसर जम्पा के साथ शिविर के निकट पहुँचे, तो हमारे जवान भी पुलिस की वर्दी में उनसे जा मिले। उस समय पुलिस दल का प्रत्येक अफसर और सिपाही अपनी जीत की खुशी में आत्म-विभोर हो रहा था। साथ-ही-साथ सभी अपनी-अपनी बहादुरी की डींग भी एक दूसरे से हाँक रहे थे।

पुलिस शिविर थाने पर पहुँचते ही पुलिस के अधीक्षक एवं उनके सहायक अधीक्षक थके होने के कारण तुरत अपने खेमे में आराम करने के लिये चल दिये। उन लोगों ने सुजान सिंह पर डाकूओं की व्यवस्था करने तथा उनपर सुदृढ़ पहरा लगाने का सारा भार छोड़ दिया।"

बन्नो ने आगे बतलाया कि—"उस समय में ही एक ऐसा व्यक्ति था जो डाकुओं को हवालात में बंद करने में अपने सिपाहियों को पूरी मदद दे रहा था। मेरी सतर्कता के कारण बन्नो की परेशानी कुछ समय के लिए बढ़ गयी थी परन्तु उसने धैर्य से काम लिया। लगभग तीन घंटे तक डाकुओं की एकबार पुनः तलाशी होती रही और उन्हें ठीक-ठीक देख भाल कर जब बांसो के फट्टो से बने हवालात में बंद किया गया तो सुजान सिंह ने मुझे सूचना दिया—"सब कुछ ठीक है हजूर, तब मैं भी सोने चला गया।

डाकुओं के शिविर तक जाने, उनसे संघर्ष करने और पुनः एक लम्बी राह तय कर लौटने के कारण पुलिस के सभी सिपाही थकान से चूर थे। अतः उनलोगों ने भी झटपट वर्दी उतारा और जहाँ-तहाँ लेट गये। सिपाहियों के वेष में हमारे आठ आदमियों पर ही उस समय शस्त्रागार तथा हवालात की देख-रेख का भार सौंपा गया था। अतः हमारे आदमियों ने बड़ी सरलता से दोनों पर अधिकार जमा लिया।

लगभग बारह बजे रात को जब पुलिस शिविर थाने में सन्नाटा छा गया तो मैं भी वहाँ पहुँच गयी और अपनी योजना के अनुसार सभी डाकुओं को बंधन मुक्त कर दिया। जो कुछ भी समय लगा वह केवल उनकी हथकड़ी और बेड़ियों को तोड़ने में ही लगा। जम्पा उस समय भूखे केशरी की तरह भयानक हो रहा था। मुझे देखते ही ऐसा ज्ञात हुआ मानों वह हम पर टूट पड़ेगा। परन्तु मैंने संकेत द्वारा उसे शान्त रहने के लिए समझाया। उसने मेरी बातें मान ली और मेरे आगे के कार्यक्रमों में मुझे सहायता पहुँचाने लगा। उस समय वह एक छोटे बालक की तरह मेरा अनुसरण कर रहा था। अंत में मैंने हवालात से मुक्त डाकू तथा अपने साथ लाये अन्य साथियों को पुलिस के सारे अस्त्र-शस्त्र सौंप दिये और पुलिस के जवानों का हाथ-पाँव बाँध कर उन्हें हवालात में अपने आदमियों के स्थान पर बंद कर दिया। उनके मुँह में कपड़ा ठूँस दिया गया जिससे वे किसी तरह का शोर नहीं मचा सकें।"

बन्नो समय का ध्यान कर अविराम उस रात की पूरी कहानी कहते जा रही थी—"पुलिस-शिविर से कुछ दूर

जाने पर मैंने जम्पा को सारी बातें बतला दी, तो हमारी योजना की सफलता पर उसे बहुत ही आश्चर्य हुआ और हमसे वह इतना प्रसन्न हुआ जितना वह अपने जीवन में कभी प्रसन्न नहीं हुआ था। परन्तु अचानक जब उसने पुलिस अफसरों को अपने साथ-साथ बाँध कर लेते चलने का विचार किया तो मेरी परेशानी कुछ बढ़ गयी। मैं किसी-किसी तरह उसके विचारों को बदलने में सफल हो पायी हूँ। क्योंकि मैं जानती थी कि इसबार वह तुमको देखते ही जल-भुन कर खाक हो जायेगा और अवश्य ही तुम्हें अपने हाथों गोली मार देगा। ऐसा अवसरों पर वह किसी की भी बात नहीं मानता है। कहीं ऐसी दुर्घटना हो जाती तो मेरे सारे किये कराये पर पानी फिर जाता।"

मुझे बन्नो की आश्चर्यजनक बाते सुनकर और पुलिस को मात दे देनेवाली उसकी सारी योजना की कल्पना कर एकाएक रोमांच हो आया।

इन सारी घटनाओं का कल क्या परिणाम होगा, उसे-भगवान के सहारे छोड़ जब बन्नो से मैंने उसके अगले कार्यक्रमों को पूछा तो उसने उत्तर दिया—"कि कल के बारे में वह भी अंधकार में है।"

इस समय सूर्य की लाल किरणें पहाड़ों के ओट से बाहर निकलने ही वाली थी परन्तु कुहरे के कारण अब भी पास की कोई वस्तु दिखलायी नहीं दे रही थी। अतः एकाएक बन्नो उठकर वहाँ से चलने को तैयार हो गयी। जाते समय उसने

एकबार बड़ी लालसा से मेरे होंठों को चूम लिया और बिजली की तरह बड़ी फुर्ती से मेरे खेमें से बाहर निकल गयी। बन्नो के जाते ही मुझे अनेक चिन्ताओं ने आ घेरा। फिर भी मैं बहुत देर तक बैठे-बैठे पुलिस शिविर की दुर्दशा को भूलकर बन्नो के विषय में अनेक बातें सोचता रहा। जब दिन का प्रकाश चारों ओर फैल गया और कुहरे का कही नामो-निशान नही रहा तो मैं झटपट खड़ा हुआ और दौड़ कर अपने साहब लोगो के शिविर में पहुँचा। अभी तक दोनों आदमी नींद में खर्राटा ले रहे थे। मैंने दोनों आदमियों को झकझोर कर जगा दिया और उनसे बाहर निकल कर सारी घटनाओं को देखने का अनुरोध किया।

अचानक मेरे द्वारा इस तरह जगाये जाने के कारण मेरे दोनों अफसर एकाएक घबड़ा गये और झटपट मेरे साथ बाहर निकले।

उस समय पुलिस-शिविर की दुर्दशा तथा अपने आदमियों को बेबसी की हालत में बंद देखकर हमलोगो की जो दशा हुयी उसका वर्णन नही किया जा सकता। उस समय मैं रात में बन्नो से मिलन की अपनी सारी बाते भूल गया। कुछ समय तक हम सभी लोग किंकर्तव्य-विमूढ़ होकर खड़े रहे और अंत में अपने सिपाहियों को बंधनमुक्त करने का कार्य प्रारंभ कर दिया। सबसे बाद में हमलोगों की दृष्टि मुंशी सुजानसिंह पर पड़ी, जो एक चौकी के नीचे संज्ञाहीन पड़ा था। उसके चेहरे पर भय के कारण कालिमा छा गयी थी। उसने अपनी आँखों से डाकुओं द्वारा किये गये सभी काण्डों को देखा था और किसी-किसी तरह चौकी के नीचे छिपकर प्राण रक्षा

की थी। होश में आने के पश्चात् जब वह अपनी आँखों देखे हाल का वर्णन बड़े साहब से करने लगा तो उसकी मुख-मुद्रा तथा भाव-भंगिमायें देखते ही बनती थीं। वह डाकुओं को बार-बार जादूगरों के नाम से संबोधित कर रहा था। हम लोगों को वैसी कठिन परिस्थिति में भी उसकी बातें सुन-कर हँसी आ गयी। परन्तु किसी तरह हमलोगों ने अपनी हँसी को संभाला। फिर भी हम अपनी हँसी को उस समय एकदम नहीं सँभाल सके जब सुजानसिंह ने बड़े साहब के पूछने पर डाकुओं को आकाशमार्ग से वहाँ उतरते बतलाया। उसने यह भी कहा कि—"डाकू एक साथ ही आसमान से उतर कर हमारे सभी सिपाहियों को एक गठरी की तरह बाँध दिये और उनके सारे हथियार और वर्दी लेकर चले गये।" बड़े साहब सुजानसिंह की अन्तिम बात पर बहुत देर तक हँसते रहे।

जब हम लोगों ने अपने सारे सिपाहियो की गिनती कराया तो उसमें से आठ कम निकले। हमारे शिविर थाने में उस समय एक भी अस्त्र-शस्त्र नहीं बचा था। अतः सारी घटने की खबर तुरत ही सदर भेज दी गयी। उस समय हमारे सभी जवान अपनी मूर्खता भरी पराजय से बहुत ही लज्जित थे। फिर भी वे अपने आठ खोये हुए साथियों की खोज मे निकल पड़े और कुछ ही दूर जाने के पश्चात् उन्हें जगल मे पेड़ों से बँधा पाया।

जब हमारे सभी जवान एक साथ इकत्रित होकर बड़े साहब से मिले और सबसे बारी-बारी पूछ-ताछ प्रारंभ हुई तो सब लोगो ने यही बतलाया कि जम्पा में कोई अद्भुत दैवी

शक्ति है। अतः पुलिस के लिए उसे पराजित करना संभव नहीं। अकेले मैं ही जम्पा के सारे कार्य-कलापों से अवगत था और उस रात की सारी घटनायें मुझे बन्नो द्वारा ज्ञात हो चुकी थी। इसलिए सिपाहियों की बातों का मुझपर कोई प्रभाव नहीं था। बड़े साहब हमारी बातों से संतुष्ट नहीं हुए और उसपर कोई ध्यान नहीं दिया। कई बार मेरे मन में आया कि उनसे मैं सारा भेद खोल दूँ परन्तु मुझे इस संबंध में अभी कई महत्वपूर्ण कार्य करने थे तथा जम्पा से इस काण्ड का बदला भी चुकाना था अतः मैं मौन रहा। अब मैं भलीभाँति जान गया था कि इस समय जम्पा के दल में सबसे चतुर बन्नो ही है जो स्वभाव से डाकू नहीं। परन्तु डाकुओं के साहसिक कार्यों एवं वीरता में उसकी रुचि थी। कोमल स्वभाववाली एक युवती होकर भी उसे डाकुओं के साथ रहते-रहते कठोर कष्ट सहने की आदत पड़ गयी थी। फिर भी उसके हृदय मे सुकुमारता के साथ-साथ नारी हृदय में बहनेवाला वह मधुर स्रोत अब भी वर्तमान था, जो कठोर चट्टानों को तोड़कर नीचे मैदान में उतरते ही लाख-लाख सूखे कंठों को आर्द्र कर देता है तथा साधारण कूप जल से तो कहीं भी अधिक शीतल और मीठा होता है। इसके अतिरिक्त ऊँचे पहाड़ों को तोड़ कर एक बार धरती पर बहनेवाली नदी कभी सूखती नहीं और पीछे की ओर भी नही लौटती। नारी स्वभाव के विपरीत कठिन तथा कठोर कर्मों में अनुरक्त बन्नो की भी मेरे प्रति अनुराग जगाने की वही स्थिति थी। वह मुझे प्यार करती थी और मुझे उसका प्यार अनायास प्राप्त हो गया था। हम दोनों एक ही विचार रखते हुए भी दो राहों पर चलनेवाले यात्री थे और दोनों अपने सिद्धान्तों के कट्टर पोषक भी। बन्नो मुझे

चाहती थी। मेरे लिए वह सब कुछ त्याग सकती थी। यहाँ तक कि उसने मेरी रक्षा के लिए अपने प्राणों की भी बाजी लगा दी थी। फिर भी उसे डाकुओं से भी पूरी-पूरी सहानुभूति थी। और वह उस सहानुभूति को किसी मूल्य पर खोना नहीं चाहती थी। डाकू कभी भी उसके प्रति अपने विचारों को बदलें और उसके चरित्र पर ऊँगली उठावें, यह उसे पसन्द नहीं था। मै इस समय ऐसा अनुभव करने लगा था कि बन्नो के बिना मेरा जीवन अधूरा और अपूर्ण ही रह जायेगा। अभी तक वह हमारे अत्यन्त निकट होकर भी हमसे बहुत दूर थी। यद्यपि बडी गहराई तक सोचते-सोचते अब मैं उसके विचारों का कायल हो चुका था। फिर भी डाकू धरती के अभिशाप हैं और मानवता के घोर शत्रु भी इस बात को मैं अपने मन से नहीं निकाल सका। हाँ, यह बात दूसरी थी, कि डाकुओ में भी भले लोग हैं, जिस तरह भले लोगों में भी डाकू। इस समय मेरे समक्ष दो ही प्रश्न मुझको घेरे खड़े थे जो एक दूसरे के प्रतिकूल थे और किसी तरह बैठाने पर भी दोनों का मेल नहीं बैठ रहा था। एक ओर तो मुझे डाकुओं का मूलोच्छेदन करना था और दूसरी ओर बन्नो को प्राप्त करना। परन्तु दोनों बातों का एक साथ किसी तरह भी मेल बैठना असंभव-सा प्रतीत हो रहा था। बन्नो को बिना परास्त किये डाकुओं पर विजय पाना जिस तरह असंभव था उसी तरह डाकुओ के रहते बन्नो को प्राप्त करना भी।

मन में उठते विविध विचारों के संघर्ष मे कई महीने बीत गये। इस बीच पुलिस शिविर थाने के सभी पुराने सिपाही बदल दिये गये और उनके स्थान पर विभिन्न जगहों से पुलिस

के चुने हुए जवान बुलाये गये। ऊपर से हमारे भी स्थानान्तरण का आदेश था, और मेरे विभाग द्वारा मेरे आचरण मे भी संदेह प्रगट किया गया था। परन्तु हमारे बड़े साहब ने वहाँ से मेरे हटाये जानेका विरोध किया। लगभग दो-तीन माह तक यही संघर्ष चलता रहा। अन्त में हमारा वहाँ रखा जाना हमारे निजी तथा विभागीय दोनों ही दृष्टिकोण से अनुचित समझा गया।

जिस समय हमारे स्थान पर नियुक्त इंस्पेक्टर ने मेरा कार्य भार संभाला और मेरा सामान बाँधा जाने लगा, उस समय मुझे ऐसा ज्ञान होने लगा जैसे मैं कारावास में भेजा जा रहा हूँ। जो दशा अपने प्रियजन और परिवार तथा गाँव को छोड़कर कहीं निर्वासित किये जानेवाले व्यक्ति की होती है, वही दशा उस समय मेरी भी हो गयी। शिविर थाना छोड़ने के पूर्व कम-से-कम एकबार भी मैं बन्नो से मिल लेना चाहता था। शायद इसीलिये मेरी ऐसी इच्छा होने लगी थी कि भगवान करे कोई इस तरह की घटना हो जाय, जिससे मुझे वहाँ दो चार दिन भी रुक जाना पड़े। मेरी दशा इस समय उस नायिका जैसी थी, जो अपने परदेश जाते पति को रोकने के लिए ऐसी भी कल्पना करने लगती है कि—'कुछ घड़ी के लिए सूर्योदय टल जाता तो अच्छा होता।' जो सर्वथा असंभव है। अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए तो प्रेमी लोग बादल तक को प्रलय का दृश्य उपस्थित कराने के लिए निमन्त्रित कर बैठते हैं। परन्तु भगवान शायद किसी की भी ऐसी इच्छा पूरी नहीं करता।

सन्ध्या होने के कुछ ही पूर्व एक जीप नित्य डाक लेकर सदर जाया करती थी। उसी जीप से उस दिन मेरी वहाँ से बिदायी थी। मैने एक बड़े ही निराशपूर्ण वातावरण में सदर के लिए प्रस्थान किया। मेरे साथ पुलिस के दो सन्त्रियों के अतिरिक्त एक मोटर का चालक भी था। जिस समय मेरी जीप उस घनघोर वनखण्ड को पार कर रही थी, जहाँ जंगली पशु-पक्षियों के अतिरिक्त कोई भी रात में नही निकलता, तो अचानक मेरी दृष्टि, मोटर के तीव्र प्रकाश में, बीच मार्ग पर खड़े तीन व्यक्तियों पर पड़ी। मैंने समझा, शायद कोई भूला-भटका हुआ यात्री दल किसी मोटर के आने की प्रतीक्षा कर रहा है और विपत्ति से छुटकारा पाना चाहता है। परन्तु तत्काल ही मेरी धारणा बदल गयी और मुझे कुछ-कुछ शंका होने लगी। जब मेरी जीप उनके निकट पहुँच गयी तो मैंने चालक को उसे रोक देने के लिए कहा। जब जीप रुक गयी तो मैंने हाथ के संकेत से उन लोगों को अपने निकट बुलाया और उनसे ऐसे संकटपूर्ण तथा भयानक स्थान में उतनी रात गये आने का कारण पूछा। कुछ क्षण तक उन लोगों ने मेरी बातों का कोई उत्तर नहीं दिया और आपस में एक दूसरे का मुँह देखते रहे। अन्त में उनमें से एक ने आगे बढ़कर मुझसे मेरा नाम पूछा। मेरा अपना नाम बता देने पर जब उसे यह निश्चित हो गया कि उन्हें जिसकी तलाश है वह व्यक्ति मैं ही हूँ तो उसने मुझे एक पत्र दिया। पत्र पढ़ते ही मै गाड़ी से उतर पड़ा और ड्राइवर तथा दोनों संत्रियों को वहीं रुकने का आदेश देकर उन तीनों के साथ जंगल में घुस गया। इस समय मेरे मन का बहुत कुछ बोझ हलका हो चुका था और मैं एक विचित्र प्रकार के स्फुर्ति का अनुभव करने

लगा था। वहाँ से थोड़ी दूर पर ही एक साफ-सुथरी झोपड़ी में दूर से ही मैंने देखा कि बन्नो दीपक के क्षीण प्रकाश में मेरी प्रतीक्षा कर रही है। मुझे देखते ही वह उठकर खड़ी हो गयी। मैंने देखा कि उसका मुखमण्डल जो सदैव कमल की तरह खिला रहता था, धूमिल हो गया है। उसके यत्र-तत्र बिखरे बाल और अस्त-व्यस्त लटें तथा अस्वस्थ-सा लगता शरीर देखकर ऐसा ज्ञात हो रहा था, मानों वह महीनो से बीमार हो। उसके अंग-प्रत्यंग की चपलता और शोखी का न जाने एकाएक कहाँ लोप हो गया था। उसके मुखमण्डल पर एक गहरी निराशा के भाव दिखलायी दे रहे थे। बन्नो की वह दयनीय दशा देख, मैं अपने को सँभाल नहीं सका और दौड़कर उसे अपने अंक में भर लिया। मुझको अब इस बात की तनिक चिन्ता नहीं रही कि मुझे इस प्रकार व्योहार करते देख कोई क्या समझेगा। मैंने उससे साहस कर पूछा—"बन्नो तुमने अपनी यह कैसी हालत बना ली है। तुम बीमार तो नहीं थी।" बन्नो ने मेरी बातों का कोई उत्तर नहीं दिया और थोड़ी देर में सिसक-सिसक कर रोने लगी। अन्त में जब मैंने उसके आँसुओं को पोंछते हुए कुछ बोलने को विवश किया, तो उसने किसी तरह अपने को संभाला और भरयि स्वर में बोली—"तुम यहाँ से जा रहे हो, और मुझसे मेरा हाल पूछते हो। तुम अपनी नौकरी और कर्तव्य के प्रति तो पूर्ण सजग रहते हो, साथ ही साथ उसके पालन में तनिक भी कोर कसर नहीं रखते। परन्तु तुमने कभी यह भी सोचा है कि तुम्हारे चले जाने के पश्चात् किसी की क्या दशा होगी। मुझे तुमसे ऐसी आशा कभी नहीं थी। आज तक तुम्हारे विषय में मैंने जो कुछ भी समझा था वह सरासर गलत निकला।"

बन्नो सारी बातें एक स्वांस में कह गयी और जब उसका गला भर आया तो फफक-फफक कर रोने लगी। अंत में सहारे के लिये उसने अपने सिर को मेरी छाती से टिका दिया। परन्तु इस अवस्था में वह अधिक देर तक नहीं रह सकी और अपने सिर को थोड़ी देर में ही मेरे वक्षस्थल से अलग हटा लिया तथा पुन: एक गहरे निराशा भरे स्वर में बोली—"जाओ, तुम्हें अब देर हो रही है। तुम्हारे जाने के पूर्व मेरी इच्छा थी कि एक बार तुमसे अवश्य मिल लूँ, वह आज पूरी हो गयी। अब मुझे कोई पश्चाताप नहीं होगा। हाँ, यदि मुझसे कोई जाने-अनजाने अपराध हो गया हो तो उसे क्षमा करना।"

बन्नो की मर्मभरी बातें सुनते ही मेरा हृदय एक बार हाहाकार कर उठा और सिर घूमने लगा। फलस्वरूप कुछ क्षणो में ही मैं संज्ञाहीन होकर धरती पर गिर पड़ा। जब मुझे चेतना हुयी तो मैंने अपने को बन्नो की गोद में पाया। वह विकल हरिणी की तरह उस समय चंचल हो रही थी और मुझे होश मे लाने का उपक्रम कर रही थी।

जब मैंने अपने को संभाल लिया और उठ कर खड़ा हो गया तो एक बार बड़े ध्यान से बन्नो के मुखमंडल की ओर देखा, जिस पर उस समय विषाद के बदले एक आभा और तेज छाया हुआ था। उसके हृदय में अब मेरे प्रति किंचित् मात्रभी संदेह नहीं था। इसलिये मुझे चेतना लाभ करते देख उसने कातर होकर कहना शुरु किया—"मैं इतनी अभागिन हूँ कि अबतक मुझसे किसी को भी सुख नहीं मिला है। अंतिम बार तुम्हारे सम्पर्क में आयी थी और विश्वास करने लगी थी कि मेरा समय बद-लेगा, परन्तु मेरे अभाग्य ने मेरा साथ नहीं छोड़ा और तुम्हें भी

मैंने इतना कष्ट दे दिया जितना शायद तुम्हें कभी जीवन में नहीं मिला होगा।" वह कुछ देर के लिये मौन हो गयी और मेरी आँखों में आँखें डाल कर मुझसे कुछ जानने की चेष्टा करती रही परन्तु जब मैं ज्यों का त्यों चुपचाप खड़ा रहा तो पुनः बोल उठी—"अब मेरी मृत्यु भी हो जाय तो मुझे कोई पश्चाताप नहीं होगा। मेरे जीवन की सारी अभिलाषाओं तथा मनोकामना को तुमने अल्प समय में ही पूरा कर दिया है। अतः मैं अपने को इस समय बहुत ही भाग्यशालिनी समझ रही हूँ।"

अभी बन्नो मुझसे बहुत कुछ कहना चाहती थी, परन्तु मुझसे अब मौन नहीं रहा गया और मैंने बीच ही में उसकी बातों को काटते हुए पूछा—"बन्नो, क्या तुम मेरे साथ नहीं चल सकती। यदि तुम तैयार हो जाओ तो नौकरी से त्यागपत्र देकर मैं यहीं से घर चल दूँ। तुम्हें पाकर आज मैंने सब कुछ पा लिया है। देर मत करो, शीघ्र बोलो।" बन्नो कुछ क्षण एक टक मेरे मुँह की ओर देखते रही और मैंने अनुभव किया कि कोई बात उसके कंठो तक आ-आकर रुक जाती है। इसलिए पुनः मैंने उसे झकझोर करकहा—"संकोच क्यों कर रही हो। बोलो ना।"

इसबार बन्नो कुछ गंभीर होकर बोली—'अब मेरी अभिलाषाओं का प्रश्न ही क्या रहा जिसे तुम मुझसे पूछ रहे हो। मैंने तो न जाने कब का तुम्हें आत्मसमर्पण कर दिया है। अब तो तुम्हारी इच्छाओं में ही मेरी इच्छा भी तिरोहित हो चुकी है। परन्तु मेरे कारण तुम्हारे सिर पर जीवन भर के लिए कलंक का टीका लगे यह मैं जीते-जी सहन नहीं कर सकती। अतः तुम अब जाओ, देर हो रही है। यह अंतिम बात जान

लो कि जब तक मैं जीवित रहूँगी, तुमसे एक क्षण के लिए भी अगग नही रहूँगी। मुझे तो जो चाहिये था वह मिल गया है और एकबार जब मैने उसे पा लिया है तो उसे किसी तरह भी खोना नहीं है।"

बन्नो में पुरुषों की वीरता तथा निर्भीकता के साथ-साथ नारी का सहज कोमल हृदय भी था। परन्तु उसमें अपने प्रेम के प्रति इतनी दृढ़ता तथा आत्मविश्वास भी होगा, इसकी मैं कल्पना भी नहीं कर सका था। इसीलिए मुझे उसकी बातों को मान जाना पड़ा। फिर भी मेरे हृदय पर उस समय क्या बीत रहा था, उसे वाणी व्यक्त नहीं कर सकती।

इस समय रात अधिक हो जाने के अतिरिक्त विलम्ब भी बहुत हो चुका था। जीप का चालक, भय अथवा किसी अन्य कारण से बार-बार गाड़ी का 'हार्न' बजा रहा था। जो मेरे लिये शीघ्रता करने का संकेत था, बन्नो मुझसे पहिले ही उठ कर जाने के लिये तैयार हो गयी। मैं अंतिम बार उसकी स्नेहभरी आँखों की ओर देखा जो स्पष्ट रूप से उसके हृदय की बेबसी को प्रगट कर रही थी। मैने दौड़कर उसे अपनी ओर खींचा और उसको अंक में भर लिया। बाद में हमारे होंठ बिना किसी प्रयास के ही आप से आप एक दूसरे से मिल गये और उस स्वर्गीय सुधा का तब पान हमलोग करने लगे जो आत्मा तथा मन की सारी शिथिलता को बहा देती है। बन्नो इस समय मेरे हृदय से इस तरह लिपटी हुयी थी मानों कोई उसे मुझसे छीन लेना चाहता हो। उसके कठोर, उन्नत वक्षस्थल में एक प्रकार का कम्पन उत्पन्न हो गया था,

लिखा था तथा मुझ पर इसके लिए दबाव भी डालना प्रारम्भ कर दी थी। परन्तु मैंने अभी तक इस सम्बन्ध में उन्हें कोई पत्र नहीं लिखा था। मैं दो एकबार माँ से सारी बातें बता देने का स्वंकल्प कर घर भी गया, परन्तु लज्जावश उसने इस सम्बन्ध में कुछ भी नहीं बता सका और वापस लौट आया। इस समय उनका स्वास्थ्य दिन, प्रति-दिन बिगड़ने जा रहा था और अब उनके जीर्ण शरीर के बहुत दिन तक चलने की सम्भावना भी नहीं थी। फिर भी मेरी इच्छा थी कि वे कुछ दिनों तक और बची रहें। अतः उनकी औषधि तथा उपचार में मैं पानी की तरह रुपया बहाने लगा। फलस्वरूप मेरे पास जो कुछ भी धन जमा था वह सब डाक्टरों तथा औषधि विक्रेताओं को भेंट हो गया और मेरी आर्थिक स्थिति अत्यंत बिगड़ गयी इस समय मेरे पास अपने निजी व्यय के लिए भी पैसा नहीं बचता था। मेरी इस दुर्दशा का सबसे बड़ा कारण मेरा अपने अधिकांश वेतन से उन सिपाहियों के परिवारों के लिए कुछ पैसा कटा देना था, जो डाकुओं द्वारा हमारे साथ रह कर मारे गये थे। और जिनके परिवार के भरण-पोषण के लिए सरकार द्वारा अभी तक कोई व्यवस्था नहीं की गयी थी। सरकार भले ही उनको भूल जाती, परन्तु मैं उन वीर सिपाहियों के बच्चे और विधवाओं को कैसे भूलता, जो मेरे लिए पग-पग पर गोली खाने को तैयार रहते थे।

माँ की बीमारी और उनके अपने जीवन से निराश हो जाने के कारण अब मुझ पर अपना विवाह कर लेने के लिए चारों तरफ से अत्यधिक दबाव पड़ने लगा था। वे अपने मृत्यु के पूर्व पुत्रवधू का मुँह देख लेना चाहती थी। और यही उनके जीवन की अन्तिम अभिलाषा थी।

इस बार जब छुट्टियों से लौटते समय मैं उनसे विदा लेने गया, तो उन्होंने बड़ी कातर दृष्टि से मुझको देखा और कहने लगी—'कि इसबार तुम्हारे घर लौटने पर मैं किसी तरह भी तुम्हारा विवाह कराये बिना नहीं मान सकती।" उन्होंने मेरे दूर के एक सम्बन्धी की बेटी से मेरा विवाह तय भी कर लिया था। लड़कीवाले इस संबंध में मुझसे कई बार पहिले ही मिल चुके थे। परन्तु बन्नो के पवित्र प्रेम-बन्धन को, जिसमे मैं बहुत पहिले ही बँध चुका था, तोड़ना मेरे लिये असंभव था। कभी-कभी तो मेरा ही मन मुझे धिक्कारने लगता और तब मैं ऐसा भी सोचने पर विवश हो जाता कि—"अपने स्वार्थ के लिए माँ की आज्ञा का उलंघन करना तथा उनकी इच्छा और ममता पर आघात पहुँचाना मेरे लिए नीचता की परा-काष्ठा होगी।" परन्तु किसी के पवित्र प्रेम और प्रेम के विश्वास पर आघात करना भी मेरे जैसे आदमी से जीते-जी संभव नहीं था। मन ने मुझे ढाँढ़स बँधाया। माँ के सामने मैं अपने विवाह की चर्चा करने तथा इस विषय पर वार्ता करने में संकोचवश असमर्थ था। अतः मैंने सोचा कि इस संबन्ध में उनसे पत्र द्वारा बातचीत करना ही ठीक होगा, और मैं खुलकर उनसे अपने मन की बात भी बता सकूँगा।

× × ×

लाख चेष्टा करने पर भी मैं अपनी माँ को कोई पत्र नहीं लिख सका, जिससे पुनः छुट्टी लेकर घर जाते समय मुझे बड़ी लज्जा और ग्लानि हुयी। घर पहुँच कर जिस समय मैं डरते-डरते अपनी माँ के सामने पहुँचा, तो मुझे यह देखकर बहुत ही आश्चर्य हुआ कि अब उनका स्वास्थ्य बिलकुल ठीक हो गया

है। वे अपने जीवन से अब निराश नहीं थीं, बल्कि इस समय वे बहुत ही प्रसन्न दिखायी दे रही थी। मुझे देखते ही उन्होंने तुरत उठ कर गले लगा लिया और एक प्यारी माँ की तरह, अभी तक बन्नो की उनसे चर्चा नहीं करने के कारण मुझे बहुत बुरी तरह डाँटा-फटकारा। माँ की बातें सुनकर मुझे बडा आश्चर्य हुआ। आखिर बन्नो के विषय में उनको सारी बाते कैसे ज्ञात हो गयी यह, मेरी समझ में नहीं आया। रात भर मैं इसी उधेड़-बुन में पड़ा रहा। परन्तु सवेरा होते ही मुझे पता चल गया कि माँ के जानकारी का आधार बन्नो द्वारा भेजा गया मेरे नाम का एक पत्र था। माँ ने उसे भूल से पढ लिया था। पत्र में बन्नो ने ऐसी कौन-सी बातों की चर्चा की थी, इसे जानने के लिए मेरा मन बेचैन था। परन्तु जब माँ ने मुझे वह पत्र दिया तो उसे पढ़कर मुझे कुछ संतोष हुआ और साथ-ही-साथ मन को बहुत कुछ शान्ति मिली। बन्नो के उस पत्र में इसका कहीं भी उलेख नहीं था कि डाकुओं से उसका सबध है। उसने बड़ी कुशलतापूर्वक इस बात को छिपा लिया था। मैंने सोचा कि बन्नो के विषय की सारी बातें मैं माँ को अवसर मिलने पर बतलाऊँगा। परन्तु यह मेरा निरा भ्रम निकला। माँ ने सारी बातों का पता बहुत पहिले ही पा लिया था। बन्नो द्वारा उनको कई अन्य पत्र भी लिखे गये थे तथा गुप्तरूप से कई हजार रुपयों की सहायता भी उसने माँ को भेजा था। परन्तु माँ उन रुपयों को मेरे द्वारा भेजा गया रुपया ही अबतक समझ रही थी।

इस सम्बन्ध में कुछ दिनों तक मैं अन्धकार में पड़ा रहा और किसी तरह भी समझ नहीं सका कि बन्नो को मेरी माँ की

जिसका अनुभव मैं तबतक करते रहा जब तक कि मोटर चालक ने पुनः विलम्ब होने की सूचना 'हार्न' बजाकर हमे नहीं दिया।

उस समय तो मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा था, मानों बन्नो अपने उरोजों के कम्पन द्वारा मेरे हृदय से किसी गूढ रहस्य को कुरेद कर निकाल लेना चाहती हो। परन्तु सचमुच मेरी कल्पना यदि सही होती,तो मैं इसे बन्नो का भ्रम मात्र ही कहता। कारण यह कि उस समय तक हम दोनों का स्तित्व अलग-अलग नहीं, एक हो चुका था।

× × ×

सदर पहुँच कर मुझको वहाँ दो-तीन दिन रुकना पड़ा, परन्तु कार्यरत रहकर भी मैं एक क्षण के लिए बन्नो को नहीं भूल सका। उसका सुन्दर रूप, उठते-बैठते, खाते-पीते और सोते जागते, सदैव मेरी आँखो के समक्ष रहता। लगभग एक सप्ताह के पश्चात् मेरी नियुक्ति वहाँ से दूर के एक जिले मे कर दी गयी। अतः मैं अपने नये कार्यभार को सँभालने के लिए वहाँ चल पड़ा।

मैं, अब ऐसा अनुभव कर रहा था कि मेरे शरीर मन और हृदय में वह स्फुर्ति, दृढ़ता और उत्साह नहीं है, जो कुछ दिन पूर्व था। अतः किसी-किसी तरह मैं अपना कार्यभार निवाहते रहा।

इस अवधि में मैं बराबर पत्र-पत्रिकाओं तथा पुलिस-गजट मे जम्पा और बन्नो का नाम पढ़ता और उनके कार्यो से सरकार की परेशानी पर घंटो गंभीरता पूर्वक विचार करता। माँ, ने इधर मुझे अपना विवाह कर लेने के लिए कई पत्र

लिखा था तथा मुझ पर इसके लिए दबाव भी डालना प्रारम्भ कर दी थीं। परन्तु मैंने अभी तक इस सम्बन्ध में उन्हें कोई पत्र नहीं लिखा था। मैं दो एकबार माँ से सारी बातें बता देने का स्वंकल्प कर घर भी गया, परन्तु लज्जावश उसने इस सम्बन्ध में कुछ भी नहीं बना मका और वापस लौट आया। इस समय उनका स्वास्थ्य दिन, प्रति-दिन बिगड़ते जा रहा था और अब उनके जीर्ण शरीर के बहुत दिन तक चलने की सम्भावना भी नहीं थी। फिर भी मेरी इच्छा थी कि वे कुछ दिनों तक और बची रहें। अतः उनकी औषधि तथा उपचार में मैं पानी की तरह रुपया बहाने लगा। फलस्वरूप मेरे पास जो कुछ भी धन जमा था वह सब डाक्टरों तथा औषधि विक्रेताओं को भेंट हो गया और मेरी आर्थिक स्थिति अत्यंत बिगड़ गयी इस समय मेरे पास अपने निजी व्यय के लिए भी पैसा नही बचता था। मेरी इस दुर्दशा का सबसे बड़ा कारण मेरा अपने अधिकांश वेतन से उन सिपाहियों के परिवारों के लिए कुछ पैसा कटा देना था, जो डाकुओं द्वारा हमारे साथ रह कर मारे गये थे। और जिनके परिवार के भरण-पोषण के लिए सरकार द्वारा अभी तक कोई व्यवस्था नहीं की गयी थी। सरकार भले ही उनको भूल जाती, परन्तु मैं उन बीर सिपाहियों के बच्चे और विधवाओं को कैसे भूलता, जो मेरे लिए पग-पग पर गोली खाने को तैयार रहते थे।

माँ की बीमारी और उनके अपने जीवन से निराश हो जाने के कारण अब मुझ पर अपना विवाह कर लेने के लिए चारों तरफ से अत्यधिक दबाव पड़ने लगा था। वे अपने मृत्यु के पूर्व पुत्रवधू का मुँह देख लेना चाहती थी। और यही उनके जीवन की अन्तिम अभिलाषा थी।

इस बार जब छुट्टियों से लौटते समय मैं उनसे बिदा लेने गया, तो उन्होंने बड़ी कातर दृष्टि से मुझको देखा और कहने लगी—'कि इसबार तुम्हारे घर लौटने पर मैं किसी तरह भी तुम्हारा विवाह कराये बिना नहीं मान सकती।" उन्होंने मेरे दूर के एक सम्बन्धी की बेटी से मेरा विवाह तय भी कर लिया था। लड़कीवाले इस संबंध में मुझसे कई बार पहिले ही मिल चुके थे। परन्तु बन्नो के पवित्र प्रेम-बन्धन को, जिसमें मैं बहुत पहिले ही बँध चुका था, तोड़ना मेरे लिये असंभव था। कभी-कभी तो मेरा ही मन मुझे धिक्कारने लगता और तब मैं ऐसा भी सोचने पर विवश हो जाता कि—"अपने स्वार्थ के लिए माँ की आज्ञा का उलंघन करना तथा उनकी इच्छा और ममता पर आघात पहुँचाना मेरे लिए नीचता की पराकाष्ठा होगी।" परन्तु किसी के पवित्र प्रेम और प्रेम के विश्वास पर आघात करना भी मेरे जैसे आदमी से जीते-जी संभव नहीं था। मन ने मुझे ढाँढ़स बँधाया। माँ के सामने मैं अपने विवाह की चर्चा करने तथा इस विषय पर वार्ता करने में संकोचवश असमर्थ था। अत: मैंने सोचा कि इस सबन्ध में उनसे पत्र द्वारा बातचीत करना ही ठीक होगा, और मैं खुलकर उनसे अपने मन की बात भी बता सकूँगा।

× × ×

लाख चेष्टा करने पर भी मैं अपनी माँ को कोई पत्र नहीं लिख सका, जिससे पुन: छुट्टी लेकर घर जाते समय मुझे बड़ी लज्जा और ग्लानि हुयी। घर पहुँच कर जिस समय मैं डरते-डरते अपनी माँ के सामने पहुँचा, तो मुझे यह देखकर बहुत ही आश्चर्य हुआ कि अब उनका स्वास्थ्य बिलकुल ठीक हो गया

है। वे अपने जीवन से अब निराश नहीं थीं, बल्कि इस समय वे बहुत ही प्रसन्न दिखायी दे रही थीं। मुझे देखते ही उन्होंने तुरत उठ कर गले लगा लिया और एक प्यारी माँ की तरह, अभी तक बन्नो की उनसे चर्चा नहीं करने के कारण मुझे बहुत बुरी तरह डाँटा-फटकारा। माँ की बातें सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। आखिर बन्नो के विषय में उनको सारी बातें कैसे ज्ञात हो गयीं यह, मेरी समझ में नहीं आया। रात भर मैं इसी उधेड़-बुन में पड़ा रहा। परन्तु सबेरा होते ही मुझे पता चल गया कि माँ के जानकारी का आधार बन्नो द्वारा भेजा गया मेरे नाम का एक पत्र था। माँ ने उसे भूल से पढ लिया था। पत्र में बन्नो ने ऐसी कौन-सी बातों की चर्चा की थी, इसे जानने के लिए मेरा मन बेचैन था। परन्तु जब माँ ने मुझे वह पत्र दिया तो उसे पढ़कर मुझे कुछ संतोष हुआ और साथ-ही-साथ मन को बहुत कुछ शान्ति मिली। बन्नो के उस पत्र में इसका कहीं भी उल्लेख नहीं था कि डाकुओं से उसका संबध है। उसने बड़ी कुशलतापूर्वक इस बात को छिपा लिया था। मैंने सोचा कि बन्नो के विषय की सारी बातें मैं माँ को अवसर मिलने पर बतलाऊँगा। परन्तु यह मेरा निरा भ्रम निकला। माँ ने सारी बातों का पता बहुत पहिले ही पा लिया था। बन्नो द्वारा उनको कई अन्य पत्र भी लिखे गये थे तथा गुप्तरूप से कई हजार रुपयों की सहायता भी उसने माँ को भेजा था। परन्तु माँ उन रुपयों को मेरे द्वारा भेजा गया रुपया ही अबतक समझ रही थीं।

इस सम्बन्ध में कुछ दिनों तक मैं अन्धकार में पड़ा रहा और किसी तरह भी समझ नहीं सका कि बन्नो को मेरी माँ की

अस्वस्थता तथा मेरी आर्थिक स्थिति का पता कैसे चला होगा। परन्तु बाद में मुझे पता चल गया कि बन्नो मेरे सम्बन्ध की एक-एक बातों की जानकारी रखती है। और मेरी नियुक्ति जिस दिन से दूसरे नगर में हुयी, उसी दिन से वह मेरे सारे कार्य कलापों पर दृष्टि रखने लगी थी।

मैं बड़ी व्यग्रता पूर्वक बन्नो के दूसरे पत्र की प्रतीक्षा करने लगा। परन्तु मुझे निराश होना पड़ा। उसने न तो मुझे कोई पत्र ही लिखा और न मुझसे मिलने की ही कोई चेष्टा की। शायद उसके ऐसा नहीं करने का कारण मेरा पुलिस-विभाग से सम्बन्ध था। वह नहीं चाहती थी कि मेरी प्रतिष्ठा मे उसके कारण किसी प्रकार की आँच आने पावे। इस सम्बन्ध मे सबसे आश्चर्यजनक बात यह थी कि जब से मैं अपनी आर्थिक स्थिति के विषय में मां को पत्र लिखना प्रारम्भ किया था। ठीक उसी समय से उनको किसी अज्ञात व्यक्ति द्वारा भेजा गया रुपया 'मनीआर्डर' से मिलने लगा था। माँ, मेरे पत्र और 'मनीआर्डर' का अर्थ लगाने की चेष्टा करती, परन्तु उन्हें अन्त तक इस रहस्य का पता नहीं चल सका। शायद यह समझ कर कि माँ को प्रसन्न करने के लिए ही मैं किसी से उधार अथवा कर्ज लेकर उन्हें रुपया भेजा करता हूँ। उन्हें बड़ा दुख हुआ, अतः उन्होंने मेरे यहाँ इतना अधिक रुपया भविष्य में नही भेजने के लिए पत्र लिखा। माँ के पत्र को पढ कर मुझे भी कम आश्चर्य नहीं हुआ, कारण यह कि उस दिन तक मैंने एक पैसा भी डाक द्वारा माँ को नहीं भेजा था, बल्कि जब कभी छुट्टी लेकर उन्हें देखने के लिये घर जाता तो उन्हें जो कुछ देना होता हाथों-हाथ दे देता था। मुझे इस बात

का भी भली-भाँति पता था कि उस समय मेरे निकट सम्बन्धियों अथवा मित्रों में कोई इतना धनी नहीं जो बिना कहे मेरी रुपये-पैसे से सहायता करता। बस मेरी जानकारी में केवल बन्नो ही ऐसी थी जो मेरे लिये सब कुछ कर सकती थी। परन्तु वह मेरे विचारों एवं सिद्धान्त से पूर्णतया अवगत थी। अतः मुझे विश्वास था कि वह भी मेरे बिना सहमति के ऐसा कार्य नहीं कर सकती।

× × ×

इस समय डाकुओं की सक्रियता बढ़ जाने के कारण पुलिस-विभाग के सभी लोग चिन्तित हो उठे थे। नित्य डाके तथा हत्या की कोई-न-कोई सनसनीदार तथा रोचक घटना पत्र-पत्रिकाओं में निकला करती तथा पुलिस की खुली आलोचना भी बड़े जोरों से होने लगी थी। सरकार के सभी गुप्त भेद डाकुओं को मालूम हो जाता था, जिसके कारण उनके पकड़ने का सारा प्रयास बार-बार विफल हो रहा था। इस समय तक दस्युराज जम्पा ने अपने पकड़ने के लिए नियुक्त लगातार छ इंस्पेक्टरों की हत्या करा दिया था। यही कारण था कि अब उस क्षेत्र में जिसकी नियुक्ति हो जाती, वह या तो छुट्टी ले लेता या नौकरी छोड़कर भाग जाता था। यदि किसी इंस्पेक्टर को वहाँ जाने के लिये पुलिस-विभाग द्वारा विवश कर दिया जाता तो वह हरदम अपनी जान को ही बचाने के प्रयत्न मे लगा रहता था। परिणामस्वरूप अब डाकू निर्भीक होकर पहाड़ी तथा जंगली क्षेत्रों के अतिरिक्त नगरों में भी डाका डालने लगे थे। उनके डाके अब पुलिस को चुनौती देकर पड़ते थे। सरकारी डाक तथा खजाने लूटने की भी इस समय तक

बीसों घटनाये घटित हो चुकी थीं। डाकू अपने उद्देश्य मे इस तरह सफल हो जाते, मानों उन्हें डाक विभाग तथा कोषा-गार के सभी भेद मालूम हों।

मेरे अपने नगर में जहाँ मेरा घर था, जब इसी प्रकार के दो डाके पड़ गये और डाकुओं ने बड़े नाटकीय ढंग से एक बैंक को लूट लिया जो मेरे मकान के बिलकुल पास था तो वहाँ पुलिस दल के अनुभवी एवं डाकुओं की जानकारी रखने-वाले अफसरों की एक विशेष गोपनीय बैठक बुलायी गयी। उस समय मेरे जनपद के पुलिस अधीक्षक वही थे जिनके आधीन मैं तराई के इलाके में कार्य कर चुका था। उनके विशेष निमन्त्रण पर मुझे भी उस बैठक में भाग लेने के लिए जाना पड़ा।

बैठक के दो दिन पूर्व ही मैं अपने घर पहुँच गया था। मेरा ऐसा करने का अभिप्राय और एक मात्र उद्देश्य वहाँ की परि-स्थिति का कुछ अध्ययन करना ही था।

घर पहुँचते ही मुझे माँ से पता चला कि जिस लड़की ने मुझे पत्र भेजा था, वह आज से एक सप्ताह पूर्व वहाँ आकर माँ से मिली थी और एक रात हमारे ही घर पर ठहरी भी थी। माँ उस लड़की से बहुत ही प्रभावित थी और उसकी हार्दिक इच्छा थी, कि हम दोनों शीघ्र ही वैवाहिक सूत्र मे बँध जायँ। इस सम्बन्ध में माँ, अब मेरी कोई हीला-हवाली सुनना नहीं चाहती थी। परन्तु बन्नो की अपने नगर में उप-स्थिति और उसी रात नगर में डाका पड़ना मुझे खटक रहा था। मैं सारी स्थिति को समझ गया। मुझे अब इसमें संदेह नही रहा, कि वहाँ के डाके में जम्पा के दल का ही हाथ है।

माँ ने मुझसे बहुत हठ किया, कि उसी समय मैं उसकी बातों को स्वीकार कर लूँ, क्योंकि वह लड़की दो एक दिनो मे ही पुनः माँ से मिलने का वचन देकर गयी थी। परन्तु मैं मौन रहा और उनकी बातों का कोई उत्तर नहीं दिया, और जिसके कारण मैंने देखाकि माँ का मुँह एकाएक उदास हो गया है। अपनी माँ की बातों से मुझे पहिले ही कुछ आभास मिल गया था कि बन्नो का उस समय भी हमारे नगर में होना सभव है।

दूसरे दिन सवेरे से ही आसमान पर बादलों के अनेक रंगीन दल नाना प्रकार के वेष में इधर-उधर दौड़ लगा रहे थे। ऋतु में कुछ विशेष प्रकार की उष्णता लक्षित हो रही थी जो शीघ्र ही बूँदा-बूँदी होने का द्योतक था। उसी एक दिन के अवकाश में मुझे अपने नगर के कई आदमियों से मिल लेना था और साथ ही साथ मेरी हार्दिक इच्छा थी कि बैठक मे सम्मिलित होने के पूर्व बैंक मे पड़े डाके के संबंध में कुछ जानकारी भी प्राप्त कर लूँ और तब बड़े साहब से जाकर मिलूँ। परन्तु बादल मेरे सारे कार्यक्रम पर पानी फेर देना चाहते थे। अतः उनपर मुझे बार-बार क्रोध आने लगा। मैं सोचने लगा कि ये बादल यदि अपना मनहूस रूप धारण कर आज आकाश मे नहीं विचरते तो इनका क्या बिगड़ता! परन्तु लगभग बारह बजे दिन को जब तेज धूप निकल आयी, तो मैं बहुत ही प्रसन्न हुआ और बादलों को कोसने के बदले उन्हें आशीर्वाद देने लगा। कुछ हलका-सा भोजन कर मैं तत्काल घर से निकल पड़ा। सर्वप्रथम मैं उस बैंक के मैनेजर से मिल लेना चाहता था, जिसके बैंक में डाका पड़ा था और लगभग पाँच

लाख रुपये डाकुओं के हाथ लगे थे। कोतवाली जाकर मैंने मैनेजर साहब के घर का पता लगाया। जब मैं उनके घर पहुँचा तो पता चला कि वे चित्रपट देखने गये है। मैं उन्हे पहिचान नहीं सकता था अतः लौटकर पुनः कोतवाली आया और उनको पहिचाननेवाले एक सिपाही को लेकर नगर के सारे चित्रालयों को छान दिया। अन्त में वे चौक के एक चित्रालय मे अपनी मित्रमंडली के साथ बैठे मिले। सिपाही ने उनको दूर से ही मुझे पहिचनवा दिया। मैंने सिपाही को अलग हटा स्वयम् उनके निकट जाकर बैठ गया। जब चित्र का प्रदर्शन प्रारंभ हुआ और अन्दर चारों ओर अँधेरा हो गया तो मैं मैनेजर साहब के निकट की एक खाली कुर्सी पर सरक कर बैठ गया और उन लोगों की बाते ध्यानपूर्वक सुनने लगा। परन्तु उनकी बातो से मुझे कोई लाभ नही हुआ। वे हमारे काम की कोई भी बात उस समय नहीं कर रहे थे। फिर भी मुझे इतना अवश्य मालूम हुआ कि अपने बैंक पर पड़े डाका का उन पर कोई प्रभाव नहीं है। मेरे कान सदा सतर्क होकर उनकी ओर लगे थे। इस समय तक मैं निश्चित रूप से समझ रहा था कि उस डाके में जम्पा के दल का ही हाथ है। कारण यह कि उस क्षेत्र में इतना बड़ा डाका डालनेवाला कोई दूसरा दल अब तक सुनने में नही आया था। इसके अतिरिक्त बन्नो का उस दिन हमारे नगर में रहना भी सन्देह से खाली नही था। अन्त में जब चित्र समाप्त हो गया, तो बैंक के मैनेजर साहब अपने साथियों के साथ एक अँगरेजी शराब की दुकान मे गये और लगभग एक घंटे के पश्चात् नगर के एक वेश्या के कोठे पर। वह वेश्या उस समय मेरे नगर की एक विख्यात

गणिका थी। मुझे बाद में पता चला कि मैनेजर साहब से उसका पुराना सम्बन्ध है। मैं उनका बराबर पीछा कर रहा था। परन्तु जब वे वेश्या के कोठे पर चले गये तो मैं लगभग आधी रात तक उसके कोठे के नीचे एक पान की दुकान पर बैठा उनकी प्रतीक्षा करता रहा। इस बीच मैं थोड़े समय के लिये ही वहाँ से हटा था। परन्तु जाने के पूर्व मैंने पानवाले को समझा दिया था कि यदि बैंकवाले बाबू नीचे उतरे तो वह उनसे बता देगा कि एक आदमी उनके लिए बहुत देर से यहाँ प्रतीक्षा कर रहा है। मैने उनसे यह भी बतलाने के लिए कहा कि उनके द्वारा भेजी जानेवाली वस्तु अभी तक नही मिली है। मैने सारी बातें सांकेतिक परन्तु निरर्थक कही थी, फिर भी मेरे लिये उसका एक विशेष अर्थ और महत्व था। जब मै पुन: वहाँ लौटकर पहुँचा तो पानवाले के यहाँ मैनेजर का एक आदमी मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। उसे गणिका ने अपने सन्देह निवारण हेतु वहाँ भेजा था। अपनी योजना को तत्काल सफल होते देख मुझे बड़ी प्रसन्नता हुयी। और अपना आधा मुँह ढँक कर मैं तत्काल कोठे के ऊपर पहुँच गया जहाँ बैंक का मैनेजर नशे में अर्धमूर्छित एक सजे-सजाये बड़े कमरे में लेटा हुआ था। वह बीच-बीच में नशे के झोंके से कुछ बक-झक भी करता जा रहा था। मैनेजर की भाषा को वह गणिका शायद समझ रही थी। परन्तु मैं उसके मुँह पर आये बेबसी के भावों को समझने मे असमर्थ था। मेरे पहुँचने के कुछ क्षण बाद मैनेजर साहब उठकर बैठ गये और मेरी पीठ पर जोर से हाथ मारते बोले—"जाकर माणिकजी से कह देना कि वे चिन्ता न करें। उनकी सारी अमानत ज्यों की त्यों सुरक्षित

है। वे जिस समय भी चाहें उसे आकर ले जाँय। परन्तु मेरी ओर से उन्हें बतला देना कि यदि वे चाहें तो स्वयम् नहीं भी आ सकते हैं। क्योंकि पुलिस के जासूस इस समय नगर के कोने-कोने में फैले हुए हैं! मैंने तो यहाँ तक सुना है कि कल ही उनकी कोई बैठक भी होनेवाली है। खैर, चिन्ताकी कोई बात नहीं है। यह काण्ड आपसे-आप पुलिस द्वारा दूसरे के सिर पर मढ़ दिया गया है।"

मैं चुपचाप मैनेजर की बातें सुनता रहा और जब उनसे जाने की आज्ञा मांगी, तो उन्होंने आलस में लड़खड़ाते शब्दों से पुनः मेरी ओर देखकर कहा—"अच्छा होता यदि तुम्हीं उस सामान के लिये परसों कार लेकर मेरे घर आ जाते। परन्तु खबरदार माणिकजी को हमारे यहाँ दो-तीन दिन तक कदापि आने की आवश्यकता नहीं। कहीं पुलिस को संदेह हो गया तो हमलोगों का सारा भेद खुल जायेगा। मेरे विश्वास के लिये केवल तुम उनके हाथ की चांदी की मूठवाली छड़ी को अपने साथ लेते आना।"

मैंने, मैनेजर साहब को झुककर बड़े अदब से नमस्कार किया और कोठे के नीचे सीढ़ियों से उतरने लगा। जिस समय अंधेरे में मैं सीढ़ी से नीचे उतर रहा था। अचानक किसी से टकराते-टकराते बचा। नीचे के द्वार से कुछ-कुछ प्रकाश नीचे की ओर अंदर भी आ रहा था। अतः मैं जब कुछ सीढ़ी नीचे उतरा तो देखा कि उस मकान की मालकिन जद्दोबाई भी मेरे पीछे-पीछे सीढ़ियों से नीचे उतर रही है। जब मैंने मुड़कर उसकी ओर देखा तो उसने मुझसे कुछ सीढ़ी और भी नीचे उतरने का संकेत किया। जब मैं नीचे अंतिम सीढ़ी पर पहुँचा

तो मेरे साथ-साथ वह भी वहीं रुक गयी और मुझसे कहने लगी—"मैं आपके बारे में भी सुन चुकी हूँ हुजूर, परन्तु न जाने कौन-सा कुसूर मैंने कर दिया है कि कनीज के घर की तरफ आप ताकते तक नहीं। मनीजर साहब तो बराबर हुजूर की जिन्दादिली, मिजाजबुलन्दी और शाहखर्ची का तजकिरा मुझसे किया करते हैं। परन्तु न जाने कौन-सी गुस्ताखी मुझसे हो गयी है कि मैं नफरत की निगाह से देखी जा रही हूँ। खैर कुआँ प्यासे के पास न आज तक गया है न जायेगा परन्तु प्यासा कुँए की ओर जरूर दौड़ कर जाता है, इसीलिये आपकी तारीफ सुनकर मैं खुद आपसे किसी दिन मिलने को सोच रही थी, परन्तु डर लगता था कि कहीं हुजूर नाराज हो जायँ तो बाँदी कहीं की न रहे।"

बीच-बीच में वह रुक-रुक कर ऊपर की ओर देख लिया करती थी, मानों कोई हमारी बातों को सुनने की चेष्टा मे हो। कभी-कभी तो उसकी मुखमुद्रा से ऐसा ज्ञात होता था कि वह संसार की सबसे बड़ी गोपनीय बात हमें बता रही है जिसका भेद खुल जाने पर उसकी फाँसी हो जायेगी। वह अपनी बातें अविराम कहते जा रही थी—"सच पूछिये हुजूर तो, मैं एक अर्से से आपके कदमों की इन्तजार यहाँ कर रही थी। परन्तु आज मेरे भाग खुले हैं और खुदा ने मेरी मुराद पूरी की है। मैंने जिस समय आपको नीचे पान की दुकान पर बैठे देखा, उसी समय मैं जान गयी कि आप मुझपर मिहरबानी करनेवाले हैं। मुझे कत्तई यह मालूम नहीं था कि आज आप किसी अपने निजी काम से आये हैं।"

जद्दोबाई की बातें सुनकर मैं एकाएक असमंजस में पड़ गया। अबतक वह मुझे बिलकुल गलत समझ रही थी। फिर

भी मुझे ऐसा ज्ञात होने लगा कि यदि मैं पूरी सतर्कता से काम लूं तो हो सकता है किसी बड़े रहस्य का उद्घाटन हो जाय।

मैंने जद्दोबाई से किसी दूसरे दिन आने का वादा कर उससे जान छुड़ाना चाहा और जब सीढ़ियों से नीचे उतरने लगा तो उसने पुन: मुझसे अपने पर मिहरबा नरहने का स्मरण दिलाया, और धीरे से मेरे कानों के पास अपना कान ले जाकर कहा कि—"मनीजर, कोई अच्छा आदमी नहीं है। वह किसी तरह उससे अपना पिण्ड छुड़ाना चाहती है।" कुछ क्षण मौन रह कर पुन: वह कुछ सतर्क होकर धीरे-धीरे कहने लगी—"मनीजर का साथ बड़े-बड़े चोरबदमाशों से है, देखिये ना, एक सप्ताह से मेरे यहाँ एक लड़की आयी है, जिसे यदि एक बार आप देख लें, तो घर जाने का नाम न लें और उसके कदमों में लोटन कबूतर की तरह लोटने लगे। मैंने भी जब उसे पाहिले दिन देखा था तो न जाने कब तक पत्थर की तस्वीर बनी उसको देखते रह गयी। उसे देख कर हुजूर, सच मानिये—कोई भी यकीन नहीं कर सकता कि, वह मोम की बनी एक तस्वीर नहीं। साथ-ही-साथ उसके जिस्म में इतनी ताकत है कि चार जवानों को यदि एक साथ दबा दे तो उनका भुरता बन जाय। मनीजर, तो उसके पीछे कई दिनों से पड़ा है, परन्तु अन्य लड़कियों की तरह उसे छेड़ने की हिम्मत उसको नहीं होती।" एक स्वाँस में उस गणिका ने ये सारी बातें मेरे सामने उगल तो दिया परन्तु थोड़े ही समय के पश्चात् मुझे उसकी बातों से ऐसा आभास मिला कि उसे एक अजनबी से इतनी गोपनीय बातें कह देने का दुख और पश्चाताप भी है। वह कुछ देर इस तरह मौन, सहमी-

मी खड़ी रही, मानों वह सोच रही हो कि कम-से-कम उसे लडकीवाली बात को तो हमसे कदापि नहीं बतलाना चाहता था।

इसी तरह कुछ क्षण जब बीत गये, तो जद्दोबाई एकाएक ऊपर सीढ़ियों की ओर मुड़ी और मुझे संकेत द्वारा वहीं खडे रहने को कहते ऊपर चली गयी। कुछ देर में ही जब वह पुन वहाँ लौटी तो मुझसे बतलाया कि—मनीजर अब भी कमरे में जमा बैठा है, अन्यथा वह इसी समय हमारी मुलाकात उस लडकी से करा देती। उसने बड़े दुख का प्रदर्शन करते मुझे दूसरे दिन अवश्य आने का निमंत्रण दिया और झुककर मुझे 'आदाब' कहते दरवाजा बन्द करने लगी। उसके चले जाने के पश्चात् मैं भी ज्योंही नीचे की ओर गली में निकलने को तैयार हुआ कि जद्दोबाई ने पुनः दरवाजे को खोलकर मुझे रुकने को कहा। जब वह मेरे अत्यन्त समीप आ गयी तो वह धीमे स्वर में मेरे कानों के पास अपना मुँह ले जाकर कहा—"माफ करें, कल आप यदि आ सकें तब तो ठीक ही है, और मैं तो अर्ज करूँगी कि आप अवश्य आवें, वर्ना परसों हमलोग यहाँ नहीं मिल सकेंगे।"

आगे कुछ कहने के पूर्व जब मैंने उसको रोक कर पूछा—"परसों आपको कहीं जाना है क्या! बाईजी।"

तो उसने एक बनावटी आह भरते उत्तर दिया—"नहीं हुजूर, जाना तो कहीं नहीं है। मगर मैं क्या बताऊँ आपसे। फिर भी जब एक बार मैंने आपसे अपने मन के सारे भेदों को खोल दिया है तो एक आध बात आप से छिपा भी तो नहीं

सकती। मैंने भी आदमी पहिचानने में सारी उम्र गुजार दी है। एक-से-एक भोले, मस्त और छलियों से पाला पड़ा है।"

जद्दोबाई आगे की बात कहते-कहते एकाएक रुक गयी जिसे मैंने ताड़ लिया परन्तु उसने तुरत अपने को संभाल लिया और कहती गयी—"तो हुजूर, सच मानिये, उस मनीजर ने तो लड़की के लिए एकदम चालीस हजार की बोली बोल दी है। परसों के लिए ही बात पक्की हो गयी है। शायद अब वह लडकी उसकी बातें मान भी जाय। परन्तु मेरी तो ख्वाहिश है कि एक दिन पहिले ही मैं उस लड़की से हुजूर को मिला दूँ। हुजूर के दरियादिली को और कोई जाने अथवा नहीं, मैं तो एक अरसे से जानती हूँ। यदि लडकी किस्मतवर होगी, तो आपको खुश कर लेगी और न जाने तब उसे कितने हजार और करोड़ मिलते रहेंगे।"

जद्दोबाई अपने प्रत्येक वाक्यों के पूरे हो जाने के पश्चात् मेरे मुख पर आये भावों को पढ़ने का प्रयत्न करती थी। कहीं रुपये पैसेवाली बात मुझे भारी न लगे, अतः उसने अपनी बाते बदल दीं और कहने लगी—"रुपयापैसा तो हाथों का मैल है हुजूर, आया तो ठीक है और नहीं आया तो आप जैसे लोगों की मिहरवानियों को ही मैं लाख- करोड़ समझती हूँ।"

मुझे बिलंब हो रही थी, अतः मैंने जद्दोबाई को दूसरे दिन आने का बचन दिया और गली होते हुए जब नगर के मुख्य मार्ग पर आया तो देखा कि वहाँ चारों ओर सन्नाटा छाये है। कभी-कभी कोई ट्रक अथवा मोटर गाड़ी उधर से आकर आगे की ओर निकल जाती और कुछ क्षण के लिए रात के सन्नाटे को

कोलाहल में परिणत कर देती थी। परन्तु थोड़ी देर में ही पुनः वहाँ सन्नाटा छा जाता। कुछ समय तक प्रतीक्षा करने के पश्चात् भी जब मुझे कोई सवारी नहीं मिली तो मैं पैदल ही घर की ओर चल पड़ा। जिस समय मैं अपने घर पहुँचा, रात के दो बज रहे थे। माँ, उस समय भी जग रही थी और विलम्ब कर उतनी रात गये घर लौटने के कारण मुझसे रुष्ट जान पड़ती थीं। जब मैं भोजन करने बैठा तो माँ ने बतलाया कि मेरे घर से जाने के कुछ ही देर बाद वह लड़की यहाँ आयी थी और मुझे वह ढूँढ रही थी। मेरा अनुमान ठीक निकला।

अन्त में भोजन कर लेने के पश्चात् जब मैं सोने चला गया, तो बहुत देर तक उस गणिका की बातें मेरे मस्तिष्क को उद्वेलित करती रहीं। शायद वह मुझको मैनेजर साहब का कोई बहुत धनी मित्र समझ रही थी जिसकी चर्चा अक्सर उसके घर पर उनके द्वारा होती होगी। परन्तु यह प्रायः निश्चित था कि उसका वह काल्पनिक व्यक्ति अब तक स्वयम् वहाँ नही गया था। मेरी नींद जब खुली तो दिन बहुत ऊपर चढ आया था। अतः झटपट तैयार होकर जब मैं बड़े साहब के बँगले पर पहुँचा तो देखा कि वहाँ पर्य्याप्त संख्या में लोग इकत्रित हैं। पुलिस अफसरों के अतिरिक्त नगर के कुछ संभ्रान्त कहे जानेवाले मुख्य-मुख्य व्यक्तियों को भी निमंत्रित किया गया था। ऐसे लोगों से पुलिस को डकैतों के पकड़ने में सहायता मिलने की आशा थी। बड़े साहब इस समय उन्हीं लोगों से बारी-बारी बातें कर रहे थे और विभागीय लोगों की बैठक में अभी कुछ विलम्ब था अतः मैं कोतवाली चला गया और माणिकजी के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त की। माणिकजी इस समय

मेरे नगर के एक प्रसिद्ध जौहरी थे और हाल ही में बम्बई से अपनी दुकान हटा कर यहाँ लाये थे। वे पुलिस के अत्यन्त विश्वसनीय एवं कृपापात्र थे। कहा जाता था कि सरकार में भी उनकी काफी पहुँच थी। जब मैंने उनकी कोठी पर 'टेलीफोन' मिलाया तो पता चला कि पुलिस-विभाग के किसी गोपनीय बैठक में भाग लेने के लिए पुलिस अधीक्षक ने उन्हें अपने यहाँ बुलाया है। मैं अविलम्ब अधीक्षक के बंगले पर लौट आया और गैरसरकारी लोगों की बैठक समाप्त होने की प्रतीक्षा करने लगा। बैठक समाप्त होने के पश्चात् वहाँ से निकलने-वालों को मैं बड़े ध्यान से एक-एक कर देखने लगा। पुलिस के समर्थक कहे जानेवाले उनमें अधिकांश पेंसन पानेवाले, पुलिस तथा सेना के अवकाशप्राप्त लूल्हे, लंगडे और बूढे व्यक्ति जिनको भय था कि पुलिस के अप्रसन्न होते ही उनकी पेंसन जब्त हो सकती है, वहाँ इकत्रित हुए थे। पुलिस-विभाग से सबधित वहाँ कुछ उचक्के तथा दलाल भी बुलाये गये थे, जो बडे साहब से मिलकर बहुत ही प्रसन्न थे। इन सभी प्रकार के व्यक्तियों के अतिरिक्त जो अन्य लोग वहाँ आये थे, उनमे विशेषकर ऐसे व्यक्ति थे जिनका नगर में बड़ा-बड़ा व्यापार चलता था और जिन्हें आशा थी कि पुलिस उनकी चोरबाजारी में उनकी सहायता न भी करे तो कम-से-कम उसमें बाधा तो उत्पन्न न करे। ऐसे लोग पुलिस द्वारा आयोजित सभाओं में भाग लेकर तथा उनके लड़के-लड़कियों के शादी-विवाह के अवसर पर उनको दान-भेंट देकर ही अपना काम निकालते हैं।

अन्त में बड़े साहब के साथ माणिकजी बाहर निकले। परन्तु उन्होंने अपने हाथ में चाँदी की मूठ वाली कोई भी

छड़ी नहीं ली थी। मैं बड़े ध्यान से उनकी गतिविधि का अवलोकन करने लगा। कभी-कभी तो मुझे ऐसा प्रतीत होने लगता था कि शायद मैंने इस व्यक्ति को कहीं देखा है। परन्तु अपनी स्मरणशक्ति पर जोर देकर भी मैं ठीक निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाया कि यह कौन व्यक्ति है और मैंने इसे कहाँ देखा है। अन्त में इसे मैंने अपने मनका भ्रम समझ उधर से अपना ध्यान हटा लिया। माणिकजी को देखकर मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि यह अवश्य ही कोई बहुत चतुर और चालाक व्यक्ति है। बाहर निकल कर बड़े साहब और माणिक जी 'लान' में बहुत देर तक टहलते तथा आपस में बातें करते रहे। एकाएक मेरे मस्तिष्क में यह बात कौंध गयी कि शायद माणिक जी की छड़ी उनके मोटर में ही हो। अतः मैं इसे निश्चित करने के लिए झट-पट उस ओर चला गया जहाँ उनकी मोटर खड़ी थी। मेरा अनुमान ठीक निकला और मैं उनकी छड़ी मोटर से निकाल लेने में सफल भी हो गया। माणिक जी तथा अन्य गैर सरकारी व्यक्तियों के चले जाने के पश्चात् बड़े साहब ने हमलोगों को बुलवाया। और एक बन्द कमरे में उन्होंने गत सप्ताह में हुयी वहाँ की डकैतियों पर हमारी अलग-अलग रायें माँगी। मुझे उस समय बहुत ही आश्चर्य हुआ जब मैंने अपने साथियों को एक मत से यह कहते सुना कि वहाँ की डकैती जम्पा के अतिरिक्त किसी दूसरे दल ने नहीं डाला है। उन लोगों को इस निष्कर्ष पर पहुँचने में किंचित मात्र भी शंका और संदेह नहीं था। शायद इसीलिये स्थानीय पुलिस उस डकैती के रुपये को बरामद करने के लिये उतनी सक्रिय नहीं थी जितनी जम्पा द्वारा की

जानेवाली भविष्य की डकैतियों को रोकने के लिए। सरकार मे भेजी गयी इस डकैती के सम्बन्ध की सारी सूचनायें भी इन्हीं विचारों पर आधारित थीं।

अन्त में जब मैंने अपने विचार सबके सामने रखा तो आश्चर्य से सभी लोग हमारे मुँह की ओर देखने लगे। कुछ लोगो ने मुझे मूर्ख की संज्ञा दी और कुछ लोगों ने तीसमार खाँ की उपाधि भी।

मैंने बड़े साहब से स्पष्ट बतला दिया था, कि इस डकैती मे जम्पा के दल का बिलकुल हाथ नहीं है और ऐसी कितनी अन्य डकैतियाँ भी हो चुकी हैं, जिसमें उसके दल का हाथ नही रहने पर भी पुलिसवाले सारे दोष उनके सिर पर मढ कर काम करने से अपनी जान छुड़ा लेते हैं। यही कारण था कि उस समय डाकुओं के अन्य नये-नये गिरोह भी उस क्षेत्र मे सगठित हो गये थे। मेरी बातों को सुनकर बड़े साहब कुछ सोच में पड़ गये और बहुत देर तक मौन रहने के पश्चात् मुझको कुछ घंटों के बाद अपने यहाँ बुलाया। उस समय सब लोगों के साथ मैं भी अपने घर चला गया और संध्या होने के बहुत पहिले पुनः बड़े साहब के बंगले पर पहुँचा। वे हमारी बहुत पहिले से प्रतीक्षा कर रहे थे। मेरे वहाँ पहुँचते ही उन्होंने मुझसे उस डकैती के किसी दूसरे दल द्वारा किये जाने का आधार पूछा। मैंने जब दृढ़ विश्वास के साथ उन्हें उस डकैती का सारा रुपया बरामद करा देने का विश्वास दिलाया तो वे पुनः कुछ सोच में पड़ गये। उस डकैती के सम्बन्ध की सारी बातें बहुत पहिले सरकार को लिख दी गयी थीं तथा उसके स्पष्ट कर दिया गया था कि यह काण्ड भी जम्पा के

गिरोह द्वारा ही किया गया है। यदि यह बात गलत सिद्ध हो गयी तो सरकार उनके विरुद्ध कार्यवायी कर सकती थी। साथ-ही-साथ आज तक की गयी कितनी डकतियाँ और हत्या ये भी झूठी सिद्ध हो सकती थीं। मैं बहुत देर तक उनकी गभीर मुद्रा का अध्ययन करते रहा और अन्त में जब अपने लिये उनसे कोई आदेश माँगा तो वे एकाएक संभल गये और बोले—"तो क्या! तुमको विश्वास है कि इस डकैती का रुपया तुम निश्चित रूप से बरामद कर लोगे! कहीं यदि ऐसा नहीं हुआ तो मेरी बड़ी भद्द होगी। मै चाहूँगा कि तुम इसका उत्तर एकबार पुनः खूब सोच समझ कर दो।"

मैंने बड़े साहब को उसी निर्भीकता से उत्तर दिया —"मुझे पूर्ण विश्वास है कि मैं इस डकैती का पूरा पता लगा लूँगा।" अन्त में जब मैंने उनसे अब तक की गयी अपनी जानकारी के विषय में संक्षेप रूपसे कुछ बातें बतायीं तो वे बहुत प्रसन्न हुए और मेरी पीठ ठोंक कर कहा—"मुझे भी तुमसे यही आशा थी और इसीलिये मैंने तुम्हें यहाँ बुलाया भी था।

बड़े साहब के बंगले से मैं सीधे जद्दोबाई के घर पहुँचा और देखा कि वह गली में आँखें बिछाये न जाने कबसे मेरे लिये प्रतीक्षा कर रही है। मुझे देखते ही वह बहुत प्रसन्न हुयी। एक गणिका के घर में जिस तरह मेहमानों की खातीरदारी होती है उसी तरह मेरी भी खातिरदारी होने लगी और कुछ ही क्षणों के पश्चात् जब वहाँ एकान्त हो गया, तो मैंने जद्दोबाई से अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए कहा। वह मेरे आदेश की प्रतीक्षा कर ही रही थी अतः तुरत ही उठकर अन्दर चली गयी और थोड़ी देर में ही उस बड़े कमरे

के द्वार पर जिसमें मैं बैठा हुआ था, किसी को बलात् अन्दर ले आने का प्रदर्शन करने लगी। उसकी बातें और कार्य-कलाप से ऐसा ज्ञात हो रहा था, मानों किसी नयी दुलहिन को उसकी सुहागरात के अवसर पर सखियाँ उसे बलात् घसीटकर श्रृङ्गार गृह में ले जाना चाहती हों और वह मौन रहते उनका विरोध कर रही हों। इस समय मैं बार-बार यही सोच रहा था कि उस नयी अनजानी युवती से आखिर मैं कैसे मिल सकूँगा और किस प्रकार उससे बातें प्रारभ करूँगा। द्वार पर अब भी उसकी नयी चिड़िया और जद्दोबाई मे संघर्ष छिड़ा हुआ था। मैं दो बार उस युवती की गोरी-गोरी कोमल परन्तु पुष्ट कलाईयों को द्वार के चौखट पर पडते देखा और अनुमान लगाया कि निश्चित ही वह कोई असा-धारण और अद्वितीय सुन्दरी के हाथों की कलाईयाँ होंगी।

अन्त में जद्दोबाई अपने प्रयास में सफल हो गयी और उसे बलात् मेरे कमरे में खींचकर खडा कर दिया। बाद में वह स्वयम् कमरे से दौड़ कर बाहर निकल गयी और द्वार को बाहर से बन्द कर उसमें कुंजी लगा दी।

लड़की उस समय लज्जा से अपना मुँह फेरे द्वार के निकट ही खड़ी थी और मैं सिर झुकाये जहाँ का तहाँ बैठा था। बन्नो के अतिरिक्त आज तक किसी भी युवती से एकाँत में मिलने का मुझे अवसर नहीं मिला था अतः मुझे भी कुछ लज्जा का अनुभव हो रहा था। समय कम था और मुझे थोडे समय में ही बैंक के मैनेजर को जाल में फँसाने तथा उससे डकैती का रुपया बरामद करने का सारा कार्यक्रम बनाना था। मैंने दबे स्वर में उस युवती से अपने निकट आने और लज्जा

का परित्याग करके बठने का अनुरोध किया। युवती जो अब भी अपने मुख को आंचल से छिपाये द्वार की ओर मुँह फेरे खड़ी थी उसने मेरी बातों पर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। अन्त में जब मैंने कुछ ऊँचे स्वर में उससे अपना नाम बताने के लिए कहा तो एकाएक वह चौक पड़ी और मेरी ओर घूम कर देखा। युवती से आंखे चार होते ही मेरा सिर घूमने लगा और मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानों धरती एकाएक मेरे पाँवों से नीचे खिसक रही हो। मैं जब कुछ सँभला तो आश्चर्य और आनन्द के सागर में इस तरह डूब गया कि मुझे अपनी सुधि नहीं रही और मेरे शरीर पर का सारा वस्त्र पसीने से लतपथ हो गया। युवती अब अविलम्ब मेरे निकट आकर बठ गयी और बड़े गम्भीर स्वर में बोली "तुम यहाँ कैसे आ गये। मुझे तो तुम्हारे पतन की इतनी आशा नही थी। सच बताना मेरे प्यार को तुमने गन्दा तो नहीं कर दिया है?"

और तब मैं बड़े जोरों से चिल्ला पड़ा तथा उसे डाँटते हुए कहा—"खबरदार, मेरे प्रेम के प्रति इस तरह की गन्दी बाते अपने मुँह से कभी व्यक्त मत करना बन्नो! वरना ठीक नही होगा।"

बन्नो मेरी बातों को सुनकर हँस पड़ी और मैंने उसे खीच कर अपने हृदय से लगा लिया। उसने हमारे किसी भी कार्य का कोई भी विरोध उस समय नही किया और एक संज्ञाहीन बच्चे की तरह चुपचाप मेरे गोद में पड़ी रही।

कुछ देर तक हम दोनों उसी तरह मौन एक दूसरे के बाहु-पास में जकड़े पड़े रहे। परन्तु थोड़ी देर में ही मेरी चेतना जाग्रत हो गयी और मुझे अपने कर्तव्य ने ललकारा। मैंने एका-

एक बन्नो के बदन पर से अपने बाँहों के बन्धन को कुछ ढीला करते हुए कहा—"जानती हो, इस समय मैं एक बहुत बड़े कार्य की जिम्मेदारी लेकर यहाँ आया हूँ। गणिका से मेरा कोई मम्वन्ध मत समझ लेना।"

बन्नो पूर्ववत् मौन थी और उसने मेरी बातों का कोई भी उत्तर नहीं दिया। परन्तु जब मैने उससे पुनः कहा कि—"हमारा आजका मिलन एक दूसरे के प्रति सत्य स्नेह का ही परिणाम है" तो उसने 'हाँ' कह के मेरी बातो का समर्थन किया। मेरे वाहुपाश को ढीला पाकर उसने अपने को मुक्त किया और उठकर द्वार को अन्दर से बन्द कर ली। मेरे पास आकर वह पुनः बिना किसी हिचक के हमारे गोद में लेट गयी और अपनी राम कहानी एकाएक सुनाना प्रारम्भ किया जिससे उसके प्रति मेरे मन में भी कोई भ्रम हो तो दूर हो जाय। बन्नो ने बतलाया कि "जम्पा का दल उस समय पहाड़ी और जंगली क्षेत्रों को छोड़कर अपना अधिक समय बड़े-बड़े नगरों में डाका डालने में लगा रहा है। पुलिस के कई उच्च अधिकारियों के डाकुओं द्वारा गोली मार दिये जाने के कारण पहाड़ी क्षेत्रों में तैनात अफसर इतने भयभीत रहते है कि वे डाकुओं को पकड़ने के वदले अपने थानों में स्वयम् को सुरक्षित रखने में ही सारा समय लगाते हैं। सरकार को डाकुओं के सम्वन्ध में भेजी गयी पुलिस की सारी सूचनायें मन गढ़ंत और काल्पनिक के अतिरिक्त और कुछ नहीं होती।" अब तो डाकुओं के भय से आम जनता को पुलिस ने उस क्षेत्र में सताना भी बंद कर दिया है।

बन्नो ने आगे बतलाया कि—"डाकुओं के भय से इस समय पुलिस द्वारा जनता का सताया जाना एकदम बन्द कर

दिया है। और इस समाचार को सुनकर मैं हृदय से प्रसन्न हो उठा।

बन्नो ने आगे बतलाया कि—"अब जनता में वहाँ किसी प्रकार का आतंक नहीं है। और जम्पा ने अपने दल के संचालन का सारा भार उसी पर छोड़ दिया है। अतः वह अब साधारण गरीबों के क्षेत्र को छोड़ नगरों में अपना जाल फैलाने की योजना बना रही है, जिसमें उसे आशातीत सफलता भी मिली है।"

उसने एक लम्बी स्वाँस खींचकर मुझे अपने बाहुओं में जोर से कसते हुए बतलाया कि—"मेरे चले आने के पश्चात् कई दिन और कई रातें उसने बिना अन्न-जल के व्यतीत किये। उसकी आँखें उस समय रोने तथा जगने के कारण सूज गयी थीं। दस्युराज जम्पा भी हमारी हालत से दुखी था और बार-बार मुझसे अपने दुख का कारण पूछने की चेष्टा कर रहा था। उसके बहुत हठ करने पर बन्नो ने अपने दुख का कारण अपने भाई की मृत्यु और उसकी बार-बार उसे याद आ जाना बतला दिया था। अन्त में अपने हृदय के बोझको हलका करने के लिए उसने बड़े जोरों से डकैती और जालिम पुलिस अफसरों की हत्या करना प्रारम्भ कर दिया।"

बन्नो के दल-वालों को पुलिस की प्रत्येक बातें ज्ञात हो जाती थी। अन्य विभागों के अतिरिक्त डाक बिभाग में भी उसके बहुत से आदमी काम करते थे, जिनके द्वारा डाक से भेजी गयी चिट्ठियों का सारा रहस्य उसे ज्ञात होते रहता था। उसे ऐसी आशा नहीं थी कि इस जीवन में फिर कभी वे मिल पायेंगे। इसी निराशा ने उसे कठोर और निर्दय बना दिया

था। कभी-कभी उसकी इच्छा होती थी कि, पुलिस को वह आत्मसमर्पण कर फाँसी के तख्ते पर लटक जाय अथवा आत्म-हत्या कर ले, परन्तु मुझसे मिलने की आशा की एक क्षीण लहर उसे ऐसा करने से रोक लेती थी। एक दिन ऐसा था कि मेरे प्यार के वशीभूत होकर वह डकैती और हत्या से घृणा करने लगी थी और आज भी करती है, परन्तु परि-स्थितियों के वशीभूत होकर उसे अपने मन के विरुद्ध भी आचरण करना पड़ गया था। बन्नो के विभिन्न नगरो मे अपने दल का अड्डा बनाने का शायद यह भी एक कारण था। वह चाहती थी कि उसके जीवन का या तो अन्त हो जाय अथवा मै उसे मिल जाऊँ। इसी अवधि मे मुझे लिखे गये माँ के कई पत्र बन्नो को मिल गये थे। उन्हीं पत्रों को पढ़ कर उसने मेरी आर्थिक स्थिति का पता पाया था और गुप्त रूप से माँ को रुपया भेजने लगी थी। कुछ दिनों के पश्चात् यह समझ कर कि डाक द्वारा इतना रुपया भेजने पर सरकार मुझ पर सदेह भी कर सकती है, उसने स्वयम् जाकर माँ को रुपया दे आने का कार्यक्रम बनाया था। माँ, के यहाँ उसने अपना परिचय एक अध्यापिका के रूप में दिया था जिससे मेरी जानपहिचान कालेज में पढ़ते समय हुयी थी। उस समय मै जिस नगर में नियुक्त था वहाँ बन्नों ने अपना ननिहाल बता-कर माँ को विश्वास दिलाया था कि छुट्टियों में उससे मेरी मुलाकात अकसर हुआ करती है। चाहें जो कुछ हो, माँ बन्नो से बहुत प्रसन्न थी।

जब मैंने बन्नो से अपने नगर में हुयी डकैतियों के विषय मे पूछा तो उसने स्पष्ट कर दिया कि ये डकैतियाँ किसी दूसरे दल द्वारा की गयी हैं। बन्नो के दल से उसे किसी प्रकार का

भी संबंध नहीं था। बैंक की डकैती, बैंक के कर्मचारियों द्वारा ही करायी गयी थी, मुझे बन्नो से पता चल गया। बन्नो को पुलिस विभाग के निकम्मेपन तथा सही घटनाओं पर परदा डालने की पुरानी प्रथा पर बड़ा दुख था। बदनाम जम्पा को किया जा रहा था और उसके नाम पर दूसरे लोग डाका डाल रहे थे।"

अंत में जब मैंने बन्नो से उसके जद्दोबाई के यहाँ आकर रहने का कारण पूछा, तो उसका मुँह एका-एक लज्जा से लाल और कुछ ही क्षणों मे पुनः उदास हो गया। शायद मेरी इस जिज्ञासा का अर्थ उसने अपने चरित्र पर मेरे द्वारा सदेह किया जाना, समझ लिया था। परन्तु तत्काल ही वह सँभल गयी और मुझसे निःसंकोच होकर बतलाया कि-"जिस दिन मैं उस नगर मे आयी थी उसी दिन बैंक में डाका पड़ा था। नगर की पुलिस डाका पड़ने के बाद इतनी सक्रिय हो गयी थी कि मेरा कही भी छिपना असंभव था। उस समय पुलिसवालों की ऐसी धारणा थी कि जम्पा अपने दल के साथ अब भी इसी नगर मे कहीं है अतः गुप्तचरो का जाल चारो ओर बिछा दिया गया था। यही कारण है कि मैंने अपने बचाव का सबसे उचित स्थान जद्दोबाई का घर समझा, जहाँ किसी भी रुपवती युवती तथा लम्पट युवक को स्थान मिल जाता है। इसीलिए मैं डरते-डरते जद्दोबाई के यहाँ पहुँच गयी थी, जहाँ मेरी आशा के अनुकूल ही उसने मेरा स्वागत भी किया और मुझे खुदा द्वारा भेजा गया अपने लिए नियामत समझा जो कुछ ही दिनो मे उसे मालामाल कर सकती थी। दो दिनों तक उसने मेरी पूरी खातिरदारी की और मुझसे किसी प्रकार की छेड़-छाड

नहीं किया। परन्तु तीसरे दिन जब उसने मुझको बैंक के मैनेजर के यहाँ पेश किया तो मुझे बड़ी चिन्ता हुयी। जद्दोबाई के वहाँ से टल जाने के पश्चात् मैंने बैंक के मैनेजर को अपने से दूर रहकर ही कोई भी बात करने का अनुरोध किया। परन्तु काम-वासना में सदा लीन रहने वाले मनुष्य की जो दशा अपने सम्मुख एक रूपवती युवती को देख कर होती है, वही दशा उस मैनेजर की भी उस समय मुझे देखकर हो रही थी। उसने बेवस और बेकस समझकर मेरे साथ भी वैसा ही आचरण करना प्रारम्भ कर दिया। उस समय इसी कमरे में मैं तथा वह नीच मैनेजर बस दो ही आदमी मौजूद थे, अतः मुझे उसका कोई भय नही था, बड़ी सरलतापूर्वक जब मैंने उसे बेवस कर दिया और उसके हाथ-पाँव को बाँध कर एक गठरी की तरह बना, उसे खिड़की से नीचे फेंक देने को तैयार हो गयी, तो वह भय से काँपने लगा और बार-बार क्षमा माँगते हुए रोने लगा। एकबार तो मेरे मन में आया कि उसे गोली मार दूँ। परन्तु दिन का समय था और नीचे गली में आने-जाने वालों का जमघट लगा था। अतः यह सोचकर कि कहीं मै भी पुलिस द्वारा पकड़ी गयी, तो ठीक नही होगा, चुप रह गयी। मैनेजर से मैंने चालीस हजार रुपये की माँग की, जिस पर वह तैयार हो गया है। वह कल ही संध्या समय यहाँ रुपया लेकर आनेवाला है। बन्नो ने मुझे यह भी बतलाया कि कल वह दिन में ही यहाँ से निकल गयी थी परन्तु पकड़े जाने के भय से पुनः यहाँ लौट आयी। वह मेरे माँ से भी मिल आयी है। वह आज की रात यहाँ से निकल जाना चाहती थी, परन्तु मुझसे मुलाकात हो जाने के कारण अब कुछ दिन यहाँ रह सकती है। बन्नो को मैनेजर द्वारा डकैती किये जाने में कोई

सन्देह नहीं था। उसने मुझसे बतलाया कि मैनेजर ने बैंक से रुपया एक ही बार नहीं लिया है। बल्कि धीरे-धीरे उसे हजम कर अन्त में डकैती का स्वाँग बनाकर उसे छिपाया है।"

वह्ो अपने मन की सारी बाते मुझसे एक स्वाँस में कह देना चाहती थी और मैं भी उसकी बातों मे तल्लीन हो रहा था। इस समय वह अपने सिर को मेरी गोद में रखकर लेटी हुयी थी और मैं उसके कोमल-काले घुँघराले बालों पर हाथ फेरता स्वर्गीय सुख का आनन्द ले रहा था। समय काफी बीत चुका था और जह्ोबाई इस बीच में कई बार बाहर से दरवाजे को थपथपा चुकी थी। परन्तु हमलोग चुप रहे और उसकी थपकी का कोई उत्तर नहीं दिया। अन्त में वह कुछ खीझसी उठी और अन्तिम बार द्वार पर धक्का देते हुए कहा—"सेठ जी, आप तो अच्छे जादूगर निकले! जिस नागिन को आज तक किसी ने वश में नहीं किया, उसको न जाने आपने कौन-सी जड़ी सुँघा दिया है कि वह आपके पहलू से अलग होने का नाम भी नही ले रही है।"

एकबार जह्ोबाई ने अपनी छाती पर जोर से हाथ मारने का ढोंग दिखाकर कहा—"हाय दैया! मैंने तो अपनी सारी उमर में ऐसा जादूगर, जंतर-मंतर वाला छैला नहीं देखा है।" वह कुछ क्षण मौन हो गयी और पुनः एकाएक जोर से बोल उठी—"अरे बाबूजी, अब रात आ गयी है, कल के लिए भी कुछ प्यार छोड़ियेगा या आज ही सब मजा लूट लेने का इरादा है।" इसबार उस गणिका के स्वर में कुछ क्रोध भी लक्षित हो रहा था। परन्तु हम लोग मन-ही-मन उसकी बातों पर हँस रहे थे, और पूर्ववत् शान्त बने उसकी बातों का कोई भी

उत्तर नहीं दिया। अन्त में जब उसने बार-बार दरवाजे पर थपकी देना प्रारम्भ किया और ऐसा ज्ञात होने लगा कि अब वह किसी तरह भी शान्त नही रह सकती तो मैंने उसको बड़े जोरों से डाँटा, फिर नरमी दर्शाते कुछ क्षण के लिए उससे अवकाश माँगा। उसने मेरी बातों को किसी तरह स्वीकार तो किया, परन्तु साथ-ही-साथ हँसते हुए बाहर ही से बोली— "पाँच मिनट से अब अधिक समय नही दे सकती सेठजी! यदि अधिक वक्त चाहिये तो हर पाँच मिनट के लिए एक नम्बरी निकालना पड़ेगा।" सचमुच अब समय बहुत बीत चला था। अतः बन्नो से मैंने विदा माँगी। परन्तु उसकी कातर दृष्टि और उदास आँखो से मुझे ऐसा प्रतीत हुआ, कि अब वह मुझसे एक क्षण भी अलग होना नहीं चाहती। मैंने उसे बार-बार समझाया, और पुनः मिलने का वादा कर जब वहाँ से चलने को तैयार हुआ तो जाने के पूर्व मैंने बन्नो से अपने दूसरे दिन के कार्यक्रम को प्रगट कर दिया। मैंने उससे यह भी बतला दिया कि मैनेजर द्वारा बैंक में डकैती कराये जाने की खबर मुझे पहिले से ही ज्ञात है और उसे दूसरे दिन ही पकड़ लेने का कार्यक्रम भी मैंने बना लिया है।

मेरी बातों को सुनकर बन्नो कुछ घबड़ायी-सी जान पडी, परन्तु जब मैंने उससे स्पष्ट कर दिया कि मैनेजर को जद्दोबाई के यहाँ पकड़ने के बदले अब मैं उसे यहाँ पहुँचने के पूर्व ही गिरफ्तार कर लूँगा, तो उसे कुछ संतोष हुआ। बन्नो से अपने कार्यक्रम प्रगट करने का मेरा एक मात्र उद्देश्य यही था कि वह कही ऐसा न समझ ले कि मैं उसके द्वारा मिली सूचना के आधार पर ही अपने प्रयास में सफल होने का प्रयत्न कर रहा हूँ।

द्वार खुलते ही मैंने देखा कि जद्दोबाई द्वार पर खड़ी-खड़ी हम लोगों की बातों को सुनने का प्रयत्न कर रही है। बाहर निकलते ही उसने मुझे मुबारक-बादी दी और इनाम लेने के लिए अपने दोनों हाथ फैला लिये। मैं इसके लिये पहिले से ही तैयार था। अतः उसके हाथों पर सौ-सौ रुपये के दो नोट, रख दिये और सीढ़ियों से नीचे गली में उतर आया।

इस समय गली में सघन अंधेरा छाये था। अतः मैं बड़ी तेजी से मुख्य मार्ग पर पहुँच जाने के लिए लपका। परन्तु अभी मैं कुछ ही गज आगे बढ़ा था कि मुझे बैंक के मैनेजर से उसी गली में मुलाकात हो गयी। वह जद्दोबाई के कोठे की ओर अपने कुछ मित्रों के साथ चला जा रहा था। अंधेरे में उसने मुझे नहीं पहिचाना। मैंने सोचा, "शायद वह कल के बदले आज ही जद्दोबाई को देने के लिये पूरी रकम लाया हो। यदि मेरा अनुमान सच हुआ तो मेरी सारी योजनाओं पर पानी फिर जाने का आदेश था।" मैं गली में ही कुछ देर खड़ा रहा और यह सोचकर कि अब बड़े साहब से अपना मुँह कैसे दिखा-ऊँगा, मुझको बड़ी बेचैनी और घबराहट होने लगी। एकबार तो मेरे मन में आया कि उसी समय बड़े साहब को फोन से बुलाकर मैनेजर को गिरफ्तार कर लूँ। परन्तु ऐसी स्थिति में जद्दोबाई के घर में ठहरी बन्नो भी गिरफ्तार हो सकती थी। और तब मेरी सारी सफलता, असफलता में बदल जाती। अतः मैं कोई दूसरा उपाय सोचने लगा। अंत में मैंने सोचा कि—"यदि आज की रात, मैनेजर से बन्नो के मिलने का नाटक किसी तरह रोक सकूँ, तो मेरा सारा काम बन जाय।"

इस समय तक वह जद्दोबाई के घर की सीढ़ियों तक पहुँच चुका था और नीचे ही से खड़े-खड़े द्वार खोलने का संकेत

दे रहा था। जब मैं पुनः लौट कर वहाँ पहुँचा तो देखा कि वह कोठे की सीढ़ियों को पार कर ऊपर पहुँच चुका है। मैं भी बिना एक क्षण भी विलम्ब किये सीढ़ियों द्वारा ऊपर चढा और देखा कि मैनेजर जद्दोबाई के उसी बड़े कमरे में बैठे उससे बातें कर रहा है, जिसमें जद्दोबाई के मेहमान बैठा करते थे। बन्नो इस समय आँगन के एक ओर कोनेवाले अपने कमरे में चली गयी थी जिसमें वह अकेले रहती थी। आँगन को पार कर उसके कमरे तक पहुँचने में सीधे, बैठने वाले कमरे का द्वार सामने पड़ता था। और बिना देखे गये कोई भी व्यक्ति सीढ़ियों से चढ़कर आंगन को पार नहीं कर सकता था। मैंने धीरे से बड़े कमरे के द्वार पर लगे परदेको खींचकर सीधा कर दिया और बन्नो के कमरे में एकाएक प्रवेश कर गया। जद्दोबाई ने समझा शायद बन्नो ने ही द्वार के परदे को खीचा हो, अतः उसने मैनेजर को प्रसन्न करने के लिये हँसते हुए कहा—"देखा न हुजूर, लड़की कितनी शर्मीली है। जद्दोबाई के घर में रहने वाले अन्य व्यक्ति जिनकी संख्या तीन से अधिक नहीं थी, उस समय मकान के तीसरी मंजिल पर बैठे तास खेल रहे थे। अतः मुझे किसी तरह की अन्य बाधा नही पहुँची।

मेरे पुनः लौट कर आ जाने से बन्नो को बड़ा ही आश्चर्य हुआ, परन्तु साथ ही साथ उसकी खुशी का भी कोई ठिकाना नहीं रहा। मेरे वहाँ से चले जाने के पश्चात् वह चुपचाप बैठी अभी तक मेरा ही चिन्तन कर रही थी। उस दिन बन्नो से पहली बार मैंने झूठ बहाना बनाया और कहा कि—"मेरी इच्छा उसको छोड़ कर जाने की नहीं थी।

किसी तरह मैं गया भी तो गली के आगे मेरे पाँव मुझको ले जाने से असमर्थ हो गये।"

मुझसे पुन: मिलने की प्रसन्नता में बन्नो द्वार बन्द करना भूल गयी थी तथा मुझको भी इसका ध्यान नहीं रहा। परन्तु ज्योंही मैंने जद्दोबाई को बड़े कमरे से बाहर निकलते देखा, तो बन्नो को संकेत से द्वार बंद कर देने को बतला दिया। अत: उसने झट दौड़कर द्वार बंद कर लिया। हमलोग पकड़ते-पकड़ते बचे और जद्दोबाई पुन: मैनेजर साहब के यहाँ लौट गयी। इस समय वह जोर-जोर से बोल रही थी जिसे हमलोग भी स्पष्ट सुन रहे थे। वह कह रही थी—"हुजूर कहा न था मैंने, कि लड़की बड़ी ही शोख और जिद्दी है। देखा न आपने, मैं ज्योंही दरवाजे के पास पहुँची, कि उसने धड़ाके के साथ किवाड़ बन्द कर लिया।"

मैनेजर इस समय बार-बार जद्दोबाई से बन्नो को बुलाने के लिये अनुनय-विनय कर रहा था, परन्तु वह किसी तरह भी तैयार नहीं हुयी। और कहने लगी—"कल का वादा है हुजूर, आज कहीं वह आने से इनकार कर दे तो आप भी अपनी तौहीनी समझेंगे और मेरे लिये तो जहर खा लेना जरुरी हो जायेगा। हुजूर तो जानते ही हैं, कि हुस्न में कितना गुरुर होता है, और होना जरुरी भी है, क्योंकि हुस्न के साथ यदि गुरुर नहीं रहे तो हुस्न का वजन बहुत हल्का पड़ जाय। कुछ लोग तो इसे फूल में काँटा समझ कर चिढ़ते भी हैं, परन्तु आप ही सोचें कि—"गुलाब में काँटे न हों तो इस पर चील-कौवे भी झपट्टा मारें।"

अन्त में जब मैनेजर ने बन्नो को एकबार सिर्फ देखकर ही उस दिन चले जाने का वादा किया और बन्नो को बुलाने के लिए जद्दोबाई को हाथ जोड़ने तथा घिघियाने लगा तो पुनः उसने साहस कर बन्नो के द्वार पर आकर थपकी देना प्रारम्भ किया। जब जद्दोबाई के रोने गिड़गिड़ाने के प्रदर्शन करने पर भी बन्नो ने उससे स्पष्ट कह दिया कि—"इस समय वह थकी है और उसे नींद आ रही है अतः उसे किसी तरह तंग न किया जाय।" तो जद्दोबाई बहुत सोच में पड़ गयी। उसने अपने जीवन में न जाने कितनी हठीली लड़कियों को देखा था और चुटकी बजा कर उन्हें बात-की-बात में वश कर लिया था। परन्तु बन्नो अभी हाल की फँसायी उम हथिनी की तरह थी जिसे पालतू बनाने के लिए यदि उसके साथ शुरु मे ही एकाएक कड़ाई कर दी जाय, तो उसके किसी ममय भी हाथ से निकल जाने का भय रहता है। साथ-ही-साथ एक बार जब वह बिगड़ जाती है तो कभी भी पोस मानने के लिए तैयार नहीं होती।

अन्त में जद्दोबाई हार कर पुनः मैनेजर के पास लौट गयी और उससे बहुत देर तक मान-मनौवल, आरजू-मिनत अपनी लच्छेदार भाषा में करते और उसे आश्वासन देते रही— "हुजूर, अब तो केवल रात भर की देर है तथा दिन के केवल दस घण्टे। फिर तो चाँद-सूरज का मिलन होना ही है। यह तो हुजूर को भी जाहिर है कि कोई लड़की शबेरात के लिए कुछ पहिले से तैयारी करती है। जो कुछ नाज-नखरे उसे करना है, वह सिर्फ आज ही तक तो है। आप तो बड़ रसिया है और रसिया लोग इंतजार के भी मजे लटते हैं। मेरी तो

पूछ बस आज तक ही है। कल से कहाँ की जद्दोबाई और कहाँ उसकी पूछ-ताछ। कल से तो मैं दूध में पड़ी मक्खी बन जाऊँगी। परन्तु देख लीजियेगा हुजूर, यदि बाँदी को भूल गये तो यह यकीनन खुदकुशी कर लेगी। इस तरह की चोट सहने को जद्दोबाई का दिल आदी नहीं है।''

मैनेजर इन सब बातों में मजा हुआ, चतुर और चालाक आदमी था। अतः वह धीरे-धीरे बोल रहा था। मुझे ऐसा कुछ आभास मिला कि अब वह कुछ अनमनस्क होकर वहाँ से जाने की तैयारी कर रहा है। जद्दोबाई ने कई बार उससे रात में वहीं ठहरने का झूठा अनुरोध किया, परन्तु वह चला गया।

मैनेजर के चले जाने का जद्दोबाई पर क्या प्रभाव पड़ा, इसे हम नहीं जान सके। परन्तु कई बार कभी भोजन के बहाने, कभी पान देने का बहाना कर वह बन्नो को जगाने आयी। बन्नो ने जब एकबार भोजन करने से इनकार कर दिया तो भी वह चुप नहीं हुयी और उससे थोड़ा दूध ही पी लेने का अनुरोध किया। परन्तु बन्नो ने उसकी बातों का प्रत्येक बार नकारात्मक उत्तर दिया और अंत में जद्दोबाई से पुनः उसे नहीं जगाने को कह कर वह सोने का बहाना करती मौन हो गयी।

इस भय से कि शायद जद्दोबाई हमलोगों की बाते सुन न ले, हम लोग बहुत देर तक मौन रहे। बन्नो तो उस समय इतनी प्रसन्न थी कि मारे प्रसन्नता के उससे एक क्षण भी शान्त नहीं बैठा जा रहा था। सच पूछिये तो केवल बन्नो का ही यह हाल नहीं था, बल्कि मैं भी उससे कम प्रसन्न

नहीं था और हम दोनों इस समय अपने-अपने कर्तव्य को भूल-सा गये थे। लगभग दो घंटों के पश्चात् हम दोनों को जब यह निश्चित हो गया कि जद्दोबाई अब अवश्य सो गयी होगी, तो बन्नो ने मुझसे धीरे से कहा—"रात अब बहुत बीत चुकी है। बुढ़िया शायद द्वार पर ही सोयी हो, ऐसी हालत में तुम्हारा यहाँ से जाना ठीक नहीं। आज रात को मैं तुम्हें यहीं बंदी बनाकर रखूँगी।"

मैंने उस समय तक कुछ भी भोजन नहीं किया था। मेरी भूख-प्यास न जाने कहाँ गायब हो चुकी थी। परन्तु बन्नो को इसकी चिन्ता थी। जब मैंने उससे कुछ भी खाने से इनकार कर दिया तो वह मौन हो गयी। हमारी आँखो से निद्रा का लोप पहिले ही हो चुका था, अतः हम दोनों एक दूसरे के अंक में लिपटे धीरे-धीरे बातें करने लगे।

बन्नो के जीवन की यह पहली रात थी जिसको वह ध्रुव-प्रदेश की लम्बी रात बन जाने की कामना कर रही थी। तीन रातें लगातार उसने जद्दोबाई के घर पर जग कर बिताया था जिससे उसकी आँखे बोझिल थीं फिर भी उसकी आंखो से नींद इस समय न जाने कहाँ गायब हो गयी थीं, उसकी समझ में नहीं आया।

जब मैंने बन्नो से, बिनोद करते कहा कि—"आज की रात हमारे जीवन की सबसे मधुर रात है बन्नो, जिसे हमलोग सदा स्मरण रखेंगे।" तो उसने इस बात को बड़ी खुशी से हृदय खोलकर स्वीकार किया। परन्तु जब मैंने उस मिलन की रात को एक गन्दे स्थान पर अभाग्यवश बिताने की बात उससे बताया तो उसने मेरी इस बात को स्वीकार नहीं किया और कहने लगी—"कि शुद्ध प्रेम के लिए शुद्ध मन तथा साफ

हृदय चाहिये। यह स्थान की चिन्ता नहीं करता। गन्दे स्थान तथा गन्दे वातावरण में भी पवित्र प्रेम का विकास होता है और स्वच्छ तथा शुद्ध स्थान पर भी इसकी दुर्दशा होते देखी गयी है। यही बात जात-पाँत, कुल-खानदान के सम्बन्ध में भी व्यवहार में लायी जाती है। परन्तु यह भी परिवर्तनशील है। अतः प्रेम से इसका भी कोई सम्बन्ध जोड़ा नहीं जा सकता।"

अन्त में बन्नो ने जब यह कहा कि—"डाकू कहे जानेवाले लोगों के दिल में भी कुछ ऐसी भावनायें रहती हैं जिसकी सभी प्रशंसा करते हैं, और सभ्य कहे जानेवाले लोग भी कभी-कभी ऐसी नीचता कर बैठते हैं, जिससे मानवता को लज्जित होना पड़ता है, तो हमे उसके कथन की सच्चाई को स्वीकार करना पड़ा। बन्नो ने अपने ऊपर बीती घटनाओं का उदाहरण देते हुये कहा कि—"जब वह पूर्ण युवती हुयी तभी से डाकुओं के सम्पर्क में आयी। परन्तु आज तक किसी भी डाकू ने उसे बुरी दृष्टि से नहीं देखा था। यदि वे चाहते तो उसके साथ बलात्कार भी कर सकते थे और उस बीहड़ वनों से आच्छादित पहाड़ी क्षेत्र में कोई भी उसके रुदन को सुनने वाला नहीं मिलता परन्तु डाकुओं ने आजतक उसके साथ कोई भी अभद्र व्योहार करने की चेष्टा नहीं किया। इसके विपरीत यहीं देखो, इस सभ्य लोगों के नगरी में जहाँ सभी सुसंस्कृत तथा पवित्र होने का दम भरते हैं और जहाँ सबकी प्रतिष्ठा की रक्षा का व्यापक प्रबन्ध है, वहाँ एक सप्ताह के लिए भी उसकी प्रतिष्ठा और पवित्रता नहीं बचायी जा सकती। पुलिस के पहरे और बिजली के प्रकाश में यदि जघन्य-से-

जघन्य अपराध हो सकते हैं, तो सभ्यता से कोसों दूर जंगल झाड़ से भरे अंधेरे निर्जन स्थान में पाप तथा कुछ अपराध हो भी, तो इसमें कौन-सा आश्चर्य है।

बन्नो, इस समय भी हमारे हृदय से लगी, निश्चित पडी हुयी थी, अतः मैं उसके हृदय की प्रत्येक धड़कन को सुन रहा था और उसे समझने का प्रयत्न कर रहा था। मैं बन्नो से कई वर्षों के बाद मिलने के कारण योंही मिलन सागर मे गोते लगा रहा था, साथ-ही-साथ उस मिलन की रात को और अधिक मादक तथा मधुर बनाने के लिए अन्त में मैंने बन्नो के अधरों पर अधर रख दिया। हम दोनों की आँखें आप-से-आप बन्द हो गयीं और दोनों मौन वेसुध न जाने कब तक पड़े रहे। रात कब और कैसे बीती हमलोग जान नहीं पाये।

अचानक कोतवाली के घंटे ने जब चार बजा दिये और नीचे की गलियों में लोग आने-जाने लगे तो बन्नो एकाएक चौंक कर उठ बठी और मुझे झकझोर कर जगा दिया। अब भी चारों ओर कुछ-कुछ अंधेरा छाये था। मैंने दरवाजे के पास कान लगा कर आँगन में किसी के होने का अन्दाज लिया। परन्तु वहाँ कोई नहीं था। रात का अधकार आँगन में कुहरे से मिलकर अब भी सघन था।

जब मैं द्वार की साँकल खोलकर बाहर निकला और अंधेरे में ही आँखे फाड़ कर चारों ओर देखा तो अन्दाज लगाया कि जद्दोबाई भोर की ठढक से बचने के लिए अन्दर कमरे मे जाकर सो गयी होगी। परन्तु मेरी आशा के विपरीत वह

उस समय भी जगी हुयी थी। अतः ज्योंही मैं सीढ़ियो से नीचे उतरने लगा कि उसने मुझे टोका। उसके बोलते ही मेरे पाँवों में कुछ विशेष गति उत्पन्न हो गयी और मैं तेजी से कुछ ही क्षणों में नीचे सड़क पर उतर गया। हमारे बाहर निकलते ही बन्नो ने अपना द्वार बन्द कर लिया था।

जब जद्दोबाई को उसके टोकने का कोई उत्तर नहीं मिला, तो वह कुछ घबराई और अन्दर कमरे में ही बड़े जोरों से शोर मचाने लगी। उसे सन्देह हो गया था कि चोर उसके घर में घुस आये हैं। परन्तु बन्नो ने तत्काल अपने कमरे का द्वार खोल दिया और जद्दोबाई को चिल्लाने से रोका। जद्दोबाई ने जब आँगन में निकल कर अपनी आँखों से देख-लिया कि घर का सारा सामान सुरक्षित है तो उसे संतोष हुआ और तब वह पुनः अपने कमरे में लौट गयी। इस भय से कि कहीं शोर-गुल सुनकर वहाँ पुलिस न आ जाय और जद्दोबाई के साथ-साथ बन्नो को भी तंग करे, मैं उसके मकान के नीचे तब-तक खड़ा रहा, जब तक पुनः वहाँ शान्ति स्थापित नहीं हो गयी और बन्नो तथा जद्दोबाई ने अपने-अपने कमरों का द्वार बन्द नहीं कर लिया।

जिस समय मैं अपने घर पहुँचा, सवेरा हो चुका था और माँ भी गंगा स्नान कर घर लौट आयी थी। उसने मुझे देखते ही सूचित किया कि बड़े साहब ने रात में मुझे बुलाने के लिये तीन बार आदमी भेजा था। और चौथी बार वे स्वयम् लग-भग बारह बजे रात में मुझसे मिलने आये थे। वे बहुत देर तक हमारे घर पर बैठे मेरे आने की प्रतीक्षा करते रहे। अन्त

मे माँ ने उनको चाय पिलाया और जब कुछ क्षण और रुक जाने को कहा तो वे रुके नहीं और चले गये।

माँ, उनसे मिलकर बहुत प्रसन्न थी और बार-बार उसकी प्रशंसा कर रही थी। मैं बड़े साहब के मन की उद्विग्नता समझ रहा था। अतः घर पर कुछ ही क्षण रुक कर सीधे उनके बंगले पर चल पड़ा। रात में देर तक जगे रहने के कारण वे अभी तक सो रहे थे। परन्तु जब मैंने उनके बंगले के हाते में प्रवेश किया तो उनका अलसेशियन कुत्ता बड़े जोर से भौक उठा, जिससे उनकी नींद खुल गयी। वे उठकर तत्काल बाहर निकले और मुझे देखते ही अपने पास बुला लिया। उस दिन का सारा कार्यक्रम बना कर मैं पुनः अपने घर लौट आया और सोचा कि कुछ देर के लिए सो लूं, शायद आज रात भी जगना पड़ जाय। परन्तु, लाख चेष्टा करने पर भी मुझे नीद नहीं आयी। बन्नो की याद, उससे पुनः मिलने की उत्कंठा और उसके स्वासो की सुगंध जो मेरे रोम-रोम में समा चुकी थी, इस समय मेरे हृदय की उद्विग्नता को बढ़ा रही थी। अन्त में मैं चारपायी से उठ पड़ा और कपड़े बदल कर पुनः बड़े साहब के बंगले पर पहुँच गया। कोतवाली से जब फोन मिलाकर मैंने अपने बताये हुए कार्यक्रमो के विषय में पूछ-ताछ किया तो पता चला कि कोतवाल ने सारी व्यवस्था ठीक कर लिया है।

ठीक चार बजे संध्या को जब नगर के मुख्य मार्ग पर चारों ओर चहल-पहल थी और रास्ते में आने जानेवाले लोग मोटर, रिक्सा, घोड़ा गाड़ी तथा माल ढोनेवाले ठेलों की भीड में भी अन्धा-धुन्ध चौक की ओर बढ़े चले जा रहे थे, उसी

समय हमारे पुलिस के सिपाहियों के दल ने बड़े साहब की अध्यक्षता में मैनेजर के निवासस्थान को घेर लिया और उसके घर की तलाशी प्रारम्भ कर दी। परन्तु जब सारे मकान के कोने-कोने को छान देने पर भी मैनेजर तथा उसके किसी सामान का पता नहीं चला तो मुझे बड़ी निराशा, लज्जा और ग्लानि हुयी। मेरा लगा-लगाया दाव खाली चला गया और मैं कहीं भी अब मुँह दिखाने लायक नहीं रह गया था। हमारे समकक्ष के पुलिस अधिकारी जो उस समय हमारी सहायता में गये थे मेरी असफलता पर बहुत प्रसन्न नजर आ रहे थे और साथ-ही-साथ मेरी चुटकी भी ले रहे थे। यह उनके नीच मनोवृत्ति का परिचायक था जो पुलिस विभाग के अधिकांश लोगों में पाया जाता है और जिसके कारण समाज विरोधी तत्वों को मिटाने में पुलिस अबतक असफल होते आ रही है।

जब मैं बड़े साहब के समक्ष पहुँचा तो अपनी आशा के विपरीत मैंने देखा कि वे मुझसे संतुष्ट हैं। मेरे सामने ही दो एक अफसरों को उनके मुस्करा ने पर उन्होंने बुरी तरह डाँटा-फटकारा भी।

जब मुझे एकान्त में ले जाकर बड़े साहब मैनेजर के हाथ से निकल जाने का कारण पूछा तो मैंने उनसे अपने मन का सन्देह स्पष्ट बतला दिया। वे इस बात को मान गये कि अवश्य ही इसमें मेरे विभाग के भी कुछ लोगों का हाथ है। इस कार्य में इर्ष्या और द्वेष की भावना ने अधिक काम किया था और मुझसे बदला लेने की भावना ने कम। चाहे

जो कुछ हो, यह एक प्रकार की अपने विभाग के प्रति ऐसी गद्दारी थी जिसे क्षमा नहीं किया जा सकता था। परन्तु अपराधी का पता लगाये बिना अब कुछ करना भी संभव नहीं था।

अन्त में जिस बात को सोचना क्या ! मैंने कभी कल्पना भी नहीं किया था उसे विवश होकर मुझे करना पड़ा। मैंने बड़े साहब को तत्काल सारी बातों से अवगत करा दिया और उनके साथ-साथ वेष बदलकर सीधे जद्दोबाई के कोठे पर पहुँच गया। इस समय माणिक जी की छड़ी मेरे हाथ मे थी। जब मैं जद्दोबाई की सीढ़ी पर बड़े साहब के साथ चढ़ने लगा, तो सीढ़ी के द्वार पर नियुक्त एक व्यक्ति ने हमलोगो को ऊपर जाने से रोका। परन्तु मैंने जब माणिक जी की छड़ी, मैनेजर साहब को दिखलाने के लिए भेजी, तो मेरा अनुमान सही निकला। मैनेजर स्वयम् छड़ी को देखते ही मुझे लिवा जाने के लिए सीढ़ियो के द्वार पर पहुँच गया। कमरे के अन्दर मेरे पहुँचते ही उसने जद्दोबाई तथा मेरे बड़े साहब को मेरे अनुरोध पर छोड़, शेष सभी लोगों को वहाँ से हटा दिया, साथ-ही-साथ कमरे के द्वार को अन्दर से बन्द कर लिया। द्वार बन्द कर जब वह निश्चित हुआ तो उसने मेरी ओर संकेत कर कहा—"भाई, माणिक जी से कह देना कि बड़े उचित समय पर कोतवाल साहब ने आदमी भेजकर मुझे सावधान कर दिया अन्यथा आज लुटिया डूब चुकी थी। मैं तो अब मान गया हूँ कि पुलिस में भी नमक-हलाल आदमी है। जिसकी खाते है, उसकी अवश्य गाते हैं। अब तो पुलिस मेरे पीछे बुरी तरह पड़ गयी है, अतः मुझे

बच कर रहना है। आज और कल की रात तो मेरा रैनबसेरा यही स्थान होगा, परन्तु परसों मै अवश्य ही बम्बई के लिय कूँच कर दूँगा।"

मैनेजर साहब अपनी बातों को समाप्त कर तत्काल उठे और उसी कमरे में रखे कोने से एक बक्स अपने हाथों उठाकर अपनी जगह पर पुनः लौट आये। बक्स को खोलकर उन्होंने तुरत चालीस हजार के नोटों का बंडल जद्दोबाई को दिया। तत्पश्चात् उन्होंने एक हजार के नोटों को निकाल कर अलग रखा जिसे वे कोतवाल को भेजना चाहते थे। कोतवाल का सिपाही इसी रकम के लिए बिना वर्दी आकर दरवाजे पर पहरा दे रहा था। बक्स को बन्द करते हुए शेष रकम के साथ उन्होंने उसे मेरे हवाले कर दी और मुझसे वादा कराया कि मैं उसे ज्यों-का-त्यों माणिक जी के यहाँ पहुँचा दूँगा। मैनेजर ने मेरे कान के पास अपना मुँह ले जाकर बताया कि उसी बक्स में माणिक जी का हिस्सा और उनकी अमानत भी रखी है। उन्होने मेरे द्वारा माणिक जी को यह भी कहलाया कि उन्हें जिस समय भी रुपये पैसे की आवश्यकता पड़ेगी उस समय वे अपनी अमानत की रकम मँगा लेगे। वे सुदूर की यात्रा में अपने साथ बहुत बड़ी रकम लेकर जाना नहीं चाहते थे।

इस समय अपनी सफलता पर मेरा मन बाँसों उछल रहा था और बड़े साहब तो मानों मुझे गले लगा लेना चाहते थे, परन्तु अभी बहुत कुछ करना शेष था अतः हमलोग मौन रहे। मैंने मैनेजर साहब के हाथ से कुंजी लेकर उसे अपने पास रख लिया और नीचे से कुली लाने के बहाने वहाँ से चल दिया

कोतवाल का भेजा हुआ सिपाही अब भी वहीं खड़ा था, जिसे मैंने अन्दर भेज दिया और बाहर से सीढ़ियोंवाले द्वार में कुंजी लगा दी। नीचे सड़क पर आकर वहाँ घूमते हुए एक सिपाही को मैंने अपना परिचय दिया और संकेत द्वारा उसे निकटवर्ती थाने में सहायता के लिए भेजा। सिपाही को भेजकर मैं पुनः जद्दोबाई के कोठे पर लौट गया। मैनेजर इस समय कुछ व्यग्र दिखायी दे रहे थे। उन्हे अब एकात की आवश्यकता थी, अतः उनकी हार्दिक इच्छा थी कि हमलोग शीघ्र ही वहाँ से चले जायें।

मैनेजर की इच्छानुसार हमलोगों ने भी वहाँ से शीघ्र चल देने का अभिनय किया। कोतवाल द्वारा भेजे गये सिपाही से इस समय बडे साहब बातें कर रहे थे। जब संकेत द्वारा मैंने उनसे सारी स्थिति समझा दिया, तो उन्होंने अपनी जेब से एकाएक तमंचा निकाल लिया और सिपाही से अपना परिचय देते हुए उसे वहीं चुपचाप खड़े हो जाने का आदेश दिया। बड़े साहब का असली रूप देखते ही सिपाही भय से थर-थर काँपने लगा। जद्दोबाई जो मौके से खूब लाभ उठाना जानती थी, अपने हाथ में लिये नोटों के बंडल को मैनेजर के मुँह पर दे मारा और बड़-बड़ा उठी—"डाकू और चोर-बदमाश भी, शरीफों के लिबास में इस तरह रहने लगे हैं, कि उन्हें पहिचानना मुश्किल हो गया है। हाय दैया, इसे तो मैंने कोई भल-मनई समझा था। परन्तु यह तो कमीना का पूत निकला।" उसने एकाएक इस तरह रोने का अभिनय प्रारंभ किया और अपनी आवाज को तोड़-मोड़ कर निकालने लगी, मानो उसे बहुत धोखा हुआ हो।

जद्दोबाई अविराम अपनी बातें कहती जा रही थी, चाहे उधर कोई ध्यान दे अथवा नहीं। वह कह रही थी—"चोरी-डकैती का माल मेरी जैसी शरीफ तवायफ जो गऊ की तरह सीधी है, के कोठे पर लाकर इस हरामजादे ने मेरी इज्जत को खाक में मिला दिया है। जी तो चाहता है कि इसका गला घोंट दूँ।" और सचमुच जब वह हवा में अपनी ऊँगलियों द्वारा किसी का गला घोंटने का अभिनय करते मैनेजर की ओर बढ़ी तो साहब ने उसे डांट कर उधर बढ़ने से मना किया। इसलिये वह पुन: ज्यों-का-त्यों अपने स्थान पर लौट कर बैठ गयी। परन्तु उससे चुप-चाप बैठा नहीं गया और अपने मन को संतोष देने के लिए उसने बच्चों को उसके कल्पित 'कला' नाम से पुकारा। इस प्रकार बच्चों को हमारे सामने पेश कर वह हमलोगों को प्रभावित करना चाहती थी। जद्दोबाई के उस अन्तिम दाव को मै समझ रहा था, जिसे उसकी तरह व्यवसाय करनेवाली वेश्यायें अपने बचाव के लिए लगाया करती हैं।

इस समय तक पुलिस के जवान उस गली को चारों ओर से घेर चुके थे। नीचे गली की सारी दुकानें भय से बंद हो गयी थीं और कुछ साहसी लोग दूकान के अन्दर ही से बाहर की ओर ताक-झाँक रहे थे। किसी को भी ऐसा साहस नहीं हो रहा था कि कुछ पूछ-ताछ करें। वैसे बात ऐसी थी कि बाहर सड़क पर खड़ी पुलिस को भी अन्दर की घटना का कोई पता नहीं था। अन्त में जब कोतवाल साहब भी हम लोगों की सहायता करने अन्दर आये और अपने सिपाही को वहाँ गिरफ्तार देखा तो वे उसपर एकाएक फट पड़े और अपने

सारे दोषों को उस सिपाही के सिर पर मढ़ने लगे। इस समय कोतवाल साहब की भी बुरी दशा थी। एक अपराधी की तरह उनके लम्बे, सुदृढ़ पाँवों में कम्पन उत्पन्न हो गया था। बड़े साहब ने कोतवाल साहब को भी बड़े जोरों से डाँट कर चुपचाप अपने स्थान पर खड़े रहने का आदेश दिया।

मैनेजर इस समय तक संज्ञाहीन हो चुका था, अतः उसके साथ-साथ जद्दोबाई और सिपाही को हिरासत में ले लेने के पश्चात् जब हमलोग जद्दोबाई के मकान की तलाशी लेने चले तो हमारा ध्यान घटने की कठिनाई की ओर गया। मैंने सोचा—'अब बन्नो का क्या होगा ! और हमारा हृदय जोर-जोर से धड़कने लगा।

परन्तु जद्दोबाई के सारे मकान को छान देने के पश्चात् जब मैंने देखा कि बन्नो का कहीं पता नहीं है, तो मुझे बडी प्रसन्नता हुई। हिरासत में लिये गये कोतवाली के सिपाही ने मुझसे बतलाया कि एक युवती उसी समय उस मकान से बाहर निकल गयी थी, जिस समय मैनेजर साहब वहाँ पहुँचे थे। मै बहुत देर तक सोचते रहा कि आखिर बन्नो को वहाँ पुलिस के आने की सूचना कैसे मिली होगी ! परन्तु बाद मे पता चला कि, पुलिस के भय से नहीं बल्कि मैनेजर साहब से किये गये वादे के भय से वह भागी थी। चालीस हजार रुपया मिल जाने के पश्चात् वह मैनेजर को अपना सब कुछ समर्पण करने के लिए वचनबद्ध हो चुकी थी। ऐसी परिस्थिति में उसे जद्दोबाई अथवा मैनेजर दोनों में से एक को अवश्य गोली मारनी पड़ती, जिसका परिणाम उसके लिए बुरा भी हो सकता था।

बैंक में पड़ी डकैती का लगभग दो तिहाई रुपया बरामद कर लेने और सभी अभियुक्तों को गिरफ्तार कर हमलोग अविलंब माणिकजी की कोठी पर पहुँच गये। वे बड़े साहब के मित्र थे। फिर भी इस संबंध में वड़ साहब ने बड़ी दृढ़ता का कदम उठाया था। परन्तु उनकी कोठी पर पहुँचने ही जब मैंने देखा कि वहाँ कोई भी मौजूद नहीं तो मैं जान गया कि माणिक जी को पकड़ना साधारण कार्य नहीं। कोठी पर के पहरेदार ने बतलाया कि उसके मालिक कई दिनों से बम्बई गये हुए हैं। बाद में भी माणिक जी को कई बार ढूँढ़ा गया परन्तु उनका कोई पता नहीं चला।

बैंक में पड़ी डकैती को सफलतापूर्वक पता लगाने, अपराधी को पकड़ने तथा उन्हें दण्ड दिलाने का सारा श्रेय मुझको ही मिलना चाहिए था और अन्त में मुझे मिला भी, परन्तु इस बीच में पुलिस विभाग के कई उच्च अधिकारी भी उसमें हिस्सेदार बनना चाहते थे। हमारे बड़े साहब जो एक बड़े ही योग्य, ईमानदार तथा अनुभवी व्यक्ति थे, इस संबंध में मेरा बराबर पक्ष लेते रहे और उन्हीं के कारण मुझे अपने परिश्रम में सफलता भी मिली। महीनों तक मेरा नाम कई पत्र-पत्रिकाओं में छपता रहा और कितने पत्रों ने तो मेरा बडा ही शानदार चित्र भी छापा। अपने विभाग द्वारा मैं अनेक पारितोषिकों से पुरष्कृत हुआ। नगर के कोतवाल तथा अन्य पुलिस के अधिकारी जो इस डकैती से सम्बन्धित थे और मैनेजर को गिरफ्तारी से बचाने के लिए उसकी सहायता कर रहे थे उनमें से कई कारागार में बन्द हुए और कुछ नौकरी से अलग कर दिये गये। मेरी तत्काल ही पदोन्नति हुई और

मेरे साथी मुझे इर्ष्या की दृष्टि से देखने लगे। इस समय मेरे विभाग में दूर-दूर तक मेरी ही चर्चा हो रही थी। परन्तु मैं सदा उसके आनन्द से बंचित रहा। मैंने एक बहुत बडी चीज को खोकर इस प्रतिष्ठा और मर्यादा को प्राप्त किया था। अत: इसे मैं कौड़ियों के मोल का समझ रहा था। मैं सोच रहा था कि जिस समय बन्नो को पता चला होगा कि इस सारे षड़यंत्र का मैं ही संचालक था, तो उसने मेरे विषय में क्या सोचा होगा ? कभी-कभी मैं इन बातों को सोच-सोच कर इतना परेशान हो जाता था कि मुझे ऐसा विश्वास होने लगता मानों में पागल हो जाऊँगा।

मेरे विभाग में कभी-कभी किसी की पदोन्नति का भी परिणाम बहुत ही बुरा हो जाता है; और वैसा ही मेरे साथ भी हुआ। मुझे पुन: जम्पा के कार्यक्षेत्र में कुछ विशेष अधिकार के साथ नियुक्त कर दिया गया। मेरे बड़े साहब की नियुक्ति भी मेरे ही साथ उसी क्षेत्र में सरकार ने किया। इस बार वे दो जिलों के सर्वोच्च पुलिस-अधिकारी बनाये गये थे, और उनको डकैतों के विरुद्ध अभियान चलाने के लिए कई प्रकार के विशेष अधिकार भी सौंपे गये।

× × ×

ठीक पाँच वर्षों के बाद मैं पुन: एक ऐसे क्षेत्र में पहुँचा, जहाँ के लिए अब मैं अपरिचित नहीं था। साथ ही साथ उस क्षेत्र के लिए अब मेरे हृदय में एक स्नेह और ममता भी उत्पन्न हो चुकी थी। वैसे तो मैं बड़े-बड़े नगरों से लेकर विभिन्न प्रकार के देहाती क्षेत्रों में भी रह कर अपने विभाग की सेवा और

कर्तव्य पालन कर सकता था, परन्तु मुझे वैसे क्षेत्र अत्यधिक पसन्द थे जहाँ का जीवन कठोर हो, और जहाँ अनेक प्रकार की कठिनाईयों से जूझने का अवसर बार-बार मिलता रहे। सक्षेप में यों कहिये कि आराम का जीवन मुझे एकदम पसन्द नहीं था। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि बन्नो से मुझे उसी जगली इलाके में परिचय तथा प्रेम हुआ था, जो मेरे जीवन की सबसे महत्वपूर्ण बात हो चुकी थी। फिर भी मेरे मन तथा शरीर में अब पांच वर्ष पूर्व की स्फुर्ति, चंचलता और उत्साह नहीं था। इसके अतिरिक्त उस क्षेत्र में डाकुओं के पाँव भी अब इस तरह जम गये थे और जनता पुलिस से इतना असतुष्ट थी कि इसबार मुझे वहाँ लोहे के चने चबाने पड़ गये। उस क्षेत्र में अब तक डाकुओं द्वारा जितने भी थाने लूटे तथा जलाये गये थे, उनकी पुन: स्थापना करा कर उनको व्यवस्थित रूप से चालू कराने में मुझे छ: महीने लग गये। जब मैंने इस कार्य से छुट्टी पा ली, तो वहाँ के गाँवों का एक-बार मैने दौरा करना प्रारम्भ किया। अपने इस दौरे में मैंने यह अनुभव किया कि धीरे-धीरे अब वहाँ की जनता डाकुओ से भी असंतुष्ट हो चली है। इसका मुख्य कारण दस्युराज जम्पा का अपने प्रमुख साथियों के हाथ में दल की बागडोर देकर स्वयम् नगरों में जाकर रहना था। जब तक जम्पा इस क्षेत्र में स्वयम् रहा, उसके साथी भय से कोई भी ऐसा कार्य नहीं करते थे, जिससे वहाँ के निवासी डाकुओं से असंतुष्ट हो जायँ। जम्पा के प्रभाव से उस समय डाकुओं का आचरण भी पवित्र था। परन्तु उसकी अनुपस्थिति में इधर उस क्षेत्र की कई नवयुवतियाँ डाकुओं द्वारा हरण कर ली गयी थीं। डाकू गाँव के कितने लोगों से अब अभद्र व्योहार भी करने

लगे थे। मैंने ऐसा अनुभव किया कि वहाँ की जनता से पुलिसवाले यदि थोड़ी-सी सहानुभूति दिखावें तो पुलिस की उस क्षेत्र में नियुक्ति का उद्देश्य हल हो जाय। और तब डाकुओं के समूलोच्छेदन में देर न लगे। मैंने अपने बड़े साहब से भी इस विषय में परामर्श किया और पुलिस को वहाँ अपनी नीति बदलने के लिये उन्हें सुझाव दिये। उस समय तक उस क्षेत्र में पुलिस अपना सब कार्य बलपूर्वक अपने शक्ति का प्रदर्शन कर सम्पन्न करते आ रही थी जिसका परिणाम कई बार हमलोग भुगत चुके थे।

बड़े साहब हमारे विचारों से पूर्ण सहमत हो गये। अत. मैंने अपने दल के कुछ चुने हुए लोगों को इस कार्य के लिए नियुक्त कर दी और उन्हें गाँव-गाँव में जाकर जनता से सम्पर्क स्थापित करने का आदेश दिया।

इस कार्य में मुझे आशातीत सफलता भी मिली। जो लोग डाकुओं के भय से गाँव छोड़ कर भाग गये थे, अब धीरे-धीरे वापस लौटने लगे। पुलिस के सहायक कुछ जंगल के ठीकेदार भी जो कई बार डाकुओं के शिकार होकर वहाँ से चले गये थे उन्हें मैंने आदमी भेजकर बुलवाया और उन्हें अपना कार्य प्रारंभ करने में पूरी सहायता दी। ऐसे लोगों की रक्षा का पूरा भार मैंने अपने सिर ले लिया था। इस प्रकार मैंने देखा कि वहाँ के लोगों में एक अभूतपूर्व उत्साह और नयी जागृति उत्पन्न हो गयी है। मेरे आने के बाद उस क्षेत्र में अब तक डकैती की कोई भी घटना घटित नहीं हुई थी। साथ ही साथ डकैतों को सहायता देनेवाले लोगों में भी कितने कुख्यात

तथा उनके मुखविर पकड़ कर जेल भेज दिये गये थे। जहाँ कुछ ही दिन पूर्व डकैतों के विरुद्ध कोई भी व्यक्ति न्यायालय मे साक्षी देने के लिए तैयार नहीं होता था, अब खुलकर लोग उनके विरुद्ध गवाहियाँ देने लगे थे। जम्पा के पकड़ने की भूख अभी मेरे दिल से मरी नहीं थी। मेरे जासूस मुझे बार-बार सूचना देते थे कि वह इस क्षेत्र में लगभग दो वर्षों से नहीं है और किसी नगर में कोठी खरीद कर रहने लगा है। मुझे पता चला कि उसके दल की विख्यात दस्यु सुन्दरी बन्नो भी उसी के साथ है। साधारण लोगों का अनुमान था कि दोनों में अब वैवाहिक संबंध हो चुका है, जो एक डाकू के लिए असंभव भी नहीं था। परन्तु सारे प्रयत्नों के पश्चात् भी यह ठीक-ठीक पता नही लगाया जा सका कि वह किस नगर मे हैं। मैं स्वयम् भी कई बार चेष्टा कर थक गया फिर भी जम्पा का कुछ पता नहीं चला। मेरे जासूसों की इतनी खबर तो सच निकली कि जम्पा इस समय किसी नगर में निवास कर रहा है। परन्तु वह बन्नो से विवाह कर लिया होगा, इसपर मुझे विश्वास नहीं हो सकता था। फिर भी जासूसो के इस संवाद ने मेरे हृदय में एक बेचैनी उत्पन्न कर दी थी। बन्नो मुझे धोखा नहीं दे सकती, ऐसा मुझे विश्वास था। परन्तु इतने दिनों तक उसकी कोई खबर नहीं मिलने के कारण मेरे मन में उसका पता लगाने की उत्सुकता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी।

एक दिन अधिक घुड़सवारी करने के कारण मैं बहुत थक गया था अतः बहुत सबेरे ही सो गया। जब मेरी नींद खुली तो रात के तीन बज रहे थे। मैंने 'लैम्प' को जलाया और

चार दिनों से पड़ी डाक देखने लगा। इसबार मैंने जिस स्थान पर अपना निवास स्थान बनाया था, वह एक ऊँचा टीला किसी पुराने डाकबंगले का खण्डहर था। राजमार्ग से यह कुल बीस गज दूर पर स्थित था जहाँ से थोड़ी दूर ही अलकनन्दा नदी शान्त और चुपचाप दिन-रात बहा करती थी। नदी की तेज धारा से निकलती हुयी कलकल-मर्मर ध्वनि हमलोग अपने कमरे में बैठे-बैठे चौबीसों घंटे सुना करते थे।

वहाँ का प्राकृतिक सौंदर्य बडा ही मन मोहक तथा दिल को लुभानेवाला था। हमलोग सूर्योदय के पूर्व और संध्या समय अपने निवास स्थान से ही बैठे-बैठे सैकड़ों मोरों का एक साथ ही नृत्य करना देखा करते थे, जो नगर के किसी भी नर्तकी के उटपटाङ्ग नृत्य से हजार बार अच्छा होता था। पपीहे और कोयल का मधुर स्वर तथा जंगली कुलबुलों एव दहियल के गीत इतना हृदयस्पर्शी होता था कि मैं घंटों उनके गीत की मधुर धारा में आत्मविभोर होकर बहता रहता था। परन्तु वहाँ की रात तब बड़ी भयानक एवं दिल दहलानेवाली हो जाती थी जब हमारे निवास स्थान के निकट आकर जंगली हाथी उत्पात मचाने लगते, और शेर गरज-गरजकर सोये मे भी हमें जगा देते थे।।

लगभग साढ़े चार बजे सुबह तक जो कुल डेढ़ घंटे होते थे, मैंने सारी डाक देख ली और निश्चित होकर अपने कमरे की उस खिड़की को खोल दिया जिसका रुख राजमार्ग की ओर था। खिड़की के खुलते ही एकाएक प्रभात की ठंढी और मस्त हवा का एक झोंका कमरे में आकर भर गया और उस

समय चंचल हो रहे मेरे मन में एक उन्माद उत्पन्न करने लगा। इस समय भी बाहर अन्धेरा छाये था। खिड़की से बाहर झाँक कर देखा तो सारा वन-प्रदेश कुहरे की कालिमा में ढका किसी अलसाये यात्री की मुखमुद्रा की तरह प्रतीत हो रहा था। सूर्योदय का संकेत अभी कुछ ही क्षण पूर्व वहाँ से थोडी दूर पर स्थित नटराज के प्रसिद्ध मंदिरवाले घंटे ने घहराकर हमें दिया था। साथ-ही-साथ अब हर-हर महादेव का स्वर भी एक पहाड़ से दूसरे को लांघता चारों ओर गूँज उठा था। मुझे एकाएक स्मरण हो आया कि उस दिन शिवरात्रि है और नटराज के यहाँ लगनेवाले मेले के लिये मुझे सारी व्यवस्था भी करनी थी। अतः द्वार खोलकर मैं बाहर निकला और पहरा देनेवाले सिपाही के निकट पहुँचा। मैंने सोचा था कि उस सिपाही द्वारा अपने सहायक के यहाँ संदेश भेज दूँ कि मेले के प्रबंध के लिये वे तत्काल ही एक छोटी-सी पुलिस की टुकड़ी को वहाँ रवाना कर दें। बादमें अन्य कार्यक्रमों पर विचार करने का मेरा इरादा था। परन्तु सिपाही को गहरी नींद में सोते देखकर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। इस समय उस क्षेत्र में डाकूदल सक्रिय नहीं था अतः मेरे सिपाहियों में कुछ अकर्मण्यता आ गयी थी। मैंने उस सिपाही की राईफल को धीरे से उठा लिया और उसे एक ठोकर लगायी। मेरे ठोकर की मार से वह धरती पर मुँह के बल गिर गया। पहिले तो शायद उसने समझा था कि डाकू उस पर आक्रमण कर बैठे हैं, परन्तु बाद में जब उसने मुझको अपने समक्ष खड़ा देखा तो भय के मारे वह कांपने लगा और अंत में मेरे पावों पर गिर पड़ा। मैंने उसे बुरी तरह

डाँटा-फटकारा और उसकी अत्यंत भर्त्सना भी की। बाद में उसकी राईफल लौटाकर मैं पुनः अपने कमरे में लौट आया। परन्तु कमरे में पाँव रखते ही मेरी दृष्टि चारपायी पर बैठी बन्नो पर पड़ी तो मेरे आश्चर्य का कोई ठिकाना नही रहा। वह मुझे देखते ही हँस पड़ी और हँसते-हँसते कहने लगी–"तुम्हे मुझको देखकर आश्चर्य हुआ होगा, परन्तु मैं आज ही रात जम्पा के साथ यहाँ पहुँची हूँ और झरने में स्नान करने का बहाना कर तुमसे मिलने, यहाँ तक आयी हूँ।"

बन्नो ने बतलाया कि जम्पा प्रत्येक वर्ष शिवरात्रि के अवसर पर नटराज का दर्शन करने यहाँ आता है और उनपर सबसे पहिले दूध की धार गिराकर उनका स्नान कराता है। जम्पा को इस कार्य में चाहे कितनी भी कठिनायी का सामना करना पड़े वह उसे झेलने के लिए तैयार रहता है। बन्नो ने मुझको यह भी बतला दिया कि डाकुओं का दल उस समय भी वहाँ से दो फर्लांग की दूरी पर अलकनंदा के तट पर ठहरा हुआ है जो जम्पा के लौटने तक वहीं रहेगा भी।

मेरी हार्दिक इच्छा थी कि बन्नो कुछ देर रुक कर मुझसे बात करे। वह बहुत दिनों के बाद मुझसे मिली थी और न जाने कितनी बातें मैंने अपने दिल में उससे कहने के लिए सजो रखा था। परन्तु दूसरे दिन रात में मुझसे मिलने का वचन देकर, उजेला होने के पूर्व ही वह उठ कर वहाँ से चली गयी।

बन्नो के जाते ही मैंने अपने सभी सहयोगियों एवं दल के सिपाहियों को बुलाया और जम्पा के मेले में पहुँचने की उन्हें सूचना दी। अपने जासूसों को भी तुरत मैंने उसका पता

लगाने के लिए भेज दिया। जिस समय मैं स्वयम् मेले में जाने के लिए तैयार होकर अपने शिविर थाने से बाहर निकला।" ठीक उसी समय सदर से मुझे संबाद मिला कि मेला देखने के लिए स्वयम् बड़े साहब भी अपने कुछ मित्रों के साथ वहाँ आ रहे है। उनके मित्रों में माणिक जी और उनकी पुत्री भी थी। उनके लिए रात में भी ठहरने का प्रबन्ध मेले में मुझे करना था। माणिकजी का नाम सुनते ही मुझे अपने नगर के उस धनी जौहरी का स्मरण हो आया, जिसकी चाँदी की मूठवाली छड़ी लेकर मैंने मैनेजर को गिरफ्तार किया था। वह छड़ी अब भी मेरे पास मौजूद थी। मेरी उस समय यह निश्चित धारणा थी कि वह जौहरी भी किसी न किसी डाकू के गिरोह का आदमी है। परन्तु बाद में पता चला कि माणिक जी उस बैंक के हिस्सेदारो में थे। डाका पड़ने के पश्चात् जब उन्होंने मैनजर को पुलिस द्वारा गिरफ्तार कराने की धमकी दिया तो उसने उनके हिस्से का सारा धन वापस कर देने का वचन दिया था। उस समय माणिक जी हमारे नगर के संभ्रान्त व्यक्तियों में गिने जाते थे और उनका सबंध एवं साझीदारी कई बड़ी-बड़ी व्यापारिक सस्थाओं से था। इसीलिये मैनेजर-संबंधी सही घटने की सूचना पुलिस को देकर वे अपनी शाख बिगाड़ना नहीं चाहते थे। मैं चाहता तो उनको भी मैं बैंकवाले मुकदमे में लपेट लेता। परन्तु माणिक जी के विरुद्ध साक्षी इकत्र करना सरल नहीं था। इसके अतिरिक्त वे हमारे बड़े साहब के अभिन्न मित्रों में से थे और उनकी भी इच्छा थी कि माणिक जी पर किसी तरह की आँच आने न पावे। बड़े साहब को रुष्ट करना मेरे हित में ठीक नहीं होता अतः मैं चुप रह गया। माणिकजी के मुकदमे से बच जाने के कारण

मेरा एक निजी लाभ यह हुआ कि मैंने भी जद्दोबाई को जेल जाने से बचा लिया और उसे किसी तरह पुलिस का मुखबिर घोषित कर दिया गया।

बड़े साहब तथा उनके मित्रों के लिए छोलदारियों की व्यवस्था कर मैंने भी अवकाश पाकर नटराज का दर्शन किया और दर्शन के लिए वहाँ आये प्रत्येक आने-जानेवालों पर दृष्टि गड़ाये लगातार चार घंटा मंदिर के द्वार पर छद्‌मवेष मे डटा रहा। मैं जम्पा के साथ रह चुका था अतः उसे अच्छी तरह पहिचान सकता था। मुझे पूर्ण विश्वास था कि हजारो की भीड़ में भी उसके किसी अंग मात्र को देख कर मैं उसे पहिचान जाऊँगा। परन्तु दिन ज्यों-ज्यों ढलते जाता, मेरी आशाये, निराशा में परिणत होते जा रही थी। साथ ही साथ मेरा मन अब शिथिल एवं उत्साहहीन भी होने लगा था। परन्तु रात में बन्नो से मिलने की कल्पना ने एकाएक मेरे मन मे एक नवीन स्फुर्ति उत्पन्न कर दी। अतः अपने एक विश्वस्त सिपाही को मदिर के द्वार पर नियुक्त कर मैं कुछ देर के लिए अपने शिविर में चला गया और एक कप चाय पीकर ज्यों ही बाहर निकला कि बड़े साहब की गाड़ी एकाएक आ पहुँची। बड़े साहब की गाड़ी में उनके साथ माणिक जी बैठे थे और दूसरी गाड़ी जिसमें पर्दा लगा था उसमें माणिक जी का परिवार आया था। माणिक जी के परिवार के किसी महिला को मै देख नहीं सका, जिसका कारण उन लोगों का परदे में बुरी तरह ढका होना था। उनकी पुत्री तो साड़ियों में मुँह छिपाये इस तरह सिकुड़ी हुई थी कि उसे देख कर मुझे हँसी आ गयी। मैंने सभी लोगों के ठहरने की व्यवस्था अलग-अलग कर दी

थी। अतः कुछ ही देर में वे सभी अपनी-अपनी छोलदारियों में जम गये। बड़े साहब तो राह की थकान के कारण चारपायी पर लेटते ही सो गये। परन्तु माणिक जी तुरत कपड़े बदल अपने एक सेवक के साथ मेला देखने के लिए चल पडे। सुरक्षा की दृष्टि से मैंने उनको अपने साथ दो सिपाहियों को भी ले जाने के लिए कहा, जिसके लिए वे तैयार नही हुए।

लगभग आठ बजे रात तक वे मेले में अकेले घूमते रहे। मेले में कई बार मेरी उनसे मुलाकातें भी हुयी और मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि वे उस स्थान से भली-भाँति परिचित है। मेले में उनके कई परिचित लोग भी आये थे, जिनसे मिलकर वे बहुत उत्साहपूर्वक बातें करते। जब मैंने मन्दिर के पुजारी से उन्हें बातें करते देखा और कुछ देर के पश्चात् जब वे वहाँ से चले गये, तो मैंने पुजारी के पास जाकर उससे माणिक जी के विषय में कुछ बताने को कहा। पुजारी से मुझे पता चला कि वे नटराज के विशेष भक्तों में हैं और प्रत्येक वर्ष नियमपूर्वक शिवरात्रि के अवसर पर वहाँ पूजा करने के लिए आया करते है। पुजारी ने मुझे यह भी बतलाया कि माणिक जी से मन्दिर को कुछ वार्षिक वृत्ति भी मिला करती है।

जब मैंने पुजारी से जम्पा डाकू के विषय की कुछ जानकारी करनी चाही तो वह एकाएक चौंक उठा और कुछ देर तक चुपचाप मेरा मुँह देखते रहा। उसने डरने का अभिनय करते हुए मुझसे स्वीकार किया कि शिवरात्रि के दिन जम्पा सबसे पहिले नटराज की मूर्ति पर दूध की धार चढ़ाता है। उसके पूजा कर लेने के पश्चात् ही मन्दिर का पट साधारण

लोगों के लिए खोला जाता है। पुजारी की बातें सुनते ही हमारा हृदय धक से बैठ गया। जिस तरह किसी मजदूर के सारे दिन की कमाई संध्या को उसके गठरी से खुलकर पानी मे गिर जाती है और उसको घर पहुँच कर अपने भूखे बच्चो के सामने अपराधी की तरह मुँह लटकाकर खड़ा होने के अतिरिक्त अन्य कोई चारा नहीं रहता। उसी तरह रात को जब मैं बड़े साहब के समक्ष प्रस्तुत हुआ, तो मेरी भी वही दशा हो गयी। मेरी तनिक-सी असावधानी के कारण जम्पा वहाँ से निकल गया था। यदि इस बातको मैं दो दिन पूर्व ही पुजारी से जानने का प्रयत्न करता तो मुझे अपने उद्देश्य में सफलता अवश्य मिल गयी होती। मुझे बच्चो से भी इस बात का संकेत एक दिन पूर्व ही मिल चुका था। परन्तु उसकी बातों पर उस समय मैंने ध्यान नही दिया। पछताने से कोई लाभ नहीं था। अतः मैं अब आगे का कार्यक्रम बनाने लगा। माणिक जी अभी तक मेला देखकर लौटे नहीं थे। परन्तु उनकी लड़की नटराज का दर्शन कर अपने छोलदारी मे वापस आ गयी थी। उनके घोर परदे के कारण अभी तक कोई भी उन्हें देख नही सका था, अतः सबके मन में उन्हे देखने की जिज्ञासा हिलोरें मार रही थी। जब काफी रात बीत चुकी और अर्धरात्रि के पूर्व नटराज के मंदिर में भोग लगते समय हजार-हजार घंटे एक साथ बज उठे, तो ऐसा प्रतीत होने लगा, मानों किसी युद्ध में पराजित, घंटो से युक्त गजयूथ, अपनी प्राण रक्षा के लिए भाग चला हो। जिस समय घंटो के भीषण रव में मेले की इकत्रित जनता का कोलाहल एकाएक डूब गया तो मैंने बड़े साहब के आदेश से माणिक जी को ढूँढ लाने के लिए अपने दो-तीन सिपाहियों को

मेले में भेजा। परन्तु लगभग एक घंटे के पश्चात् सिपाहियो ने लौट कर बतलाया कि वे आज यहाँ नहीं लौटेंगे और मन्दिर मे ही रात्रि निवास का ब्रत पालन करेंगे। नटराज के प्रति माणिक जी की इतनी प्रेम-भक्ति देखकर मुझे और बड़े साहब दोनों को महान आश्चर्य हुआ।

अन्त में मेले के लिए पहरे की पूर्ण व्यवस्था कर मै अपनी छोलदारी में जा कर पड़ गया। दिन का थका होने के कारण चारपायी पर लेटते ही मुझे घोर निद्रा ने धर दबाया। फिर भी सोने के पूर्व मुझे स्मरण था कि आज ही रात बन्नो ने मुझसे मिलने को कहा है। सोते समय भी बन्नो की स्मृति मेरे मस्तिष्क में गूँज रही थी। अभी मैं कुछ देर भी नही सो सका था कि पहरे के सिपाही ने जब एकाएक किसी को टोक कर पूछा—"कौन है।" तो मेरी नीद अचानक टूट गयी, मानों वह कच्चे धागे में बँधी हो। सिपाही जिसे देखकर चिल्लाया था वह कोई स्त्री थी और सदिग्ध अवस्था मे मेरी छोलदारी में प्रवेश करना चाहती थी। सिपाही ने जब उसे ललकारा तो वह भाग खड़ी हुयी। पुलिस शिविर मे, सिपाहियों के अभेद्य पहरे के होते हुए भी कोई स्त्री निर्भीकता पूर्वक संदिग्ध अवस्था में घुस जाय, यह एक साधारण बात नहीं थी। अत: पुलिस के सभी अफसर और सिपाही जो वहाँ उपस्थित थे चौकन्ने हो उठे। पहरे के सिपाही से जब मैने उस स्त्री की हुलिया पूछी और सिपाही ने उसका वर्णन किया तो मुझे निश्चित हो गया कि वह अन्य कोई नहीं, बन्नो होगी। मुझे सिपाही पर बड़ा क्रोध आया परन्तु मैंने इसे प्रगट नही किया। उसने अपना कर्तव्य पालन किया था अत: उसको दोष देना मेरी मूर्खता होती। पुलिस शिविर में उस घटने

लोगों के लिए खोला जाता है। पुजारी की बाते सुनते ही हमारा हृदय धक से बैठ गया। जिस तरह किसी मजदूर के सारे दिन की कमाई संध्या को उसके गठरी से खुलकर पानी मे गिर जाती है और उसको घर पहुँच कर अपने भूखे बच्चो के सामने अपराधी की तरह मुँह लटकाकर खड़ा होने के अतिरिक्त अन्य कोई चारा नहीं रहता। उसी तरह रात को जब मैं बड़े साहब के समक्ष प्रस्तुत हुआ, तो मेरी भी वही दशा हो गयी। मेरी तनिक-सी असावधानी के कारण जम्पा वहाँ से निकल गया था। यदि इस बातको मैं दो दिन पूर्व ही पुजारी से जानने का प्रयत्न करता तो मुझे अपने उद्देश्य में सफलता अवश्य मिल गयी होती। मुझे बच्चो से भी इस बात का संकेत एक दिन पूर्व ही मिल चुका था। परन्तु उसकी बातों पर उस समय मैंने ध्यान नही दिया। पछताने से कोई लाभ नही था। अतः मैं अब आगे का कार्यक्रम बनाने लगा। माणिक जी अभी तक मेला देखकर लौटे नहीं थे। परन्तु उनकी लड़की नटराज का दर्शन कर अपने छोलदारी मे वापस आ गयी थी। उनके घोर परदे के कारण अभी तक कोई भी उन्हें देख नही सका था, अतः सबके मन में उन्हे देखने की जिज्ञासा हिलोरें मार रही थी। जब काफी रात बीत चुकी और अर्धरात्रि के पूर्व नटराज के मंदिर में भोग लगते समय हजार-हजार घंटे एक साथ बज उठे, तो ऐसा प्रतीत होने लगा, मानों किसी युद्ध में पराजित, घंटो से युक्त गजयूथ, अपनी प्राण रक्षा के लिए भाग चला हो। जिस समय घंटो के भीषण रव में मेले की इकत्रित जनता का कोलाहल एकाएक डूब गया तो मैंने बड़े साहब के आदेश से माणिक जी को ढूँढ़ लाने के लिए अपने दो-तीन सिपाहियों को

मेले में भेजा। परन्तु लगभग एक घंटे के पश्चात् सिपाहियों ने लौट कर बतलाया कि वे आज यहाँ नहीं लौटेंगे और मन्दिर मे ही रात्रि निवास का व्रत पालन करेंगे। नटराज के प्रति माणिक जी की इतनी प्रेम-भक्ति देखकर मुझे और बड़े साहब दोनों को महान आश्चर्य हुआ।

अन्त में मेले के लिए पहरे की पूर्ण व्यवस्था कर मैं अपनी छोलदारी में जा कर पड़ गया। दिन का थका होने के कारण चारपायी पर लेटते ही मुझे घोर निद्रा ने धर दबाया। फिर भी सोने के पूर्व मुझे स्मरण था कि आज ही रात बन्नो ने मुझसे मिलने को कहा है। सोते समय भी बन्नो की स्मृति मेरे मस्तिष्क में गूँज रही थी। अभी मैं कुछ देर भी नहीं सो सका था कि पहरे के सिपाही ने जब एकाएक किसी को टोक कर पूछा—"कौन है।" तो मेरी नींद अचानक टूट गयी, मानों वह कच्चे धागे में बँधी हो। सिपाही जिसे देखकर चिल्लाया था वह कोई स्त्री थी और संदिग्ध अवस्था मे मेरी छोलदारी में प्रवेश करना चाहती थी। सिपाही ने जब उसे ललकारा तो वह भाग खड़ी हुयी। पुलिस शिविर में, सिपाहियों के अभेद्य पहरे के होते हुए भी कोई स्त्री निर्भीकता पूर्वक संदिग्ध अवस्था में घुस जाय, यह एक साधारण बात नहीं थी। अतः पुलिस के सभी अफसर और सिपाही जो वहाँ उपस्थित थे चौकन्ने हो उठे। पहरे के सिपाही से जब मैंने उस स्त्री की हुलिया पूछी और सिपाही ने उसका वर्णन किया तो मुझे निश्चित हो गया कि वह अन्य कोई नहीं, बन्नो होगी। मुझे सिपाही पर बड़ा क्रोध आया परन्तु मैंने इसे प्रगट नहीं किया। उसने अपना कर्तव्य पालन किया था अतः उसको दोष देना मेरी मूर्खता होती। पुलिस शिविर में उस घटने

के कारण अब भी सरगर्मी थी। माणिक जी की छोलदारी के चारों ओर पहरा बढ़ा देने का आदेश दे तथा पहरे के प्रत्येक सिपाही को समझा-बुझाकर जब मैं अपनी छोलदारी में आया तो मुझे अपनी चारपायी पर किसी को सोते देख बड़ा ही आश्चर्य हुआ। परन्तु दूसरे ही क्षण मैं समझ गया कि निश्चित ही वह बन्नो होगी। जिस समय एक झटके के साथ उसके शरीर पर के चादर को मैंने हटा दिया तो वह खिल-खिलाकर हँसते हुए उठ बैठी। सिपाहियों द्वारा इधर-उधर की भाग-दौड़ में वह मेरे छोलदारी से बाहर निकलते ही, अन्दर चली आयी थी और अपना मुँह ढँक कर चारपायी पर पड़ गयी थी।

नटराज के मन्दिर का पिछले पहर बजने वाला घंटा अभी-अभी घहराकर मौन हुआ था। रात बहुत ही कम शेष थी, और मुझे बन्नो से न जाने कितनी बातें करनी थीं। पहरे के सिपाही हमारे रहनेवाली छोलदारी के चारों ओर मँडरा रहे थे। मेरी दशा उस समय उस मनुष्य की-सी थी जिसके अरमान और इच्छायें तो विपुल हों साथ-ही-साथ वह किसी नगर की एक सजी-सजायी बड़ी दुकान पर खड़ा होकर भी अपनी इच्छानुसार कुछ खरीद नहीं पाता हो।

जब मैं बन्नो के निकट जाकर बैठ गया तो वह मुझसे लिपट कर रोने लगी। उस रात को मुझसे मिलने के लिये उसने कितने बहाने किये थे और कई बार पुलिस के सिपाहियों द्वारा पकड़ते-पकड़ते बची थी। न जाने मैंने उसे क्या कर दिया था कि एक क्षण के लिए भी उसे मेरे बिना चैन नहीं था। इधर कुछ दिनों से तो उसके मन कि उद्विग्नता इतनी बढ़ गयी-थी, कि उसके कुछ ही दिनों में पागल हो जाने का भय था।

मैंने बन्नो को हजार समझाया और लाख मनाया फिर भी उसकी आँखे बराबर निर्झर की तरह झरती रहीं और उसका सिसकना निरन्तर जारी रहा। नगर में वह मेरे ही कारण रहने लगी थी और डाकुओं से इस समय उसने पूर्णरूप से सम्बन्ध विच्छेद कर लिया था। नगर का एकाकी जीवन उसे पसन्द नहीं था। उसकी उद्देश्यहीन जिन्दगी धीरे-धीरे उसके लिये भार होते जा रही थी। पहाड़ और जगलों मे वह निर्भय होकर स्वतत्रता पूर्वक कही भी आया-जाया करती थी। परन्तु नगर में उसे सावधान और सतर्क रहना पड़ता था। उसेके मुख पर आये भावों तथा आँखो के संकेतो से मुझे ऐसा ज्ञात हो रहा था मानों वह मुझसे कुछ स्वीकार कराना चाहती हो। परन्तु उसे अपने हृदय की बातों को प्रकट करने मे नारी-सुलभ संकोच हो रहा था। मैने बार-बार उसके हृदय को टटोला और बातों-बातों में उसे उकसाया भी, परन्तु वह मौन रही। सवेरा होने के कुछ ही क्षण पहिले हृदय पर पत्थर रख कर हमलोग एक दूसरे से अलग हुए। बन्नो ने पुन. दूसरी रातको मुझसे मिलने का वचन दिया।

× × ×

वैसे तो नटराज का मेला दो सप्ताह तक रहता था। परन्तु .मेलेके प्रथम सात दिन बड़े चहल-पहल के दिन होते और वे दिन पुलिस के लिए बहुत ही व्यस्त कार्यक्रम के दिन थ। इसमें कितनों के छक्के छूट जाते फिर भी व्यवस्था म कुछ-न-कुछ गड़बड़ी अवश्य ही उत्पन्न हो जाया करती थी जिससे मेले के बाद पुलिस की बड़ी आलोचनायें हुआ करती थी। परन्तु इधर कुछ दिनों से उस क्षेत्र में डाकुओं का दबाव

अधिक बढ़ जाने के कारण वहाँ का मेला बहुत कुछ उदास हो चला था। इस समय मेले में दूर-दूर के व्यापारियो ने आना एकदम बन्द कर दिया था, यद्यपि नटराज के भय अथवा श्रद्धा से मेले यात्रियों के साथ डाकुओं द्वारा आज तक कोई भी दुर्व्योहार नहीं किया गया था। पुलिस भी लोगों को मेले मे आने से निरुत्साहित करती। कारण यह कि किसी भी दुर्घटना के होने अथवा किसी व्यापारी के लूटे जाने का सारा दोष दुलिस के मत्थे पर ही थोप दिया जाता था। बात कुछ अंशो में गलत परन्तु कुछ अंशो मे सही भी रहता था। मैंने देखा कि अन्य वर्षो से इस वर्ष मेले में लोगों की जमघट अधिक थी और इससे मैंने अनुमान लगाया कि उस क्षेत्र के निवासियों के हृदय से डाकुओं का बहुत कुछ भय निकल गया है।

अन्य वर्षों की तरह इस वर्ष भी जम्पा मेले में आया था। उसने सदा की भाँति नटराज की पूजा और अर्चना की एव दूध की धार से उनको नहला कर सकुशल निकल भी गया, फिर भी हम कुछ नही कर सके, यह बात मेरे हृदय में खटक रही थी। मेरा अनुमान था कि जम्पा मेले में तो नहीं, परन्तु इस समय भी कहीं मेले के आसपास ही होगा। यही सोच कर मैने अपने जासूसों को पूर्णरूप से सतर्क हो जाने का आदेश दिया। मुझे विश्वास था कि जम्पा के विषय की कुछ जानकारी यदि मैं बन्नो से करना चाहता तो वह मुझे निराश नहीं करती। परन्तु बन्नो के द्वारा प्राप्त जानकारी के आधार पर यदि मैं जम्पा को पकड़ने में सफल भी हो जाता तो उसके प्रति मेरा यह घोर विश्वासघात होता। इस समय मेरे मन में एक अजीब द्वंद चल रहा था और जब

कभी एकान्त मिलता, मैं सोचने लगता—"आखिर दो विरोधी विचारों के मनुष्य भी कभी-कभी क्यों एक दूसरे से इतने समीप हो जाते है तथा आपस में अटूट विश्वास उत्पन्न कर लेते हैं। यह विश्वास उनका कोरा विश्वास ही नहीं होता बल्कि उसकी रक्षा के लिए वे अपना प्राणोत्सर्ग भी कर देते है! इसकी तह में अवश्य कोई रहस्य होगा और साथ-ही-साथ कोई सच्चाई भी। इसीलिये तो डाकू भी अपनी सच्चाई और विश्वास की रक्षा उसी लगन के साथ करता है जितना पुलिस का ईमानदार आदमी अपना कर्तव्य निर्वाह। फिर भी एक दूसरे से आपस में मेल नहीं बैठता तथा एक साधारण भेद-भाव के कारण और कुछ हठवश भी दोनों का संघर्ष चलते रहता है। अभी तो एक डाकू दल के समाप्त हो जाने पर तुरत उनका दूसरा दल तैयार हो जाता है, और ठीक उसी तरह जैसे एक पुलिस कर्मचारी के मारे जाने पर दूसरे की वहाँ तत्काल नियुक्ति।"

उस दिन मैं बहुत कुछ सोचते-सोचते यह भी सोचने पर विवश हो गया कि—"जब तक मनुष्य का मन, विचार और समाज का ढाँचा नहीं बदलेगा तब तक डाकू भी रहेंगे और पुलिस भी। दोनों एक ही समाज के अंग, वही रूप, वही रंग परन्तु विचारों के भेद ने दोनों को एक दूसरे का शत्रु बना दिया है। डाकू तथा एक साधारण मनुष्य के हृदय में यदि एक समान तत्व नहीं होते तो मैं और बसो एक दूसरे से नहीं मिल पाते। एक पुलिस अधिकारी और दूसरा डाकू दल की मुखिया एक दूसरे के घोर शत्रु थे।"

कभी-कभी डाकुओं की बातें सोचते-सोचते मस्तिष्कपर

अधिक दबाव पड़ने के कारण, मेरा मन व्याकुल भी हो जाया करता था। और तब मैं यह भी सोचने लग जाता कि—"मैंने अच्छा नहीं किया। पुलिस विभाग में एक अफसर होकर भी मैं एक दस्यु कन्या के प्रेमपाश में आवद्ध हो गया हूँ और नियमविरुद्ध, पुलिस-शिविर में भी उससे मिलता हूँ। यह मेरे द्वारा कर्तव्यघात, विश्वासघात अन्याय अथवा अनर्थ इत्यादि किया जाना नहीं तो क्या समझा जायेगा ?"

तब मैं एक दृढ़ निश्चय पर पहुँच जाता कि कोई भी धर्म, संगठन, नियम-कानून मेरे विश्वासघात के लिए मुझे क्षमा नहीं करेगा। बन्नो भी मेरे ही तरह डाकुओं से विश्वासघात कर रही थी।"

अन्त में यह सोचकर कि "दो विरोधी विचारों के रहते भी हम दोनों अपने-अपने सिद्धान्तों के लिए एक दूसरे से लाभ उठाने की चेष्टा नहीं करते, मुझे कुछ शान्ति और संतोष मिला। साथ-ही-साथ मुझे अब यह भी आशा होने लगी कि हमारा प्यार, जिसको हम आज पाप समझने के लिए विवश हो रहे हैं, हो सकता है एक दिन डाकुओं के हृदय परिवर्तन कराने में सहायक होकर पुण्य के ढाँचे में ढल जाय।" मैं तो अब यहाँ तक सोचने लगा था कि—"डाकुओं का सारा दल मेरी बात माने अथवा नहीं, कम से कम बन्नो को तो मैं डाकुओं से अलग अपनी राह पर लाने में सफल हो ही गया हूँ। जीवन में एक आदमी का भी मन पूर्णरूप से जीत लेना कम नहीं, बल्कि बहुत बड़ी बात है।"

कभी-कभी मेरे मन में ऐसे भी विरोधी विचार उत्पन्न होते कि—"बन्नो को अपना बनाकर मैं कर्तव्य दोष से किसी तरह भी मुक्त नहीं हो सकता और तब मेरा प्यार कुछ क्षण

में ही एक भयंकर भूल के रूप में दिखायी देने लगता था।" मैं सोचने लगता—"मुझे अविलम्ब अपने को पुलिस के हवाले कर देना और एक पुलिस अधिकारी के विभागीय आचरण-भ्रष्टता का दण्ड भोग कर उसका प्रायःश्चित्त कर अपने को पापमुक्त कर लेना चाहिये।" परन्तु मनुष्य अपने लिये यदि पाप नहीं भी करना चाहे, तो भी उसे दूसरों के लिये समय-समय पर पाप करने के लिये विवश हो जाना पड़ता है। और ऐसे ही पापको हजार पुण्य से भी बढ़कर माना गया है।"

मनःस्थिति के उतार चढाव में मैं पुनः सोचने लगा—"आखिर जिसकी प्रेरणा से मैं इन सारी बातों की ओर अपना मन दौड़ा रहा हूँ, उस बन्नो का क्या होगा! मेरे बंदी हो जाने के बाद वह भी निश्चित ही अपने को पुलिस के हवाले कर देगी और उसे तब फाँसी के तख्ते से कोई भी उतारने वाला नहीं होगा। साथ ही साथ अपनी बूढ़ी माँ का कुम्हालाया मुखमंडल जब मेरी आँखों में उतर आया तो एकाएक मेरे मन में उठते सारे अच्छे अथवा बुरे विचार बदल गये, जिस तरह हमारे जैसे कितने लोगों के बदल जाते होंगे।

जब मेले के तीन दिन सकुशल बीत गये और कहीं भी कोई चोरीडकैती की घटना नहीं हुयी, तो मैंने अपने सारे विभागीय लोगों, जो वहाँ उपस्थित थे, के साथ संतोष की स्वाँस ली। बड़े साहब को मेले के अंतिम दिन तक वहाँ रहना था। परन्तु माणिक जी और उनकी पुत्री, जिन्हें अब तक मैं देख नहीं सका था, मेले के चौथे दिन ही वहाँ से जाने वाले थे। अतः उनको सम्मानित करने के लिए अपने विभाग की ओर से मैंने दोपहर के भोजन का निमंत्रण दिया। बड़े साहब के मित्रों

में होने के कारण मुझे उनको स्वागत-सत्कार द्वारा प्रसन्न एवं प्रभावित कर देना था।

भोजन के पश्चात जब हम लोग आपस में उस मेला तथा उस क्षेत्र के अन्य विशिष्ट स्थानों के विषय में बातचीत करने लगे तो हमारी वार्ता में माणिकजीने विशेषरूप से उत्साह दिखलाया। जम्पा के विषय में जो कुछ भी अधूरी जानकारी हमलोगों को अब तक थी, वह माणिक जी के द्वारा पूर्ण हो गयी। उन्होंने मेला में आकर बस तीन दिनों में ही जम्पा से संबंधित सारी बातों का पता लगा लिया था। एक दिन वे जम्पा की प्राचीन गढ़ी में भी गये थे, जहाँ एक बहुत प्राचीन और प्रसिद्ध देवी का मंदिर था। मंदिर के बूढ़े पुजारी ने उन्हें एक साधारण यात्री समझकर उनसे जम्पा के विषय की न बताने योग्य बातें भी बतलायी थी। हमारे बड़े साहब तथा मेरे साथी बहुत देर तक जम्पा से संबंधित रोचक कथायें माणिक जी के मुँह से सुनते रहे, और उस दिन हमें ज्ञात हुआ कि—"जम्पा वास्तव में डाकू नहीं, एक प्रतिष्ठित एवं धनी मानी जमीन्दार था। उसके पूर्वज तथा स्वयम् वह भी किसी भी सरकार के भक्त थे और उस क्षेत्र पर कई सौ वर्षों से शासन करते आ रहे थे। जम्पा का वास्तविक नाम जयपाल सिंह था, जो बड़े ही नेक एवं उच्च-विचार का समझा जाता था। उसके पास पैसे की भी कमी नहीं थी और चारों ओर इस बात की चर्चा थी, कि उसने गुप्त, धरती में गड़े निजी कोष मे करोड़ों का सोना है। सरकारी कर्मचारी, विशेषकर पुलिस अफसरों का वह एक प्रकार से दास था और प्रत्येक वर्ष कई हजार रुपये उनके स्वागत-सत्कार में उड़ा देता था, जिससे उसके धनी होने की बात पुष्ट होती जाती थी।

एकबार जिले के कुछ वरिष्ठ राज्य कर्मचारी जिसमें वहाँ के पुलिस अफसर भी थे, सबने मिलकर तय किया कि जयपाल सिंह को डरा-धमका कर उससे कुछ सोना लिया जाय। इस कार्य के लिये एक निश्चित कार्यक्रम बनाकर इस क्षेत्र में कुछ ऐसे ही कर्मचारियों की नियुक्ति कर दी गयी जो इस प्रकार के कार्यों में दक्ष समझे जाते थे। सबने मिलकर जयपाल सिंह को तंग करना प्रारंभ कर दिया। फलस्वरूप जब बात बहुत बढ गयी तो एक दिन अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध किये गये व्यवहार के कारण जयपाल सिंह तथा एक पुलिस अधिकारी में कुछ वाद-विवाद हो गया। अतः पुलिस अधि-कारियों ने आपस में परामर्श कर जयपाल सिंह पर डाकुओं के रखने तथा उनको पनाह देने का आरोप लगाया। जब जयपाल सिंह को गिरफ्तार करने के लिए उनपर वारंट निकाला गया तो उन्होंने पुलिस अधिकारियों के दूषित विचार और घृणित मनोवृत्ति की सारी कथा से पुलिस के उच्च-अधि-कारियों को अवगत कराया, साथ-ही-साथ उन्होंने सरकार को भी इसकी सूचना दे दी। परन्तु लालफीता-शाही के कारण उसके प्रार्थनापत्र पर कुछ भी विचार नहीं हुआ।

इधर दिन-रात पुलिसवाले उसको तथा उसके सम्पर्क में रहनेवाले लोगों को परेशान करना जब बन्द नहीं किये तो जयपाल सिंह के लिए बगावत करने के अतिरिक्त अन्य कोई चारा नहीं रहा।

अन्त में एक दिन विवश होकर उसने रातों-रात अपने गढ को खाली किया और उसी रात वहाँ के थाने को वहाँ के अफसरों के साथ जलाकर भस्म कर दिया। एक माह के

अन्दर उसके द्वारा कतल और डाके की इतनी घटनायें हुई कि सरकार के भी कान तत्काल खड़े हो गये। परन्तु सरकार द्वारा वास्तविक मूल बातों की जाँच कराने का आज तक कोई प्रयास नहीं हुआ था। अपने झूठे तथा बेईमान अधिकारियों की सूचनाओं पर ही जयपाल सिंह के विरुद्ध कोई भी सरकारी अभियान अब तक चलाया गया है। एकबार तो एक पुलिस-अफसर को जयपाल सिंह से बातें करने के लिए नियुक्त भी किया गया और उसकी इच्छा थी कि वह बिना शर्त पुलिस को आत्मसमर्पण कर दे। कारण यह कि डाकुओं की जिन्दगी व्यतीत करना उसके स्वभाव के प्रतिकूल पड़ता था। परन्तु पुलिस के उस अधिकारी ने भी जयपाल सिंह को भयभीत हुआ जान कर उससे तीन दिन के अन्दर एक मन सोने की माँग की। और ऐसा नहीं करने पर उसे जेल भेजने तथा फाँसी के तख्ते पर लटका दिये जाने की धमकी दी गयी। जयपाल सिंह ने उस अधिकारी की सारी चिट्ठियों को सरकार में भेज दिया, परन्तु नीचे से ऊपर तक अफसरशाही के बिछे जाल में न्याय तो एक छोटी-सी पोठिया मछली की तरह फँसी हुई थी, जो लाख छट-पट, छट-पट करके भी उससे मुक्त नहीं हो पाती थी।

जम्पा ने उस पुलिस अधिकारी का सिर तीन दिनो के अंतर्गत काट लिया और एक मन लोहे के साथ कटे हुए सिर को, पुलिस के सदर कार्य्यालय में भेज दिया। तथा सरकार के विरुद्ध खुला विद्रोह प्रारंभ कर दी। डाकू का जीवन व्यतीत करते हुए अपने चरित्रबल एवं इमानदारी के कारण ही पुलिस जैसे बड़े संगठन के विरुद्ध वह लड़ रहा है।''

माणिकजी ने आगे बतलाया कि—"जम्पा पुजारी से खुलकर अपने मनकी बातें करता है। उसके मत से सामाजिक विषमता के कारण ही व्यक्ति में असंतोष उत्पन्न होता है तथा असंतुष्ट व्यक्ति ही समाज विरोधी संगठनों में सम्मिलित होने को बाध्य हो जाते हैं। साथ ही साथ जिस समाज मे विषमता है, उसके द्वारा बनायी गयी सरकार किसी को भी संतुष्ट नहीं रख सकती। एक ओर तो ऐसी सरकार अपने सरकारी अधिकारियों से भय खाती है और दूसरी ओर चाहती है कि शासन सुचारु रूप से चले, जो सर्वथा असंभव है।"

जम्पा को विश्वास था कि—"जब चोर बाजारी करनेवाले, रिश्वत लेनेवाले और विविध प्रकार के भ्रष्टाचारी भी सरकार चलानेवालों को प्रसन्न कर अपने स्तित्व को सुरक्षित रख सकते हैं तथा अपने संगठनों को सरकार द्वारा मान्यता दिला सकते हैं, तो डाकू तो ऐसे लोगों से हजार गुना अच्छे हैं। उसकी धारणा थी कि, थोड़े ही दिनों में उसके अनुयाइयों की संख्या मे भारी वृद्धि होगी।"

जम्पा-संबंधी बातों को सुनने में हमलोग इतने लीन हो गये थे कि चार घंटे बीत जाने पर भी हमलोगों को पता नही चला कि अब काफी देर हो चुकी है। हमारे हृदय में जम्पा के प्रति जो कुछ भी दुर्भावनायें बनी हुई थी, वह अचानक न जाने कहाँ विलीन हो गयी। आज तक हमलोगों ने उसके दमन के अतिरिक्त वास्तविकता को ढूँढ़ने का प्रयास नहीं किया था। यदि कुछ समय पूर्व इस बात का प्रयत्न हुआ होता तो वह पुलिस से समझौता भी कर सकता था। जिमसे

अन्दर उसके द्वारा कतल और डाके की इतनी घटनायें हुई कि सरकार के भी कान तत्काल खड़े हो गये। परन्तु सरकार द्वारा वास्तविक मूल बातों की जाँच कराने का आज तक कोई प्रयास नहीं हुआ था। अपने झूठे तथा बेईमान अधिकारियों की सूचनाओं पर ही जयपाल सिंह के विरुद्ध कोई भी सरकारी अभियान अब तक चलाया गया है। एकबार तो एक पुलिस-अफसर को जयपाल सिंह से बातें करने के लिए नियुक्त भी किया गया और उसकी इच्छा थी कि वह बिना शर्त पुलिस को आत्मसमर्पण कर दे। कारण यह कि डाकुओं की जिन्दगी व्यतीत करना उसके स्वभाव के प्रतिकूल पड़ता था। परन्तु पुलिस के उस अधिकारी ने भी जयपाल सिंह को भयभीत हुआ जान कर उससे तीन दिन के अन्दर एक मन सोने की माँग की। और ऐसा नहीं करने पर उसे जेल भेजने तथा फाँसी के तख्ते पर लटका दिये जाने की धमकी दी गयी। जयपाल सिंह ने उस अधिकारी की सारी चिट्ठियों को सरकार में भेज दिया, परन्तु नीचे से ऊपर तक अफसरशाही के बिछे जाल में न्याय तो एक छोटी-सी पोठिया मछली की तरह फँसी हुई थी, जो लाख छट-पट, छट-पट करके भी उससे मुक्त नहीं हो पाती थी।

जम्पा ने उस पुलिस अधिकारी का सिर तीन दिनो के अंतर्गत काट लिया और एक मन लोहे के साथ कटे हुए सिर को, पुलिस के सदर काय्यालिय में भेज दिया। तथा सरकार के विरुद्ध खुला विद्रोह प्रारंभ कर दी। डाकू का जीवन व्यतीत करते हुए अपने चरित्रबल एवं इमानदारी के कारण ही पुलिस जैसे बड़े संगठन के विरुद्ध वह लड़ रहा है।"

माणिकजी ने आगे बतलाया कि—"जम्पा पुजारी से खुलकर अपने मनकी बातें करता है। उसके मत से सामाजिक विषमता के कारण ही व्यक्ति में असंतोष उत्पन्न होता है तथा असंतुष्ट व्यक्ति ही समाज विरोधी संगठनों में सम्मिलित होने को बाध्य हो जाते हैं। साथ ही साथ जिस समाज मे विषमता है, उसके द्वारा बनायी गयी सरकार किसी को भी सतुष्ट नहीं रख सकती। एक ओर तो ऐसी सरकार अपने सरकारी अधिकारियों से भय खाती है और दूसरी ओर चाहती है कि शासन सुचारु रूप से चले, जो सर्वथा असंभव है।"

जम्पा को विश्वास था कि—"जब चोर बाजारी करनेवाले, रिश्वत लेनेवाले और विविध प्रकार के भृष्टाचारी भी सरकार चलानेवालों को प्रसन्न कर अपने स्तित्व को सुरक्षित रख सकते हैं तथा अपने संगठनों को सरकार द्वारा मान्यता दिला सकते हैं, तो डाकू तो ऐसे लोगों से हजार गुना अच्छे हैं। उसकी धारणा थी कि, थोड़े ही दिनों में उसके अनुयाइयों की संख्या में भारी वृद्धि होगी।"

जम्पा-संबंधी बातों को सुनने में हमलोग इतने लीन हो गये थे कि चार घंटे बीत जाने पर भी हमलोगों को पता नहीं चला कि अब काफी देर हो चुकी है। हमारे हृदय में जम्पा के प्रति जो कुछ भी दुर्भावनायें बनी हुई थीं, वह अचानक न जाने कहाँ विलीन हो गयी। आज तक हमलोगों ने उसके दमन के अतिरिक्त वास्तविकता को ढूँढ़ने का प्रयास नहीं किया था। यदि कुछ समय पूर्व इस बात का प्रयत्न हुआ होता तो वह पुलिस से समझौता भी कर सकता था। जिससे

आज तक न जाने कितनी हत्यायें जो उसके द्वारा हो चुकी थी नहीं होतीं। परन्तु बीती बातों के सोचने में अब कोई लाभ नहीं था। बहुत वाद-विवाद के पश्चात् बड़े साहब पर इस सबध में सरकार से बाते करने का भार सौंप कर, उस दिन माणिक जी से मैंने रुक जाने का अनुरोध किया, जिसे उन्होंने मान भी लिया। दूसरे दिन बड़े तड़के हमलोग माणिक जी के साथ जम्पा की गढ़ी देखने के लिए गये। गढ़ी को अच्छी तरह देख लेने के पश्चात् हमलोग देवी के मंदिर पर पहुँचे। गढी में घूमते समय माणिक जी हमलोगों को रास्ता बता रहे थे। उनके अबाध गति से किसी भी स्थान पर पहुँच जाने और हमलोगों को प्रत्येक बातें इस तरह बतलाने से मानो उन्होंने कभी इसे स्वयम् अपनी आँखों देखा है, ऐसा ज्ञात हो रहा था कि वे स्वयम् उस गढ़ी में बहुत दिनों तक रह चुके है। गढ़ी में बने भवनों की उस समय दुर्दशा देख कर कई बार उनके चेहरे पर उदासी के चिन्ह भी आये। परन्तु उन्होंने अपने को सँभाला तथा इस तरह के उपक्रम करते रहें जिससे कोई उनके दुख को भाँप न सके।

बूढ़े पुजारी से जब मैंने जम्पा के विषय में बातें करना प्रारंभ की तो उसने माणिक जी द्वारा बतायी गयी सारी बातों को ही दुहराया। अंत में जब बड़े साहब ने पुजारी से कहा कि—"वे जम्पा से किसी तरह भी बातें करना चाहते है, तो वह इसके लिये तैयार हो गया। परन्तु इस कार्य के लिये उसने एक माह की अवधि माँगी। बड़े साहब ने पुजारी की बात मान ली।

मेला-शिविर में लौट कर हम लोगों ने जम्पा के बिषय पर अन्य जानकारी भी माणिक जी से की। माणिक जी मुझसे

विशेष रूप से प्रभावित थे, और यह जानकर बहुत ही प्रसन्न हुए कि मैं सफलतापूर्वक जम्पा के यहाँ जासूसी भी कर चुका हूँ। उन्होंने मेरी पीठ ठोंकी और बहुत देर तक मेरी सराहना करते रहे। मुझे उनकी प्रशंसा पर बड़ा गर्व हुआ। बातों-बातो मे जब मैंने माणिक जी से यह भी बतला दिया कि—'मै पहिला पुलिस अफसर हूँ जिसे जम्पा बहुत दिनों तक साथ रखकर भी पहिचान नहीं सका।" मेरी बातों को सुनकर एकाएक माणिक जी कुछ गंभीर हो गये परन्तु थोड़ी ही देर मे वे पुनः अपनी पूर्व मनःस्थिति में आ गये और मेरे बडे साहब से, मुझे कोई विशेष पुरस्कार देने के लिये बार-बार आज्ञा माँगने लगे। बड़े साहब भी उस समय बहुत प्रसन्न मुद्रा मे थे अतः उन्होंने हँसते-हँसते उनकी बातों को मान लिया। बडे साहब की स्वीकृति मिल जाने के पश्चात् वे पुनः एक बार गभीर हो गये। थोड़ी देर में ही जब उन्होंने मुझे अपनी बेटी देकर पुरस्कृत करने की इच्छा प्रगट की तो एकाएक मेरा सिर चकराने लगा। मुझे कुछ ऐसा भय होने लगा कि बड़े साहब भी कहीं इसके लिये विवश करने लगें तो आखिर क्या होगा!

मैंने जब सहमी हुई दृष्टि से उनकी ओर देखा तो मुझे ऐसा प्रतीत हुआ, मानों वे भी माणिक जी के प्रस्ताव का समर्थन करना चाहते हो। वे इस समय बहुत ही प्रसन्न दिखलायी दे रहे थे। चुप रहने से कहीं वे इसे मेरी स्वीकृति न समझ लें अतः मैंने उनकी ओर मुड़कर उनसे क्षमा माँगी। साथ ही साथ एक अपराधी की तरह बड़े साहब की ओर भी दृष्टि फिरा कर देख लिया। परन्तु माणिक जी मुझे सहज मे छोड़नेवाले नहीं थे। अतः उन्होंने मुझे झट इस संबंध में

सोचने समझने के लिए दो माह का समय दिया और उसी समय हमलोगों से विदा होकर अपनी बेटी के साथ नगर के लिए प्रस्थान कर दिया।

मेले के ठीक पन्द्रहवें दिन हमलोगों ने भी दुकानदारों को अपनी-अपनी दुकाने हटा लेने का आदेश देकर वहाँ से पुलिस व्यवस्था हटा लिया और थाने पर लौट आये। लगभग एक महीने के पश्चात् बड़े साहब द्वारा सरकार को लिखे गये पत्र का उत्तर मिला। सरकार ने उनको जम्पा से वार्ता करने की आज्ञा प्रदान की थी। परन्तु इस अवधि में एक साथ ही उस क्षेत्र में तीन व्यक्तियों की हत्यायें कर दी गयी जिससे वर्षो से बने शान्त वातावरण में एक भारी खलबली-सी मच गयी। इन तीन हत्याओं को किसी समाचार पत्र ने तेरह और किसी-किसी ने तो तीस तक छापने में भी संकोच नहीं किया। बडे साहब तो इस घटने से बहुत ही क्षुब्ध हुए और मुझे सदर बुलाकर इस विषय में पूछताछ की। उनको इस बात का बहुत दुख था कि जम्पा के संबंध में उन्होंने सरकार को बहुत कुछ नमक-मिर्च मिलाकर लिखा था और उन्हें ऐसी आशा भी थी कि सरकार से उसे रियायत दिलाने में वे सफल भी हो जायेंगे। परन्तु इन तीन हत्याओं के हो जाने से उनकी सारी आशाओं पर पानी फिर गया। उन्हें अब जम्पा के प्रति सरकारी रुख में परिवर्तन हो जाने की भी सूचना मिल चुकी थी। साथ ही साथ जम्पा से नियत समय पर वार्ता करने के लिये अब हमारे बड़े साहब के बदले सरकार ने हमारे विभाग के सर्वोच्च अधिकारियों को भेजने का निश्चय किया था। इसका स्पष्ट अर्थ यही था कि सरकार का स्थानीय पुलिस पर

विश्वास नही। हमलोगों को जम्पा द्वारा प्रभावित कर लिया जाना भी सरकार के सन्देह का एक कारण हो सकता था।

मैंने उस समय हुई उन तीन हत्याओं के संबंध में अपने बड़े साहब से उस दिन कुछ भी कहने से इनकार कर दिया और पुनः थाने लौट आया। दो दिनों लगातार छान-बीन करने के पश्चात् मुझे ज्ञात हुआ कि मारे गये वे तीनों व्यक्ति उस क्षेत्र के कुख्यात डाकू तथा जम्पा के बहुत बड़े विश्वास-पात्र थे। उनके विरुद्ध दर्जनों हत्यायें तथा डकैतियों के अभि-योग लग चुके थे। ऐसे व्यक्तियों का मारा जाना एक साधा-रण कार्य नहीं था अतः इस रहस्य को पता लगाने के लिए मै एक दिन पुजारी के यहाँ पहुँचा। पुजारी ने बतलाया कि— "वे तीनों डाकू इधर कई महीनों से जम्पा के बताये मार्ग पर नहीं चल कर अपनी मनमानी करने लगे थे। उन पर चरित्र-हीनता का भी दोष लगाया गया था। गत मेले के अवसर पर जम्पा ने उन्हें बुलाकर चेतावनी दिया था कि वे संभल जायँ। परन्तु उन लोगों ने अपने सरदार की बातों का उल्लंघन कर दिया। इसीलिये उन्हें जम्पा ने प्राणदण्ड दिया है।" पुजारी की बातों पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं था, अतः मैंने बड़े साहब को सारी बातों की सूचना भेज दी।

अन्त में वह दिन भी आ गया जिस दिन हमलोगों को जम्पा से मिलने के लिए घनघोर जंगलों के बीच एक निर्जन स्थान पर जाना था और हम तीनों आदमी जिसमें मैं तथा मेरे बड़े साहब भी थे उस स्थान पर पहुँचे जहाँ नदी के तट पर जम्पा ने हमलोगों से मिलने का वचन दिया था। बड़े साहब ने इस अवसर पर माणिकजी को भी, विशेषरूप से

वहाँ आने के लिए निमंत्रित किया था। परन्तु पता चला कि वे चिकित्सा कराने के लिए कुछ दिनों से बम्बई चले गये हैं।

हमारे लाख मना करने पर भी सरकार द्वारा इस कार्य के लिए भेजे गये अधिकारी ने अपने साथ कुछ सशस्त्र पुलिस के जवानों को ले लिया, जो बार्ता की शर्तों के विरुद्ध था। साथ-ही-साथ यह पुलिस विभाग के एक उच्च अधिकारी की भीरुता का भी द्योतक था। परन्तु ऐसे भीरु लोगों की हमारे विभाग में कमी नहीं यह सोचकर मैं मौन रह गया। फिर भी मुझे कुछ-कुछ संदेह होने लगा था कि शायद इतने अधिक लोगों को देखकर जम्पा हमारे यहाँ आने से इनकार कर दे। परन्तु मेरी शंकायें निर्मूल सिद्ध हुयीं। जम्पा को दूर से देखकर ही मैं पहिचान गया और अपने साथ दोनों उच्च अधिकारियो को बतला दिया कि यही जम्पा है। जम्पा निर्संकोच और निशंक वहाँ आकर हमलोगों से बातें करने लगा। अन्त मे जब हमारे साथ गये अधिकारियों ने उससे बिना किसी शर्त, आत्मसमर्पण कर देने को कहा, तो क्रोध में एकाएक वह गरज उठा और हमलोगों से अपना प्रस्ताव तुरत वापस लेने को कहा। परन्तु इसके पूर्व ही हमारे बड़े साहब अपने सिपाहियों को उसे पकड़ लेने की आज्ञा दे चुके थे। मुझे पुनः एकबार बड़े लोगों की विश्वासघाती नीति से घृणा उत्पन्न हो गयी और इस सम्बन्ध में मुझे तुलनात्मक विवेचना की कसौटी पर कसकर अपने विभाग तथा जम्पा दोनों ही के विषय में निश्चित् कर लेना पड़ा कि डाकू होते हुए भी जम्पा का चरित्र बहुत ही ऊँचा है। मुझे उसके बन्दी हो जाने का

बडा दुख होता परन्तु क्षण मात्र में ही पासा पलट गया। उसके द्वारा एक विशेष संकेत मिलते ही बात-की-बात में, हमें कई हजार जंगली लोगों ने घेर लिया। अब उसके किसी विशेष संकेत मात्र की देर थी जिससे पलक झँपते हमारा कुछ भी अनिष्ट हो सकता था। परन्तु बड़े साहब ने जम्पा की ओर अपनी मित्रता का हाथ बढ़ा दिया। साथ-ही-साथ पश्चाताप एव दुःख प्रगट करते हुए उससे बार-बार क्षमा माँगने लगे। जम्पा की आज्ञा पाकर उसके सारे आदमी यंत्र संचालित मानव की तरह तुरत जंगल की हरियाली में न जाने कहाँ विलीन हो गये ओर वह स्वयम् हमलोगों को पहुँचाने के लिए अकेले हमारे साथ-साथ शिविर-थाने तक आया। उसने माणिकजी तथा पुजारी द्वारा कही गयी अपनी रामकहानी को रास्ते में हमसे कह सुनायी।

× × ×

हमारे बड़े साहब तथा राजधानी से आये अधिकारी जम्पा की शक्ति और संगठन को देख चुके थे, अतः वे उससे बहुत ही भयभीत थे। इसलिये उनलोगों ने जम्पा को सरकार के साथ समझौता करा देने का बार-बार आश्वासन दिया। परन्तु जम्पा अपने साथ कोई भी रियायत अथवा छूट नही चाहता था। वह उसी दिन से डाका डालना अथवा हत्या करना बन्द कर देने के लिए तैयार था, जिस दिन उसे विश्वास हो जाय कि—"साधारण एवं गरीब लोग पुलिस द्वारा सताये नहीं जायेंगे।" सरकार द्वारा इस दिशा में कदम उठाते ही वह उस क्षेत्र को एकदम छोड़ कर कहीं नगर में चले

जाने के लिए भी तैयार था। साथ-ही-साथ उसकी ऐसी भी इच्छा थी कि अपने उद्देश्य की पूर्ति के बाद तुरत वह पुलिस को आत्मसमर्पण कर दे और न्यायालय से अपने को निरपराध घोषित कराने की चेष्टा करे। अपने द्वारा किये गये किसी भी कार्य को उसने अन्ततक अपराध के रूप मे स्वीकार नहीं किया।

जम्पा हमारे शिविर-थाने के द्वार तक निर्भीक शेर की तरह आया और उसी तरह हमलोगों के बीच से निर्भय और निडर वापस चला गया। अब किसी को उसे छेड़ने का साहस नहीं था।

लगभग पन्द्रह दिनों के पश्चात् मुझे वहाँ के छः अस्थायी थानों को हटा लेने का सरकार द्वारा आदेश मिला। साथ ही साथ अब उस क्षेत्र में मेरी भी कोई आवश्यकता नहीं रही।

मेले में बन्नो से मुझे एक रात भेंट हुई थी। उसके पश्चात् उसका कुछ भी पता नहीं चला अतः मेरा मन सदा उद्विग्न रहता था। सरकारी काम से एक बार मैं अपने नगर में भी गया था और अपनी माँ से लजाते-लजाते उस लड़की के विषय मे पूछा भी। परन्तु माँ को भी इधर उसका न कोई हाल मिला था और न उसने माँ से इधर भेंट ही किया था। माँ भी उसके लिए बहुत चिन्तित थी। उनकी बातों से मुझे ऐसा आभास मिला कि वे भी बन्नो के विषय में कुछ अधिक जानकारी प्राप्त करने को उत्सुक है। परन्तु मैंने बात को आगे नहीं बढ़ाया।

न जाने क्यों मुझे अब भी ऐसा लगता था कि बन्नो मेरे ही नगर मे है। अतः तीन महीनों के पश्चात् मैं कुछ दिनों की छुट्टी लेकर घर गया और अपने नगर के कोने-कोने को बन्नो के लिए छान डाला। परन्तु उसका कहीं पता जब नही चला तो मुझे बड़ी निराशा हुई।

इस समय माणिक जी के मेरे नगर में स्थायी रूप से रहने लगे थे और मुझसे उनकी अब पूर्ण जान पहिचान हो गयी थी। अतः जब तक मैं घर पर रहा दिन में एक बार अवश्य उनसे मिलने जाया करता था। मुझे आशा थी कि यद्यपि मै उनकी पुत्री को मेले में नहीं देख सका, परन्तु घर पर किसी न किसी दिन अवश्य उससे साक्षात्कार होगा। परन्तु मेरी आशा पूरी नहीं हो सकी। माणिक जी तो घर पर जाते ही मुझसे बहुत प्रेम से मिलते और जब तक मैं उनके पास रहता, प्रत्येक क्षण मुझे प्रसन्न रखने की चेष्टा करते। उनके व्योहार से मुझे ऐसा प्रतीत होने लगा था कि वे मुझसे कोई अपने मन की बहुत गोपनीय भेद बताना चाहते हों। उनकी आँखों से भी मुझे बार-बार ऐसा संकेत मिला करता था। परन्तु न जाने क्यों इसे वे अपने मुँह से प्रकट नहीं कर सकते थे। दिन प्रति दिन जब उनसे मेरी घनिष्ठता बढ़ते गयी तो वे मेरे घर भी आने-जाने लगे और अल्प समय में ही उनसे मेरा मित्रवत् व्योहार हो गया। यद्यपि माणिक जी की आयु बहुत ही अधिक थी, फिर भी हमलोग किसी भी विषय पर आपस में निःसंकोच बातें करते थे।

एक दिन बड़े सबेरे मैं अपने बिस्तर पर लेटे-लेटे, उस दिन का समाचर पत्र पढ़ रहा था कि अचानक बड़े साहब की गाड़ी

आकर मेरे द्वार पर खड़ी हो गयी। उन्होंने आते ही मुझसे बतलाया कि जम्पा और दस्यु सुन्दरी बन्नो, दोनों ही एक दूसरे की गोली के शिकार बन गये हैं। उनका शव भी पुलिस को मिल गया था, जिसकी पहिचान हो जाने के पश्चात् उसे जल में प्रवाहित कर दिया गया। बड़े साहब केवल यही सवाद कहने के लिए, मेरे यहाँ तीन सौ मील मोटर से दौड़ कर आये थे। बात भी ठीक ही थी, क्योंकि हमारे और उनकी नौकरी का आधा समय जम्पा की खोज में ही बीता था। बड़े साहब को इस बात का बड़ा दुख था कि इस अवसर पर मैं वहाँ उपस्थित नहीं था। अन्यथा मुझको कोई बहुत बड़ा पुरष्कार मिल जाता। फिर भी मेरे पिछले कार्यों के आधार पर उन्होंने सरकार को मुझे पारितोषिक देने के लिए जोरों की सिपारिश लिख दिया था।

जम्पा और बन्नो की मृत्यु का समाचार सुनकर मुझे बड़ा दुख होता, परन्तु लाख प्रमाण दिये जाने पर भी मुझे इस बात पर विश्वास नही हुआ। मेरा हृदय और आत्मविश्वास पुकार-पुकार कर कह रहा था कि—"बन्नो और जम्पा मर नही सकते।"

मैंने बड़े साहब से इस घटने के विषय में कुछ और अधिक प्रकाश डालने का जब अनुरोध किया तो उन्होंने इसपर अपनी असमर्थता प्रकट की। वे केवल इतना ही और बता सके कि—"जम्पा शायद बन्नो से बलात् विवाह करना चाहता था, जिसके फलस्वरूप दोनों में गोली चल गयी थी।"

बड़े साहब ने बन्नो को स्वयम् देखा नहीं था। परन्तु उसके अद्वितीय सुन्दरी होने की चर्चा उनके कानों तक पहुँच

चुकी थी। मैंने बड़े साहब से जम्पा के मारे जाने से सम्बन्धित अपना कुछ भी विचार प्रगट नहीं किया। परन्तु मुझे विश्वास हो गया कि इस घटने के द्वारा दस्युराज ने अवश्य कोई बड़ी चाल चली है। बन्नो और उसके पवित्र सम्बन्ध की जानकारी मुझे सबसे अधिक थी। यदि बीच में कोई ऐसी घटना घटित हुयी होती तो उसे बन्नो मुझसे अवश्य बता देती।

परन्तु जब वर्षों बीत जाने पर भी बन्नो और जम्पा का मुझे कोई पता नहीं चला, तो मुझे उनकी मृत्यु पर कुछ-कुछ विश्वास होने लगा। इस अवधि में उस जंगली इलाके तथा आसपास में किसी भी डाके अथवा हत्या की घटना घटित नहीं हुयी जो जम्पा द्वारा आक्रांत था। अत. सरकार के आदेश से वहाँ के बचे हुए थानों को भी उठा लिया गया।

बड़े साहब और मेरी पदोन्नति, अपने विभाग के कुछ उच्चाधिकारियों के विरोध करने पर भी हो गयी। माँ की इच्छानुसार मैंने कुछ समय के लिये अपनी नियुक्ति अपने ही जिले में करा ली।

यद्यपि मेरी माँ मेरी पदोन्नति हो जाने से बहुत प्रसन्न थी, परन्तु अभी तक मेरे विवाह करने से इनकार करते रहने के कारण मुझसे असंतुष्ट भी रहती थी। उन्हें अबतक विश्वास था कि मैं बन्नो से ही अपना विवाह करना चाहता हूँ और किसी कारणवश इसमें बिलम्ब हो रहा है। परन्तु एक दिन जब उन्होंने मुझसे पूछा कि—"आखिर किसी एक लड़की के

लिए तुम कब तक क्वाँरा रहोगे !" तो मैंने एक निर्लज्ज बेटे की तरह उन्हें उत्तर दे दिया कि—"जब तक वह लड़की न मिल जाय।" माँ भी उस दिन इस विषय पर मुझसे झगड़ा करने के लिए तैयार थी, अतः उन्होंने मुझसे झट दूसरा प्रश्न भी पूछ दिया। "यदि वह तुम्हें जीवन भर नहीं मिले तो ?"

"तो मैं जीवन भर कुआँरा ही रह जाऊँगा !" मैंने बिना कुछ सोचे-समझे उत्तर दे दिया।

माँ के कोमल हृदय पर मेरी बातों का क्या प्रभाव पड़ा होगा, इसे मैंने बाद में अनुभव किया, और उस दिन के पश्चात् मैं जब कभी भी उनके सामने गया एक अपराधी की तरह मेरा मस्तक उपर नही उठ सका।

फिर भी माँ का प्यार मेरे प्रति कम तो नहीं हुआ परन्तु उन्होंने तब से कभी भी मुझसे मेरे विवाह की चर्चा नहीं की। हाँ, मेरे अनेक परिचित और संबंधी लोगों ने इस दिशा में अपना प्रयत्न जारी रखा और मुझसे विवाह की स्वीकृति लेने के लिए प्रत्येक संभव उपाय किये। कई बार तो सुन्दर-से-सुन्दर लड़कियाँ ठीक की गयी, जिनमें से कुछ आकर मुझसे स्वयम् मिली भी और अपनी विविध प्रकार की अदाओं से मुझे अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयत्न भी किया। परन्तु बन्नो के अतिरिक्त मेरे हृदय में अब किसी के लिए भी स्थान नहीं था। इसीलिये हमारे कुछ साथी-सम्बन्धी, हमसे असंतुष्ट भी रहने लगे थे। कभी-कभी मैं इस विषय पर सोचता कि— "मान लो, यदि मैं माँ, और अपने सगे-सम्बन्धियों तथा माणिक जी की तरह शुभचिन्तकों की संतुष्टि के लिये अपना

विवाह कर भी लूँ और विवाह के पश्चात् यदि बन्नो से मेरी मुलाकात हो भी जाय जो असंभव भी नहीं, तो उस समय मैं उससे कौन-सा मुँह दिखलाऊँगा ! वह मुझे तब एक कायर, डरपोंक और धोखेबाज मनुष्य अवश्य समझ लेगी।"

इस समय मैं एक नीरस जीवन व्यतीत कर रहा था जिसमें केवल बन्नो के नहीं रहने के कारण चारो ओर अभाव ही अभाव दिखलायी देता था। यदि मेरे जीवन में कुछ आर्द्रता लाने वाली वस्तु शेष बची थी तो वह बन्नो के प्रेम की कुछ स्मृतियाँ मात्र थीं, जो अब भी मेरे हृदय में सुरक्षित थी, और उसी से मैं संतुष्ट रह कर अपने मन को बहलाया करता था। इस समय माणिक जी का मुझसे मिलने का कार्यक्रम क्रमशः बढ़ते जा रहा था और अब वे कई बार दिन तथा रात में मेरे घर आया जाया करते थे। उनकी बातों से स्पष्ट ज्ञात होता कि मुझसे मिले बिना उनको एक घड़ी भी चैन नहीं रहता था। जब कभी वे मेरे घर आते और घंटो हमारी माँ से अपनी पुत्री की चर्चा करते, तो मुझे बड़ी लज्जा आती। अतः जब मैं वहाँ से जाने लगता तो वे बलात् मेरा हाथ पकड कर बैठा देते। माँ को उनकी बातें बहुत अच्छी लगती थी। इधर कुछ दिनों से वे हमारे पीछे इस तरह हाथ धोकर पड गये थे कि मुझसे मिलते ही वे अपनी पुत्री की शादी के अतिरिक्त अन्य कोई बात ही नहीं करते। कई दिन तो जब मैंने उनकी बातों को अनसुनी कर दिया तो वे बच्चों की तरह रोने भी लगे। ऐसी स्थिति में मैं बड़ी उलझन में पड़ जाता था। अपने विवाह से इनकार करने के पूर्व मुझे सोचना पड़ता कि—"भविष्य में आखिर मेरा क्या होनेवाला है ?"

कभी-कभी मुझे इस बात पर भी बड़ा खेद होता कि—"मनुष्य अपने भविष्य के सम्बन्ध में क्यों अनभिज्ञ रहता है, आखिर वह कौन-सी शक्ति है जो उसे अपने प्रति अन्धकार में रखती है! सबसे बड़ी कठिनायी का अनुभव तो मुझे तब होता जब मैं प्रयत्न कर भी नहीं जान पाता कि—"मैं क्या चाहता हूँ ?" और इसीलिये मुझे कभी-कभी अपने-आपसे भी डर लगने लगता था। अपने सम्बन्ध की बातों को सोचते-सोचते कई बार तो मैं इस निष्कर्ष पर भी पहुँच जाता कि—"मनुष्य को किसी से प्यार नहीं करना चाहिये।" परन्तु जब मेरा मन शान्त रहता तो मुझे आश्चर्य होने लगता कि—"कोई मनुष्य प्यार के बिना जीवित कैसे रहता है!" जब संसार में रहने-वालों के लिए किसी को प्यार करना आवश्यक है तो यह भी आवश्यक है कि कोई उसको भी प्यार करे और तभी तो मनुष्य केवल अपने लिये ही नहीं दूसरों के लिए भी जीने की कोशिश करता है, और अवसर मिलने पर किसी के लिए अपना प्राण भी उत्सर्ग कर देता है।

एक दिन दूसरों के लिए जीने और मरने की कल्पना तथा उसकी बिवेचना मैं गंभीरता पूर्वक कर रहा था कि अनायास उसी समय मैंने देखा कि माणिक जी की कार मेरे मकान के हाते में प्रवेश कर रही है। माणिक जी ने कार से उतरते ही मुझसे कहा—"यदि तुम मेरी पुत्री से बिवाह नहीं कर सकते, तो यही बात मेरे सामने, मेरे यहाँ चलकर उससे कह दो। अब तो बात इतनी बढ़ चुकी है कि उससे तुम्हारा बिवाह नहीं करने का अर्थ तुम्हारा उसकी मौत चाहना है। मैं आज केवल इसी बात को तुमसे तय करने के लिए आया हूँ।"

उसदिन सचमुच मुझे न जाने क्या हो गया था कि माणिक जी के साथ ही उनके घर के लिए चल पड़ा। घर पहुँच कर माणिक जी ने परदे की ओट में अपनी पुत्री को लाकर बैठाया। उनके कुल की रीति के अनुसार विवाहित लड़की ही परदे के बाहर आ सकती थी। जिसके समक्ष वह प्रथम बार घूँघट हटा लेती उसे वह अपना पति मान लेती थी।

माणिक जी की बात सुनकर मुझे बड़ी घबड़ाहट हुयी। कहीं सचमुच उनकी लड़की मेरे सामने घूँघट खोलकर आ जाये तो मुझे बलात् उसका पति बनना पड़ेगा। परिणाम-स्वरूप उसे भी मेरी तरह आजीवन कुँआरेपन का दुख उठाना पड सकता था।

मैंने माणिक जी से हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ाते हुए अनुरोध किया कि—"ईश्वर के लिए वे अपनी लड़की से कह दे कि वह किसी भी अवस्था में अपना परदा न उठावें। उन्होंने मेरे सामने ही इस बातको अपनी लड़की से बतला दी और वहाँ से एकाएक उठ कर चले गये।

एक अनजान युवती के साथ, जिससे कोई परिचय न हो, बातें करना कोई साधारण साहस का कार्य नहीं था। मुझे एकाएक बड़ी हिचक और लज्जा का अनुभव होने लगा। परन्तु मुझे इस बातका संतोष था कि वह मुझसे दूर परदे की ओट में थी। एकबार तो मेरे मन में आया कि माणिक जी के वहाँ आने के पूर्व ही मैं वहाँ से भाग जाऊँ और उनसे फिर कभी भी नही मिलूँ। परन्तु ऐसा मैं चाहते हुए भी नहीं कर सका। माणिक जी की पुत्री अभी तक मौन थी और वह शायद मुझसे बातचीत करने का कोई बहाना ढूँढ़ रही थी। मैंने सोचा कि—वह

चाहती होगी कि मैं ही पहिले उससे बातचीत प्रारंभ करूँ। अत: मैंने जब उससे उसका नाम पूछ दिया और साथ-ही-साथ अपने प्रति उसके आकर्षण का कारण भी तो उसने बड़ी गंभीरता से मेरी बातों का उत्तर देना प्रारंभ किया—"उसकी दृष्टि में प्रेम और आकर्षण उत्पन्न होने का कोई निश्चित कारण नहीं होता। तभी तो एक डाकू की कन्या पुलिस अफसर और पुलिस अफसर डाकू की कन्या से भी प्रेम करने लगता है।" माणिक जी की पुत्री की बातों ने मुझे अचानक चौंका दिया। उस समय मुझे ऐसा ज्ञात होने लगा, मानों यह लड़की हमारे तथा बन्नो के प्रेम की ओर ही तो कहीं संकेत नहीं कर रही है। हो सकता था कि वह हमारे प्रेम की बातें किसी माध्यम से जान गयी हों।

उस लड़की से बहुत कुछ बातें हो जाने के पश्चात् भी जब मैं इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सका कि मैं उसे प्यार करूँ अथवा नहीं तो मुझे कुछ-कुछ झेंप और संकोच का अनुभव होने लगा। परन्तु अब मुझे इसमें किंचित भी सन्देह नहीं रहा कि वह लड़की मुझे हृदय से प्यार करती है और मैं यदि उसकी मौत नहीं चाहता तो मुझे भी उसे प्यार करना चाहिये। मेरा मन जो अब तक प्रेम की दिशा में सदा भीरु रहा, अब क्रमश: दृढ़ होते जा रहा था और उसमें काफी चंचलता भी आ गयी थी। परन्तु एकाएक पहली भेंट में मैंने किसी युवती से ऐसी बातें नहीं सुनी थी अत: मेरे मन में कुछ संशय का भी समावेश होने लगा और मैं यह निश्चित नहीं कर पाया कि मुझे इस समय क्या करना चाहिये! मैं बड़े असमंजस में था कि उसे मैं क्या उत्तर दूँ अत: हमारे कुछ क्षण मौन रह कर

बीते। परन्तु मेरे उत्तर में विलम्ब हो जाने के कारण जब वह फूट-फूट कर रोने लगी और सिसकियों के मध्यांतर में बार-बार संकेत करते रही कि—"वह मुझे प्यार करती है, तथा मेरे बिना वह जीवित नहीं रह सकती। साथ-ही-साथ उसने बड़ी दृढ़ता से जब यह भी कहा कि—"मुझे बन्नो को अब भूल जाना चाहिये क्योंकि अब वह मर चुकी है। यदि वह जीवित भी रहती तो उसे स्वीकार कर मेरा जीवन सुखमय नहीं रहना। कारण यह कि वह एक दस्युकन्या और मैं पुलिस अफसर था, जिसे हाल ही में अपनी इमानदारी, कर्तव्य-निष्ठा और बहादुरी के लिए बड़े-बड़े पारितोषिक मिले थे। यदि सबकुछ त्यागकर किसी भी परिस्थिति में बन्नो से विवाह भी कर लेता तो कानून इसे मान्यता नहीं देती। और तब बन्नो के साथ मुझे भी इसका कुफल भोगना पड़ जाता"।

उस समय उस युवती के भावनाओं की गहराई एवं तर्क पर मैं सचमुच मुग्ध तथा बेसुध होने लगा और बिना कुछ सोचे-समझे उसको आत्मसमर्पण कर दिया। मेरे पास अब उसकी बातों का कोई भी उत्तर नहीं बचा था। और बात भी सोलहो आने सच थी कि—"मैं भले ही किसी एक को प्यार करूँ परन्तु दूसरों को मैं अपने से प्यार करने से रोक भी तो नहीं सकता था। उस युवती के हृदय के उद्-गारों को मैंने मन-ही-मन कई बार दुहराया। इस समय तक मैं उसको देखने के लिए बेचैन हो रहा था। अतः यह सोचकर कि कहीं माणिक जी बीच ही में टपक न पड़ें और मैं उसके साक्षात्कार-सुख से वंचित न रह जाऊँ, दौड़ कर मैंने उसके हाथों को पकड़ लिया तथा उसके मुख पर के घूँघट को हटाते

हुए कहा—"तो तुम यही न चाहती हो कि मैं तुम्हें भी प्यार करूँ। अब समझ लो कि आज से मैं तुम्हारा हो गया। यह दूसरी बात है कि तुम हमारा हो सकोगी कि नहीं"।

परन्तु बन्नो के यह कहने के पूर्व ही कि—"मैं तो तुम्हारा कब की हो चुकी हूँ।" मैं चिल्ला पड़ा—"बन्नो, तुम यहाँ कैसे !" और तब हम दोनों एक दूसरे से लिपट गये।

बन्नो के लिए मेरे प्रेम की यह आखिरी कसौटी थी, जिस पर मैं खरा नहीं उतरा, फिर भी उसने मुझसे इस बात की कभी भी शिकायत नहीं की। अब मुझे यह निश्चित विश्वास हो गया था, कि वह कभी भी अब मुझसे दूर नहीं हो सकेगी। माणिक जी को शायद सभी बातें ज्ञात थीं। अतः एक बार जो वे गये तो पुनः वापस नहीं लौटे। बन्नो और मैं एक लम्बी अवधि के पश्चात् मिले थे, अतः मुझे उसका माणिक जी से संबंध सोचने का अवसर ही नहीं मिला और न स्वयम् बन्नो ने मुझसे कुछ बतलाया। उस रात को अनायास एकांत में बिना किसी संगी-साथी या संबंधी को बतलाये। यहाँ तक कि अपने माँ से भी पूछे बिना मैंने बन्नो की माँग में सिन्दूर भर दिया। मुझे ऐसा विश्वास था कि अन्य लोग चाहे इसके लिए मुझे जो कुछ कहें, माँ तो यह संवाद सुनते ही निहाल हो जायेगी। माणिक जी के यहाँ उस रात और कुछ तो नहीं हुआ परन्तु सारी रात शहनाई बजती रही। मैंने बन्नो को अपने हाथ से मिठाई खिलायी और बन्नो ने मुझको भी। रात के अन्तिम पहर तक हम दोनों आनन्द विभोर हो, एक दूसरे से बातें करते रहे और बाद में एक दूसरे को अंक में कसकर सो गये।

प्रभातकाल में शहनाईवालों ने जब भैरवी की अन्तिम धुन छेड़ा, तो मेरी आँखें एकाएक खुल गयी। पूरब में आकाश अरुण हो चला था। मैंने एकबार बन्नो के अरुण कपोलो से उसकी तुलना की, परन्तु मुझे अब बाहर आसमान की ओर की लाली को देखने की आवश्यकता नहीं पड़ी।

बन्नो अब भी सो रही थी। और न जाने किस स्वर्गीय सुख के आनन्द में आत्मविभोर सी। एकबार मन में आया कि उसे जगाकर अपने घर जाने की सूचना उसको दे दूँ, परन्तु उसके स्वप्न-सुख को मैंने भंग करना उचित नहीं समझा और धीरे से द्वार खोलकर बाहर निकल आया। माणिक जी का मोटर चालक फाटक पर गाड़ी लेकर हमारी प्रतीक्षा कर रहा था। उसने गाड़ी से मुझे घर पहुँचा दिया। माँ को उस रात मेरे घर नहीं आने का संवाद माणिक जी ने भेज दिया था। अतः उन्होंने मुझसे कुछ भी नहीं पूछा मुझे उनकी प्रसन्न मुखमुद्रा से ऐसा ज्ञात हुआ मानों वे इस समय तक सब कुछ जान गयीं हैं।

अब बन्नो पूर्णरूप से मेरी हो चुकी थी, अतः मुझे उसके लिए कोई चिन्ता नहीं थी। परन्तु हमारी शादी के तीसरे दिन ही जब मुझे माणिक जी के दीवान से उनकी एक चिट्ठी तथा कुछ कागजात मिले, तो उसे पढ़ते ही मुझको मुर्छा-सी आने लगी। उन्होंने अपनी बेटी के साथ मेरे नगर को छोड़ दिया था और अपनी कोठी तथा सारी सम्पत्ति को मेरे नाम लिख दिया था। उनके जीवन की अन्तिम इच्छा भी अब पूरी हो चुकी थी, अतः वे अपनी बेटी के साथ ही तीर्थ-यात्रा करने

चले गये थे। पत्र में उन्होंने स्पष्ट लिखा था कि—"वे जानते थे कि बन्नो तुम्हारी है और उससे विवाह कर तुमने उस पर अपने प्यार की अंतिम मुहर भी लगा दी है, परन्तु यह भी संभव है कि तुम्हारे साथ रह कर शायद वह अपने प्रेम की धरोहर सुरक्षित नहीं रख सके। अत: उसकी भी इच्छा है कि—'वह मेरे ही साथ इस नगर को छोड़ दे।'

पत्र के अन्त में उन्होंने लिखा था, "कि मुझे उन्हे ढूँढ़ने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए और इच्छा हो, तो मुझको उन्होंने अपना दूसरा विवाह कर लेने की सलाह दी थी।" पत्र को तत्काल मैंने फाड़कर फेंक दिया।

× × ×

बन्नो को गये कई माह बीत गये। प्रारंभ में तो उसके वियोग में मेरे प्राण विकल हो उठे थे। परन्तु धीरे-धीरे मैं उसका आदी होने लगा। कभी-कभी जब मैं एकान्त में होता, तो सोचने लगता—"बन्नो, आखिर डाकू की लड़की ही तो निकली। और मेरा सर्वस्व लूटकर चली गयी। परन्तु डाकू तो केवल धन लूटकर चले जाते हैं। उनसे प्रभावित लोग कुछ देर के लिए कंगाल भले ही बन जायँ, परन्तु उन्हें पुन: संग्रह का अवसर तो मिलता है। अत: वे अपनी लूटी गयी सम्पत्ति को धीरे-धीरे भूल भी जाते हैं। परन्तु बन्नो तो, मेरे हृदय, सुख और आनन्द सभी कुछ लूट कर चली गयी थी। यह ऐसा डाका था जिसकी स्मृति दिनों दिन हरी, और ताजा-की-ताजा बनी रहती है। अब मेरा सरस जीवन ऊसर की

तरह नि:सार बन गया था और केवल मैं बन्नो के साथ व्यतीत हुए कुछ सुखमय क्षणों की स्मृति के सहारे ही जी रहा था तथा आगे जाने का प्रयत्न करता था। सब कुछ होने पर भी बन्नो के प्रति मेरे प्रेम में रच-मात्र भी कमी नहीं हुई थी। मुझे उस पर कभी क्रोध भी नही आया। मेरे लिए अब डाकू की परिभाषा भी बदल गयी थी अत: कभी-कभी मै ऐसा भी सोचने लगता कि—"कुछ धनी लोगो को लूटनेवाले, तो डाकू कहे जाते है, परन्तु हजार, लाख अथवा करोड़ो लोगो की भावनाओं पर डाका डाल अथवा यों कहिए कि उन्हे गुमराह कर एक सही रास्ते से गलत राह पर मोड़ देनवाले भी तो एक प्रकार के लुटेरे ही हैं। डाकू लूट का माल लेकर चले जाते है। परन्तु ऐसे व्यक्ति तो लूट गये लोगो से अपनी पूजा भी कराते है। डाकू और ऐसे लोगों में अन्तर कवल प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष लूट की है। और समाज द्वारा मान्यता प्राप्त कर लेने का भी।"

बन्नो ने मुझे लूटा था परन्तु उस लूट का अनुभव केवल मैं ही कर रहा था। बहुत लोग तो इस प्रकार लूटा जाना अत्यन्त पसन्द करते है और अपना सब कुछ गवाँ कर ही सुख और संतोष का अनुभव करते हैं। यहा मेरे मन के लिये भी एक ढाढ़स था। मैंने अपने अनुभव को अपने ही तक सीमित रखा जिससे कोई इसे जान न पावे, भले ही मुझ पर जो बीतता है बीते। मुझे अब इस बात में तनिक भी सदेह नहीं था कि लूटा गया व्यक्ति बाद में संतोषी हो जाता है।"

परन्तु एक बात जो मुझे कभी-कभी बहुत ही व्यग्र कर देती वह बन्नो के दिल की बात थी और जिसे मैं किसी तरह

भी जान लेना चाहता था—"क्या उसके दिल में भी मेरे लिये उतनी ही बेचैनी होगी, जितना मेरे दिल में उसके लिए है।" बन्नो के अभाव में मेरे दिन तो कार्य-व्यस्त रहने तथा विभिन्न प्रकार के लोगों से मिलते-जुलते किसी तरह बीत जाते। परन्तु रात काटे नही कटती और कब प्रभात होगा, यह बेचैनी रात की ढलान के साथ प्रतिक्षण तीव्रतर हुआ करती थी। जब कभी मैं ऐसा सोचता कि—"बन्नो कभी न कभी अवश्य ही मुझसे मिलेगी, तो घोर निराशा के क्षणों में भी एक बार मुझे आशा की एक साधारण ज्योति दिखलायी दे जाती और हृदय को कुछ सान्त्वना तथा राहत मिल जाती।"

. . . .

लगभग आठ वर्ष इसी तरह बीत गये और बन्नो का मुझे कुछ भी पता नहीं चला। इस अवधि में मेरी पदोन्नति निरन्तर होते गयी और अब मैं पुलिस विभाग में बहुत ऊँचा पद पा गया। फिर भी मेरे जीवन में कोई नवीनता का प्रादुर्भाव नही हुआ। इस समय मैं एक यन्त्र की तरह अपना कार्य संचालित करता और अवकाश के क्षणों में जब सारा संसार सो जाता, तो मैं सारी रात बन्नो के अभाव में बैठे-बठे बिता देता। उस समय जब कभी मैं तंद्रिल अवस्था में आ जाता तो बन्नो का हँसता चेहरा, मेरी आँखों के समक्ष साकार हो उठता। साथ ही साथ उसके हृदय का अपने हृदय से स्पर्श, स्वाँसों की धड़कन, जिसमें एक मादक मीठी सुगंध लहरे मारा करती का मैं प्रत्यक्ष अनुभव करने लगता और उसकी गुलाबी डोरोंवाली नशीली शान्त और बोझिल पलकों के नीचे, अर्ध विकसितकमल की तरह अधखुली आँखों को जो उसके सुन्दर मुखमंडल और घुघराली, नागिन की तरह काली लटों के

झरोखे से झांकती सुन्दरता से भी सुन्दर और सजीव लगती थी, मैं एक क्षण के लिए भी भुला नहीं पाता था।

मेरी मां अब बहुत ही वृद्ध हो चुकी थी। उन्हें अपने बुढापे से अधिक मेरे एकाकी जीवन का दुख था। और कभी-कभी मुझे ऐसा प्रतीत होने लगता कि अब वे अधिक दिनो तक जीवित नहीं रह सकेंगी। फिर भी वे किसी कारणवश जी रही थी और उनका प्राण किसी आशा से अब भी शरीर से अॅटका हुआ था। वैसे तो मैं बन्नो की खोज में देश के एक-एक नगर और कोने-कोने को छान दिया, शिकार के बहाने जंगल और पहाड़ों पर मारा-मारा फिरता रहा तथा कई बार अपने जीवन से निराश होकर कठिन से कठिन ऐसे उत्तर-दायित्व को अपने सिर पर लिया जिसमें कई आदमी अपने प्राण खो चुके थे, फिर भी मेरा बाल भी बांका नहीं हुआ। और तब भी मुझे बन्नो का पता नहीं चला। मैं जितना ही अपने को मिटाना चाहता था, उतनी ही मेरी ख्याति बढ़ती जा रही थी।

एक बार नैनीताल की तराई के जंगलों में मैं उस मानवभक्षी शेर को मारने के लिए सरकार द्वारा भेजा गया, जिसने कई मनुष्य और शिकारियों की हत्या की थी, तो वही मुझे पता चला कि—'माणिकजी और बन्नो की तरह दो पिता-पुत्री जो नैनीताल में ही रहते हैं, यहाँ कई बार उस शेर के शिकार के लिए आ चुके हैं। मैं नैनीताल और हरिद्वार दोनो को छान डाला। एक-एक घर में उनका पता लगाया परन्तु अंत तक मुझे निराशा ही हाथ लगी।

यह सोचकर कि बन्नो से शायद यही कहीं भेंट हो जाय, मैंने अपनी नियुक्ति नैनीताल में ही करा ली और लगातार दो वर्षों तक बन्नो को ढूँढ़ निकालने का घोर प्रयत्न किया। परन्तु इसका भी आशाजनक परिणाम नहीं निकला।

बन्नो से बिछुड़े अब मुझे लगभग उन्नीस वर्ष बीत चुके थे, और उससे मिलने की मेरी सारी आशाओं पर पानी फिर चुका था। अब मुझे अपनी सरकारी सेवा से अवकाश प्राप्त करने में भी अधिक विलम्ब नहीं था। माँ इस समय मरणशय्या पर पड़ी थीं। अतः उनकी अंतिम सेवा, तथा माँ के ऋण से उऋण होने के लिये मैं छुट्टी लेकर शीघ्र ही घर जानेवाला था। परन्तु कुछ आवश्यक विभागीय कार्यों से मैं रोक लिया गया। मैंने भी सोचा कि ऐसे कार्यों को निबटाते चलना ही अच्छा होगा अन्यथा कहीं इसी के लिये मुझे पुनः यहाँ लौटना न पड़े।

× × ×

उस दिन बड़े सबेरे मैं अपने पहाड़ी बँगले के आगे, छोटी-सी सहन पर बैठा एक पहाड़ी बुलबुल द्वारा गाया गया दर्द-भरी गीत सुन रहा था। बुलबुल भी शायद अपने जोड़े से बिछुड़ गया होगा। नीचे की ओर अगल-बगल में न जाने कितनी, मनुष्य के हृदय की तरह, गहरी खाई और खंदक भी उस समय बुलबुल के गीत से गूँज उठी थी। मैं सब कुछ भूल-कर उस गीत की मधुर धारा में बह गया। सामने पहाड़ों की ओट से बाल रवि, झांक-झांक कर सारे जग को एक नयी आशा और ज्योति का संदेश दे रहा था। उस दिन का प्रभात मुझे अन्य दिनों से बहुत ही अच्छा लगा। थोड़ी देर में मैंने

देखा कि उस बुलबुल के गीत से आकर्षित होकर वहाँ न जाने कितने बुलबुल आकर एकत्र हो गये हैं और उसके स्वर मे स्वर भरकर गाने लगे हैं। वे सभी आनन्द से आह्लादित और आत्मविभोर थे तथा आनेवाले दिनों की उन्हें कोई सुधि अथवा चिन्ता नहीं थी। मुझे उस बुलबुल के भाग्य पर बड़ी ईर्ष्या हुई जिसे उसकी बिरादरी वालों ने संवेदात्मक सहयोग देकर उसके दुख-दर्द में हाथ बंटाने आपसे आप एकत्रित हो गये थे।

अचानक हवा के एक तेज झोंके के आने से जब पेड़ की डाली बड़े जोरो से हिल उठी और बुलबुलों का झुण्ड वहाँ से उड़कर नीचे घाटी की ओर चला गया तो मेरा ध्यान भंग हुआ। मैंने पीछे की ओर मुड़कर देखा—"डाकिया एक 'रजिस्ट्री' किया पत्र लेकर न जाने कब से खड़ा है।" मुझे डाकिये को ऐसे समय पर आकर, मेरे आनन्द में खलल उत्पन्न करता देख क्रोध आना चाहिए था। परन्तु मैंने अपने स्वभाव के विपरीत उस दिन उस पर प्रसन्न ही हुआ। पत्र मेरे बड़े साहब का लिखा हुआ, एक लम्बी अवधि के बाद दिल्ली से आया था। इस समय वे केन्द्रिय जनसेवा आयोग के अध्यक्ष थे, और अपनी योग्यता के कारण सरकार में उनकी बड़ी ख्याति थी। पत्र में उन्होंने मुझे 'प्रेमपाल' जैसे पुत्र का पिता होने के लिए सौ-सौ बार बधाई दी थी। उनका पत्र पढ़कर मैं बड़े असमंजस मे पड़ा। "किसी दूसरे को लिखा गया पत्र, शायद भूल से मुझको भेज दिया गया था; परन्तु उस समय मुझे और भी हैरानी हुई, जब मैंने देखा कि लिफाफे पर मेरा नाम, पता और बंगले का नम्बर तक अंकित है। पत्र में उन्होंने आगे लिखा था

कि—'वैसे तो मैंने तुम्हारे लड़के को देखते ही जान गया कि यह तुम्हारा ही लड़का होगा ! ठीक वही ऊँचाई, वही शारीरिक गठन और चाल-ढाल तथा हँसता हुआ भोला-भाला चेहरा। परन्तु जब उसका परिचय पत्र मेरे सामने आया और मैंने उसके पिता के स्थान पर तुम्हारा नाम देखा, तो मुझे अधिक आश्चर्य अपने अनुमान पर हुआ। साथ ही साथ मेरी इच्छा हुई, कि उस लड़के को गले से लगा लूँ। परन्तु किसी-किसी तरह मैंने अपने को रोका। मुझे इस बात का बड़ा ही दुख है कि तुमने अपने विवाह तथा लड़के के विषय में अब तक मुझे कुछ भी नही बतलाया। मुझे तुमसे ऐसी आशा नही थी। मैं तुम्हारे विषय में प्रेमपाल से कुछ जानकारी प्राप्त करना चाहता था, परन्तु उस समय मैंने उससे अपना परिचय देना उचित नहीं समझा। कारण यह कि मैं ही उसका परीक्षक था और हो सकता था कि मैं उसके साथ कुछ रियायत कर बैठता। अब मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता है कि तुम्हारा लड़का भारतीय पुलिस सेवा आयोग में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त कर लिया है। इसके लिए तुम्हें पुनः बधाई है।"

मैं बड़े साहब के उस पत्र को एक ही स्वाँस में पढ़ तो गया, परन्तु इस समय मुझे ऐसा ज्ञात होने लगा कि मैं कुछ ही क्षणों में संज्ञाहीन हो जाऊँगा। पत्र के साथ बड़े साहब ने प्रेमपाल की तसवीर भी मेरे यहाँ भेज दिया था, जो उसके आवेदन पत्र के साथ दिया गया होगा। वह तसवीर ठीक मेरे तसवीर जैसी थी। एकबार मैंने यह भी सोचा कि—"हो सकता है, कि बड़े साहब के पास मेरी कोई पुरानी तसवीर रह गयी

हो, जिसे उन्होंने अपने इस विनोदपूर्ण पत्र के साथ भेज दिया हो।"

परन्तु बहुत सोच-विचार करने के पश्चात् मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि बड़े साहब ने जब आज तक मेरे साथ ऐसा हँसी-मजाक अपने यौवनकाल में भी नहीं किया है, तो आज भला वे ऐसा क्यों करेंगे! मुझे सारे दिन और सारी रात नींद नहीं आयी, फिर भी उस रहस्यभरे पत्र के विषय में मैं कुछ भी निश्चय नहीं कर सका। दूसरे दिन जब मेरा मन बहुत उद्विग्न हो उठा तो मैंने बिना कुछ सोचे-समझे वायुयान द्वारा दिल्ली के लिये प्रस्थान कर दिया। दिल्ली पहुँच कर जब मैंने सेवा आयोग के कार्यालय में प्रेमपाल का पता लगाया तो वहाँ भी ठीक मेरे ही घर का पता निकला। असंभावित और अनहोनी बातों के सत्य होने की कल्पना करते ही मुझे ऐसा लगा, मानों मैं खुशी से पागल हो जाऊँगा। अभी आयोग द्वारा चुने गये लोगों के प्रशिक्षण-केन्द्र पर आने में चार माह की देर थी। अतः प्रेमपाल को मैं कहाँ ढूँढ़ता! अंत में मैं हार मानकर पुनः नैनीताल लौट आया। जिस समय मैं अपने बंगले पर पहुँचा, दिन के दो बज रहे थे। मेरे अर्दली ने मुझको बतलाया कि छोटे साहब आये हैं और सबेरे से ही अपने कुछ साथियों को लेकर शिकार खेलने गये हैं।

पहिले मैंने छोटे साहब का अर्थ अपने विभागीय सहायक को समझा। परन्तु जब मैंने अपने बंगले के भीतर सामानों का अम्बार लगा देखा, तो उस नये छोटे साहब को देखने की बेचैनी मेरे हृदय में बढ़ने लगी। परन्तु कोई चारा नहीं था। अतः मैंने सब्र से काम लेने को सोचा और संध्या होने की

प्रतीक्षा करने लगा। किसी तरह अपने मन को समझाने त
समय काटने के लिये मैं बैठे-बठे पिछले सप्ताह की ड
देखने लगा। अचानक मेरी दृष्टि जब एक पत्र पर पड़ी
अन्य पत्रों के साथ ही मेज पर रखा गया था तो मैं चौंक प
और उसे एक स्वांस में ही पढ़ गया। पत्र बन्नो ने लिखा
जिसे पढ़ लेने के बाद मेरी क्या दशा हयी, मैं व्यक्त न
कर सकता। पत्र में लिखा था—"उन्नीस वर्षों के पश्चा
मैं तुम्हारे प्रेम की धरोहर प्रेमपाल को लौटा रही हूँ। मैं
तुम्हारे वियोग की यह लम्बी अवधि इसी के सहारे काटा है
इसका जन्म ठीक तुमसे बिछड़ने के दसवें महीने बाद हुअ
था। सचमुच यह, यदि मेरे साथ नहीं होता तो मैं तुम्हा
प्रति अपने प्रेम का निर्वाह कर पाती कि नहीं, मुझे स्व
इसमें संदेह है। मेरे बाकी जीवन की कहानी बडी लम्बी है
जिसे यदि मैं जीवित रही और कभी तुमसे मिल सकी तो
बता दूँगी।" पत्र में बन्नो ने आगे लिखा था—"मैंने तुम्हारे
साथ बड़ा ही अन्याय किया है, और तुम्हारे स्वप्नों से भरे
जीवन के ये उन्नीस वर्ष कैसे बीते होंगे, इसकी कल्पनामात्र
से मेरे प्राण विकल हो उठते हैं। मेरी हार्दिक इच्छा और
अभिलाषा थी प्रेमपाल को स्वयं तुम्हारे चरणों में अर्पित
करूँगी। परन्तु मेरे अपराध इतने गुरुतर हैं जिसका दण्ड
केवल यही हो सकता था कि मैं अपना शेष जीवन पति और
पुत्र दोनों के वियोग में व्यतीत करूँ। और तब कहीं मेरे
पापों का थोडा बहुत प्रायश्चित हो सकेगा। तुम्हें मेरे विषय
में कोई शंका नहीं रह जाय, अतः मैं यह भी बतला देना
चाहता हूँ कि माणिकजी मेरे अपने पिता नहीं थे। वे कथित
डाकू जम्पा और वास्तव में एक बड़े जमीन्दार वही जयपाल

सिह थे जो मन और कर्म से डाकू नहीं, बल्कि परिस्थितियों से विवश होकर ही इस मार्ग को अपनाया था। वे मेरे अपने पिता नहीं होकर भी, ऐसा लगता है कि किसी जन्म के मेरे पिता होंगे। क्योंकि उन्होंने अपने जनम-जनम के प्यार को मुझमें ढाला था और मुझे प्रसन्न रखने के लिये अपनी जिन्दगी को कुछ नहीं समझा।" बन्नो के पत्र से मुझे ऐसा ज्ञान हुआ कि माणिक जी अब इस संसार में नहीं हैं। उसने अपने पत्र में इसका भी संकेत किया था कि वह अपना शेष जीवन मेरी सेवा में भी व्यतीत कर सकती है। लेकिन उसका यह अंतिम निर्णय नहीं था। अभी उसे यह ज्ञात नहीं था कि 'किसी पाप का प्रयश्चित सेवा से भी हो सकता है।' उसने अपने पत्र के अत में लिखा था—"आजकल मैं तुम्हारे विषय में ही प्रत्येक क्षण सोचती रहती हूँ। तुम मुझे ढूँढने का प्रयत्न मत करना, साथ ही साथ प्रेमकिशोर से भी मेरे विषय में कुछ पूछने का प्रयत्न भी।"

एक साथ ही हर्ष-विषाद और आश्चर्य का इतना बोझ मैंने उस समय कैसे संभाला, यह मैं स्वयं नहीं बता सकता। मेरी आँखें न जाने कब तक ढलते रहीं, परन्तु इसे कोई जान नहीं पाया। इस समय अंधेरा होने जा रहा था और पहाड़ पर बने सभी बंगलों में धीरे-धीरे कुहरे का प्रवेश भी। ठीक उसी समय मैंने आँखें फाड़ कर आश्चर्य-पूर्वक देखा कि मैं स्वयं हाथ में बंदूक लिये बंगले की सहन में प्रवेश कर रहा हूँ। हाँ, ठीक मैं ही तो था! अपने बचपन को प्रेमपाल के रूप में पाकर मैं निहाल हो गया और दौड़कर उससे लिपट गया।

उस दिन से मेरा मन नैनीताल में अब एक क्षण भी नही लगा। मैं चाहता था कि अपनी बृद्धा माता के पास किसी तरह भी उड़कर पहुँच जाऊँ। और हुआ भी वैसा ही।

जब तीसरे दिन मैं अपने घर पहुँचा, तो देखा कि वहाँ की दुनियाँ ही बदल गयी है। माँ, वहुत प्रसन्न और स्वस्थ होकर आँगन में टहल रही थीं। मुझे देखते ही मारे प्रसन्नता के वे चिल्ला उठीं। बन्नो उनसे थोड़ी दूर पर बैठी समाचार पत्र पर ध्यान लगाये थी। उसने मेरी ओर देखा और सिर नीचे झुका लिया, मनों उसने कोई वहुत बड़ा अपराध किया हो।

बन्नो को देखने ही पहिले तो मेरे मन में आया कि मैं भी माँ की तरह चिल्ला पड़ूँ, परन्तु माँ की उपस्थिति ने मुझे संभाल लिया। प्रेमपाल जिस समय मेरी माँ के पावों से लिपटा हुआ था और वे अपनी निर्बल बाँहों से उसे उठा कर गले लगाने के लिये प्रयत्नशील थी, मैंने देखा कि बन्नो तथा माँ पर इस घटने का कोई प्रभाव नहीं है और उन्हें मेरे कुछ बताने के पूर्व ही सब कुछ ज्ञात हो चुका है।